यह अनमोल ग्रंथ "रत्नसागर" हम को कृपा करके लाला सुदर्शन सिंह सेठ साहब ने हस्त-लिखित गुटका के रूप में दिया। हम इस पुस्तक को खोजी और प्रेमी जनों के सामने छापा में रख कर सेठ साहब को अनेक धन्यवाद देते हैं जिन्हों ने इस अनमोल और दुर्लभ रत्न को परम पुरुष पूरन धनी स्वामीजी महाराज, राधास्वामी मत के प्रकाशक के पाठ की पुस्तकों में से निकाल कर हम को उस के छापने की इजाज़त दी।

बेलवेडियर प्रेस,

मई १६१६ इलाहाबाद।

तुलसी साहिब का जीवन-चरित्र

तुलसी साहिब जिनको लोग साहबजी भी कहते थे जाति के ब्राह्मण बहुत अच्छे कुल के थे। बाल अवस्था ही में इनको ऐसा तीव्र बैराग और प्रचण्ड भक्ति प्राप्त हुई कि घर बार छोड़ कर भेष ले लिया और अलीगढ जिला के हाथरस शहर में आकर रहे और वहीं शरीर त्याग किया। इनको गुप्त हुए साठ बरस के अनुमान हुए और देहान्त के समय उनकी अवस्था साठ बरस के क़रीब थी, इस हिसाब से उनका जन्म बिक्रमी संबत १८४५ मुताबिक ईसवी सन् १७८८ और देहान्त बिक्रमी संवत १९०५ मुताबिक ईसवी सन् १८४८ में या दो एक बरस आगे पीछे ठहरता है। हाथरस में उनकी समाधि मौजूद है और बहुत से लोग वहाँ दर्शन को जाते हैं।

तुलसी साहब का कोई गुरू न था और इस बात के प्रमाण में यह कड़ी उनकी दिखलाई जाती है—

"मिलै कोइ संत फिरौं तेहि लारे"

इस में कोई सन्देह नहीं कि तुलसी साहब स्वयं-संत थे जिनको गुरू धारन करने की ज़रूरत न थी लेकिन मर्जादा के लिये चाहे किसी को नाम मात्र को गुरू बना लिया हो।

तुलसी साहब अकसर हाथरस के बाहर एक कम्मल ओढे और हाथ में डंडा लिये दूर २ शहरों में चले जाया करते थे। जोगिया नाम के गाँव में जो हाथरस से एक मील पर है अपना सतसंग जारी किया और बहुतों को उपदेश दिया।

इन की हालत अकसर खिंचाव की रहा करती थी और ऐसे आवेश की दशा में धारा की तरह ऊँचे घाट की बानी उनके मुख से निकलती। जो कोई निकट-वर्ती सेवक उस समय पास रहा उसने जो सुना समझा लिख लिया नहीं तो वह बानी हाथ से निकल गई। इस प्रकार के अनेक शब्द उनकी शब्दावली में है।

तुलसी साहब के अनुयायी अब तक हजारों आदमी हिन्दुस्तान के शहरों में मौजूद है। उनके प्रसिद्ध ग्रंथ घट-रामायण, शब्दावली और रत्न सागर हैं। तुलसी साहब की घट-रामायण उनके मत के आचार्ज देवी साहब छाप चुके हैं, शब्दावली और रत्न-सागर पहिली बार बेलवेडियर प्रेस इलाहाबाद में छपी है।

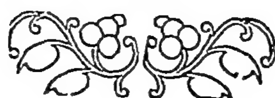
तुलसी साहब ने घट-रामायण में लिखा है कि आप ही गुसाईं तुलसीदास जी रामायण के ग्रंथ-करता के चोले में (अनुमान ढाई सौ बरस पहले) थे और उन्होंने पहले घट-रामायण का ग्रंथ रचा जिस में घट का भेद दिया है और निर्गुण लखाया है परन्तु फिर ब्राह्मणों के झगड़ा करने पर उस ग्रंथ को उठा रक्खा और समय के अनुसार दूसरी रामायण सगुण के रूपक में लिख डाली जो आजकल इतनी प्रचलित है।

तुलसी साहब ने अपनी बानी में कहीं कहीं बेद कतेब क़ुरान पुरान राम रहीम और प्रचलित मतों का खोल कर खंडन किया है जिस से लोग उन्हें निन्दक और द्रोही समझते हैं पर यह उन की अनसमझता की बात है। तुलसी साहब के पदों के अर्थ पर ध्यान देने से स्पष्ट जान पड़ता है कि उन्हों ने किसी मत को झूठा नहीं ठहराया है बरन जहाँ तक जिस को गति है उस को साफ़ तौर पर बतला दिया है। उनका अभिप्राय केवल यह है कि इष्ट सब से ऊँचे और समस्त पिंड और ब्रह्मांड के धनियों के धनी का बाँधना चाहिये और उसी की सेवा करनी चाहिये, निर्मल चैतन्य देश के नीचे के लोकों के धनियों की भक्ति करने से परिश्रम तो उतना ही पड़ेगा और लाभ पूरा न उठेगा, अर्थात भक्त का काम अधूरा रह जायगा और वह आवागवन से न छूटेगा, देर सवेर जन्म मरन का चक्कर लगा रहेगा, क्योंकि यह लोक माया के घेर में है चाहे वह कितनी ही सूक्ष्म माया हो।

तुलसी साहब के विषय में कहते हैं कि जब आप सतसंग कराते थे एक गरेड़िया रामकिशुन नामी चुपके से नीचे आ बैठता था एक दिन आप को मालूम हो गया पूछा कि तुम क्यों आते हो जवाब मिला कि मुझ को आप की बानी बड़ी प्यारी लगती है इस पर तुलसी साहब ने दया करके उस को एक पुस्तक अपनी दी और कहा कि पढ़ो उसने जवाब दिया कि मैं अनपढ़ हूँ लेकिन आप के फिर आज्ञा करने पर उसने जो पुस्तक की ओर देखा तो धड़ाके से पढ़ने लगा। इसी तरह प्रसिद्ध है कि आप के गुरुमुख (शिष्य) सूरस्वामी थे जो निपट अनपढ़ और जन्म के अंधे थे उन को भी एक दिन आज्ञा की कि ग्रंथ पढ़ो और उनके उज्र करने पर डाँटा तो सूरस्वामी की आँखों में जोति आगई और वह पढ़ने लगे।

एक बार आप घूमते हुए किसी स्थान पर पहुँचे। वहाँ के एक धनी ने आप का बहुत

॥ सूचीपत्र ॥



॥ रत्न सागर ॥

(तुलसी साहब कृत)

—:❀:—

॥ सोरठा ॥

हिरदे अरज कबूल स्वामी से कछु पूछिहौं।
कहौ रचना निज मूल भूल भरम कब से भई॥
जब नहिँ अंड अकार सार सुरति रत कहँ हती।
जब का कहौ बिचार पार प्रिये पद पुरुष का॥

॥ छंद ॥

प्रथम पदम[1] प्रनाम धुर गुर, आदि को रचना कहौ॥
कस कुरम सेस अकार अँड खँड नौ, निरंजन कस रह्यौ॥
सब चंद्र सूर जहूर पृथ्वी, कस भार सिर अपने लह्यौ॥
सब तत्त अगिन अकास पवना, कौनि बिधि उतपत भयो॥
जल बुंद पाँच पचीस बस, कस आप तन बंधन सह्यौ॥
गुन गाँठ कस बैराट रचि, जिव जगत दृढ़ कैसे गह्यौ॥
निराकार ब्रह्म अकार, कस घर भूल जग जिव होइ रह्यौ॥
कस आपअपन बिसार पौ कोउ, नौ को तिन बंधन सह्यौ॥
तिरलोक सोकसिहारि[2] सब कोउ, उलटि घर कोउ ना गयो॥
सुधि बुधि बिसारी आदि अपनी, करम के बसि बंधि रह्यौ।
भटके भवन मन मूल कैसे, भूल कस बादे बह्यौ।
सब आदि अंत हवाल तुलसी, बरन हिरदे को कहौ

---

(१) [चरन] कमल। (२) सम्हारना, पकड़ना।

रचना का मूल

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

जतन रतन सागर सुनो, रचना को बिस्तार ।
बिस्व बिदित बैराट के, सब जग उदर[1] मँझार ॥
होय बैराट प्रलै सभी, रबि चंदा बिस्तार ।
अंड खंड ब्रह्मंड लौं, बिनसत बारम्बार ॥
आतम अंस अकास में, भास भवन परकास ।
सनन सनन स्वाँसा चलै, जहँ मन करत निवास ॥

॥ चौपाई ॥

सुन हिरदे कहै तुलसी दासा । आतम सब में ब्रह्म निवासा ॥
आतम नाद आदि से आई । सिंध बुंद तन रह्यौ समाई ॥
धरती पवन अगिन जल चारी । नीर बुंद जग सृष्टि सँवारी ॥
ता में चेतन बास अनूपा । पंचम तत्त अकास सरूपा ॥
जड़ चेतन मन मूल बिसारा । अंतर गाँठ बहै नौ धारा ॥
नैन नासिका मुख अरु काना । इंद्री गुदा गुनन में साना ॥
वदन वास तन तत्त रहाई । इंद्री रुचि सुख भोग सोहाई ॥
यह रस बस बहु फाँस फँसानी । उपजि मरै चौरासी खानी ॥

॥ दोहा ॥

उतपति परलै योँ भई, गही न सतगुरु बाहिँ ।
संत चरन बिन बाद[2] योँ, बहे भर्म के माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

अब सुनु आदि अकास अचीन्हा । बूझै साध हरष लौ लीना ॥
प्रथम पुरुष बिदेह बिन काया । जासे भई निरंजन माया ॥
माया पाँच तत्त उपजाया । योँ रचि अस बैराट बनाया ॥

(१) पेट । (२) वृथा ।

चेतन अंस आतमा सोई । भास अकास प्रकासिक जोई ॥
याको नाम निरंजन कहिया । भूमी बास अकास समइया ॥
सहस कँवल दल अंदर बासा । दस नौ द्वार पार परकासा ॥
दस नौ वार धार चल आई । चेतन जड़ योँ गाँठि बँधाई ॥
निराकार आकार समाया । इच्छा रूप भई यक माया ॥

मन की उत्पत्ति

॥ सोरठा ॥

निज तन बासी ब्रह्म, निराकार यह मन भयौ ।
इच्छा अंग बिलास, आस अधर की तजि रह्यौ ॥

॥ चौपाई ॥

इच्छा मन मिलि बिस्व बनाया । योँ रचि कीन्ह तत्त से काया ॥
इंद्री सुर देवन कर बासा । निज नभ कँवल गुनन की आसा ॥
रज सत तम तन तीन बसाये । ब्रह्मा बिस्नु महेस कहाये ॥

बेद कैसे रचे गये

स्वाँसा संग बेद जो भइया । सुछम[1] बेद असनाम कहइया ॥
अच्छर छर बैराटी बानी । भये बेद ब्रह्मा पहिचानी ॥
नाद भये पर बेद बनाया । जा पाछे जग को समझाया ॥
करम कांड करनी बिस्तारी । अरु उपासना क़ांड सँवारी ॥
ज्ञान कांड कीन्हा मन बोधा । नहिँ कोइ संधि समझ कर सोधा ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान ध्यान जोगी जती, नहिँ कोइ पावे भेद ।
खेद कर्म सुभ असुभ के, फल करनी कहे बेद ॥

॥ चौपाई ॥

बेद मथन बेदांती कीना । ब्रह्म ज्ञान वहि मेँ से लीना ॥
बेद नाद से पीछे भइया । नेत नेत कह कर गोहरइया ॥

---

(१) सूक्ष्म ।

षट शास्त्र का वर्णन

षट सास्तर की सुनिये साखा । षट षट बाक बोल कर भाखा ॥
कर्म मिमांसा बरन बतावे । पातंजली जोग ठहरावे ॥
बरनि बिसेषिक समय सुनावे । नित्त अनित्त सांख समझावे ॥
न्याय नीति भाखे करतारा । षट करनी में जीव बिचारा ॥
सासतर नहीं सार [illegible] कस जीव अपनपौ पावे ॥
षट का कहा करे [illegible] न कोई सार पिछाना ॥
जो कोइ इनकी सार [illegible] तुलसी [illegible] आवे ॥

जगत भक्ति कीन्हा ब्योहारा। यह पुरान की रीति बिचारा॥
ब्यास ब्रह्म सरगुन अवतारी। कीन्हे उन पुरान अधिकारी॥
ज्ञान बैराग जोग अधिकाई। यह बरनन उन भाख सुनाई॥

मूर्त्त पूजन

सरगुन भक्ति कही संसारा। बूझैं साध समझ निरवारा॥
काठ पषान जान जिन पूजा। अंदर में आतम नहिँ सूझा॥
ब्यास भागवत में यौँ भाखा। सूझे न जगत अंध की आँखा॥
पढ़ि पढ़ि के पंडित बौराने। ब्यास बचन को नहिँ पहिचाने॥

॥ सोरठा ॥

अंदर आतम ज्ञान, ध्यान करन सूरत कही।
गई किरन रबि भानु, आप अपनपौ परखिया॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक संसय लाई। स्वामी भर्म उठा मन माहीँ॥
ब्यास बचन कीन्हे परमाना। मन मोरे ने बोध न आना॥
रचि पुरान जो कीन्ह अठारा। करनी का कीन्हा बिस्तारा॥
पुरान पुरान कहा करतारा। बचन ब्यास यौँ भाखि सँवारा॥
करता तो सब एक बतावेँ। यह अठरा कस कस ठहरावें॥
जो पुरान देख्यौं मैं जाई। करता वहि पुरान बतलाई॥
ऐसे अठरा निरख निहारा। कहे न्यारे न्यारे करतारा॥
सिव पुरान सिव रचना कीन्हा। बिस्नु पुरान बिस्नु रचि लीन्हा॥

॥ सोरठा ॥

दुरगा देख पुरान, सब रचना दुरगा करी।
करता आप बखान, यौँ पुरान सब सब कहै॥

॥ चौपाई ॥

मूल भागवत ब्यास बखाना। नारद का उपदेस समाना॥

(१) अट्ठारह।

षट शास्त्र का वर्णन

षट सास्तर की सुनिये साखा । षट षट बाक बोल कर भाखा ॥
कर्म मिमंसा बरन बतावे । पातंजली जोग ठहरावे ॥
बरनि बिसेषिक समय सुनावे । नित्त अनित्त सांख समझावे ॥
न्याय नीति भाखे करतारा । षट करनी में जीव बिचारा ॥
सासतर नहीँ सार समझावे । कस कस जीव अपनपौ पावे ॥
षट का कहा करे परमाना । जा मेँ न कोई सार पिछाना ॥
जो कोइ इनकी साख सुनावे । मन हिरदे तुलसी नहिँ आवे ॥

॥ सोरठा ॥

यह षट करम बिकार, सार भेद संतन लयो ॥
सुरति सुन्न आधार, पार पदम पट भवन मेँ ॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह आदि कहानी । भानु किरन भूमी पर आनी ॥
परथम निरगुन गुन से न्यारा । सरगुन काज कीन्ह बिस्तारा ॥
सरगुन की माया मतवारी । भट्ठी भर्म चुवावनहारी ॥
मद पियाय के कीन्ह बेहाला । योँ बाँधे जग मेँ जम जाला ॥
काम क्रोध मद लोभ बिकारा । जानो यह उनका ब्योहारा ॥
और अनेक फंद उन डारा । उरझा जक्त पार नहिँ वारा ॥
सब रचना बंधन बस राखी । कीन्हे बेद देन को साखी ॥
षट[१] कर बोध पुरान अठारा । पीछे ब्यास कीन्ह बिस्तारा ॥

॥ दोहा ॥

हरि कृत लीला ज्ञान, भानु किरन बंधन भई ।
गही न गुरु की आन, जान जुगत ऐसे रही ॥

अवतार का भेद

॥ चौपाई ॥

सरगुन ब्रह्म भया औतारा । जिन जग माहिँ निसाचर मारा ॥

(१) छ: शास्त्र ।

जगत भक्ति कीन्हा ब्योहारा। यह पुरान की रीति बिचारा॥
ब्यास ब्रह्म सरगुन अवतारी। कीन्हे उन पुरान अधिकारी॥
ज्ञान बैराग जोग अधिकाई। यह बरनन उन भाख सुनाई॥

मूर्त्ति पूजन

सरगुन भक्ति कही संसारा। बूझैं साध समझ निरवारा॥
काठ पषान जान जिन पूजा। अंदर में आतम नहिँ सूझा॥
ब्यास भागवत में यों भाखा। सूझे न जगत अंध की आँखा॥
पढ़ि पढ़ि के पंडित बौराने। ब्यास बचन को नहिँ पहिचाने॥

॥ सोरठा ॥

अंदर आतम ज्ञान, ध्यान करन सूरत कही।
गई किरन रबि भानु, आप अपनपौ परखिया॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक संसय लाई। स्वामी भर्म उठा मन माहीं॥
ब्यास बचन कीन्हे परमाना। मन मोरे ने बोध न आना॥
रचि पुरान जो कीन्ह अठारा। करनी का कीन्हा बिस्तारा॥
पुरान पुरान कहा करतारा। बचन ब्यास यों भाखि सँवारा॥
करता तो सब एक बतावें। यह अठरा कस कस ठहरावें॥
जो पुरान देख्यों मैं जाई। करता वहि पुरान बतलाई॥
ऐसे अठरा निरख निहारा। कहे न्यारे न्यारे करतारा॥
सिव पुरान सिव रचना कीन्हा। बिस्नु पुरान बिस्नु रचि लीन्हा॥

॥ सोरठा ॥

दुरगा देख पुरान, सब रचना दुरगा करी।
करता आप बखान, यों पुरान सब सब कहै॥

॥ चौपाइ ॥

मूल भागवत ब्यास बखाना। नारद का उपदेस समाना॥

---

(१) अट्ठारह।

इतनी कथन कही तुम सारी । मूल मर्म मति नाहिँ निहारी ॥
तब आरंभ भागवत कीन्हा । नारद ने उपदेस जो दीन्हा ॥
नारद गुरू ज्ञान के भइया । तुम ब्रह्म व्यास कौन बिधि कहिया ॥
नारद हरि के दास कहाये । उन कस कर्म उपदेस सुनाये ॥
चौबिस[1] में सब सृष्टि बतावे । यह मम कहन दृष्टि नहिँ आवे ॥
मैं सेवक मोरि बुद्धि मलीना । अस स्वामी से पूछन कीना ॥
ग्रंथ भागवत के अस माहीँ । परीछत को सुकदेव सुनाई ॥
सुकदेव पुत्र व्यास के पाछे । कस लिखि बचन सुनाये साँचे ॥

॥ दोहा ॥

व्यास कथन आगे कही, बचन राय सुकदेव ।
ग्रंथ लिखित सुकराय के, कस कहे उत्तर भेव ॥

कर्म धर्म, मूल मर्म

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह अंतर बानी । जोगी आतम ज्ञान बखानी ॥
प्रानायाम पवन को साधा । इँगल पिंगल सुखमन औराधा ॥
घट में देखा सकल पसारा । सुकदेवराय व्यास बिस्तारा ॥
व्यास वचन अंदर में भाखा। इन पढ़ि बूझि जगत में राखा ॥
करें अरथ मन बुधि के मैले । जाने न व्यास बचन को खेले ॥
व्यास वचन ग्रंथन में गाये । संतन की गति अगम सुनाये ॥
सो पंडित कहा जानें बिचारे । ज्ञान बुद्धि मन मान सँवारे ॥
उन कही और और इन बूझा । ऐसे इन की आँख न सूझा ॥

॥ दोहा ॥

सुनु हिरदे उत्तर वचन, समझि लखौ मन माहिँ ।
व्यास राय सुकदेव को, घट में कह्यौ बनाय ॥

---

(१) चौबीस औतार ।

॥ चौपाई ॥

ब्राह्मन भरम जक्त में डारा । यों जुग जुग भरमा संसारा ॥
सार तत्त को दीन्ह छिपाई । सुनु हिरदे अस अस भरमाई ॥
जीव अनादि काल से बूड़ा । संतन से कटे बंध अगूढ़ा ॥
जग उन को कोउ चीन्हत नाहीं । भरमत फिरे जीव जड़ताई ॥
तीरथ बरत नेम निरधारा । भाख्यो जीव कर्म करतारा ॥
भय भव भार अचार अनीता । कर्म काल सँग पाल्यो प्रीता ॥
यह अस भाँति भुलायउ भाई । इच्छा अमृत बिषय पियाई ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे अस बर्तमान, भर्म भूल जग जिव रह्यो ।
मन करता बिस्तार, भ्रमत भ्रमत जुग जुग भयो ॥

चौरासी लक्ष जोनि

॥ चौपाई ॥

कर्म प्रधान बुद्धि उपजाई । रह सुभ असुभ कर्म के माहीं ॥
जस जस कर्म कीन्ह अधिकारा । जो जस जोनि बंद में डारा ॥
जो जस बनिज किया बैपारी । दुख सुख हानि लाभ सँग चारी ॥
जो आसा बस बनिज बिचारा । बहा भवसिंध चौरासी धारा ॥
खान खान करनी से काया । फैली प्रगट सृस्टि में माया ॥
उपजे मरे धरे फिर देही । जो जस करनी के फल लेही ॥
लख चौरासी रह्यो अचेता । नर तन में बिरला कोइ चेता ॥
सतगुरु साख समझ कोइ बूझी । अंजन तिमर आँख जब सूझी ॥

॥ सोरठा ॥

बिन सतगुरु उपदेस, सुर नर मुनि नहिं निस्तरे ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस, और सभन की को गिने ॥

॥ छंद ॥

सतगुरु बिना भव माहिं भटके, अटक नहिं गुरु की गही ॥
भृंगी भवन नहिं कीट पावे, उलटि भृंगी ना भई ।

अस बोले रघुबंस कुमारा[1]। बिध[2] का लिखा को मेटन हारा ॥
कर्म प्रधान बिस्व[3] रच राखा। जो जस किया सोई फल चाखा ॥
ऐसे साख पुकारे बानी। पढ़ करके कोइ नहिँ पहिचानी ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे कर्म बिषाद[4], बाद जन्म ऐसे गयो।
रह्यौ जुगन में साथ, हाथ पकरि आवे नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

कौन कौन से कर्म बताई। हिरदे जिव चौरासी माहीँ ॥
अंडज पिंडज उष्मज खाना। सब पर भयो कर्म परधाना ॥
नर नारी की कौन चलाई। यह बँध रहे खबर नहिँ पाई ॥
यहि कर्मन ने बंधन कीन्हा। जल बिन रहे तड़प जस मीना[5]।
जल छूटे पर प्रान गंवाई। यह अस दसा रही उर छाई।
जो कोइ ज्ञान समझ बतलावे। सो हिरदै में नेक न लावे।
जेहिं चरचा सुख की समझावे। निज देही में नींद सतावे ॥
आलस कर आसा ने मारा। कैसे होय जीव निरवारा ॥

॥ दोहा ॥

हिरदे सतसंग में रहे, ऊंघे सुन कर कान।
हानि लाभ चीन्हा नहीं, कहा जाने परमान ॥

॥ चौपाई ॥

निद्रा आलस कर परभाऊ। यह पूरबले कर्म सुभाऊ ॥
जेहि विधि अमलदार जग माहीं। उठि गया अमल उदासी छाई ॥
ऐसे पूरव जोग की रीती। अमल उठे कर्म करे अनीती ॥
आलस नींद सुभाव उठावा। और तरह कछु चले न दाँवा ॥
मन में नेक वसन नहिं पावे। जासे मन उदवेग उठावे ॥
और उपाय लगे नहिं कोई। तो यह बुद्धि अनेक विगोई[6] ॥

(१) राम। (२) ब्रह्मा। (३) ससार। (४) दुखदाई। (५) मछली। (६) बहका देना।

मन को भर्म उचाट उठावे। मन छिन एक टिकन नहिँ पावे ॥
ज्ञान बैराग कहै बहुतेरा। तौ मन नाहिँ आवै वहि केरा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म भाव बिष व्याध की, सुनै समझ सुख पाय।
हाथ कधी आवे नहीं, क्योँकर संग समाय ॥

॥ चौपाई ॥

रस की लहर बसे मन साँचे। और लहर मन कधी न राचे ॥
अपनी बुधिमत ज्ञान बिचारे। सतसँग समझ कधी नहिँ धारे ॥
सतसँग का रस पियन न पावे। परख प्रमान और बिधि लावे ॥
जिन कोइ भटक भाव दरसाया। नाँगे पाँव फिरे मन धाया ॥
यह बंधन का करे बिबेका। कस कस पावे मन का ठेका ॥
जो कोइ लाख कहे उपकारी। आवे न मन में बात करारी ॥
मन सतसँग से उचटा चावे। बुधि जद यह बिपरीत उठावे ॥
लाभ घटी बुझे नहिँ भाई। यह सब पुरब जोग अधिकाई ॥

॥ दोहा ॥

सतसँग में मन ना बसे, फँसे कर्म के माहिँ।
खाय बिषय बिस्वास यह, नहिँ कोइ पियत अघाय ॥

॥ चौपाई ॥

मन तन रस को पल पल धावे। इंद्री के रस को सुख चावे ॥
फीकी नीकि चिकन कड़ुवाई। षटरस भोजन माहिँ मिठाई ॥
इंद्री भोजन भोग बिलासा। यह मन में उपजे बिस्वासा ॥
राग रंग नित सुने बिलासा। आवे न नींद रात भर पासा ॥
कोउ सतसंग भाग से पावे। तौ सई साँझ नींद भर आवे ॥
भोजन करे पेट भर भाई। तौ घर नींद कौन के जाई ॥
यह रह सब मन जीव भुलाना। निस दिन रहे गहे नहिँ काना ॥
भर्म उठे नहिँ कैसे भाई। इंद्री मन मिलि मौज बसाई ॥

॥ दोहा ॥

इंद्री सुख रस रीति में, बिलसत जनम सिराय ।
कहा कहूँ अज्ञान की, नेक न मन सरमाय ॥

॥ छंद ॥

मन बिषम यह बिष बाद के बस, समझ कर थिर ना रहे ॥
रस भोग सोग सुनाय कहि कोइ, तुरत उदमद[१] में बहे ॥
कोइ नीक फीक बिचारि बंधन, यह समझ सुध ना लहे ॥
पल पल परख रस रीति सुख यह, दुख समझ निस दिन दहे ॥
सतगुरु दया निज बिमल बातें, समझ सुधि बुधि ना गहे ॥
कर्म कांड बेद बिचार बानी, समझ के साँची कहे ॥
नर को बदन बिस्वास करिके, बेद संग बादै बहे ॥
सतसँग बिना नहिँ साँच पावे, कर्म के बंधन सहे ॥
हिरदे अपबल बात मन की, ठान जो अपनी ठहे ॥
तुलसी तरक[२] कोइ साध के सँग, रँग लगे तब ना डहे ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे मन की रीति, चित्त न सोचे आपने ।
भव भर्मन की प्रीति, कोई कहन माने नहीं ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी यह सब बरनि सुनाई । आगे की कहो समझ बताई ॥
यह मन को बिपरस वस कीना । यासे भया भँवर मति हीना ॥
पोहप वास मन रहत समाई । जासे सुधि अपनी नहिँ पाई ॥
विषय वासना में मन राता । जासे पकरि न आवे हाथा ॥
यह सब समझि समझि लख लीन्हा । आगे को कहो कैसे कीन्हा ॥
चार लाख चौरासी धारा । कौन कौन कस कर्म सिहारा ॥
खानि खानि का न्यारा भेदा । सो भिन भिन करि कहो निपेदा ॥
करनी कौन कर्म मन काया । कहो कोको केहिँ खानि समाया ॥

---

(१) मस्ती । (२) वहस मुबाहसा ।

॥ दोहा ॥

कौन कौन करनी करी, फल तन पाया आय ।
जो जो जस बंधन बँधे, भिन भिन कहो अर्थाय ॥

जन्म मरन की पीड़ा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे मैं कहा बताऊँ । जीव बिपति तोको समझाऊँ ॥
चार खान जीवन की होई । जामें सुखी न देखा कोई ॥
जन्म मरने क्या कहूँ अलेखी । पूछै कही जाय नहिं एकी ॥
जन्मत गर्भ माहिं का लेखा । जरते जठर[१] अगिन में देखा ॥
ज्यों कीड़े मोरी के माहीं । तड़पत जेठ तपन में भाई ॥
छटपट करे तपत रहे पानी । येही दसा गर्भ में जानी ॥
जन्मत जीव जबर दुख भारी । बाहर की कहूँ बिपति बिचारी ॥
जोनी संकट की सुनु भाई । रहे नौ मास नरक के माहीं ॥
उलटे गर्भ रहा लटकाना । औंधे मुख मलमुत्र समाना ॥

॥ सोरठा ॥

मुख उलटे लटका रहे, गर्भ बास के माहिं ।
कहा कहूँ दुख अंत को, जाने भोग समान ॥

॥ चौपाई ॥

जन्मत बालपना दुखदाई । सुधिबुधिज्ञान समझ नहिं पाई
तरुन रहे तरुनी सँग भोगा । बृद्ध भये तब बाढ़े रोगा
ऐसे यह तीनों पन बीता । नेक न जानी साहब रीता
अब मरने का सुनो सँदेसा । प्रान गये पर किया अँदेसा
अब क्या होवे बात बिचारे । नर बाजी जूवा में हारे
घर बाहर से काढ़े डेरा । फिर नहिं आन किया नर फेर

(१) पेट ।

कर्म जोग जोनी भरमाये। कर्म किया सोई फल पाये॥
जब नहिँ चेते मूढ़ गँवारा। बिगरे पै क्या करे बिचारा॥

॥ दोहा ॥

अब समझे से का भयो, चिड़िया चुग गईं खेत।
चेत किया नहिँ आप में, रहे कुटुँब के हेत॥

सतगुरु और सतसंग बिना छुटकारा नहीं हो सकता।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले यह बैना। दुख सुख भोग कर्म का कहना॥
या बिधि जीव रहे जड़ताई। बिन सतसंग राह नहिँ पाई॥
यह मोहिँ समझ पड़ी सहदानी। स्वामी के कहने से जानी॥
यह भवसिंधु पार नहिँ पावें। सतगुरु मिलें तो पार लगावें॥
बिन गुरु ज्ञान भया मति हीना। क्यों कर परे आप घर चीन्हा॥
सतगुरु मिलें न सतसँग पावे। क्योंकर बात हाथ में आवे॥
जग की रीति लगे मन मीठी। अंजन बिना आँख नहिँ डीठी॥
जब कोइ खोज करे मन लाई। संतन की संगत में पाई॥

(तुलसीदास बाच)

॥ सोरठा ॥

वे गुरु दीनदयाल, करें निहाल जो दीन होय।
जग बस बंधन काल, भाल[1] लिखन मेटें सही॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे अस हृदय बिचारे। जो तैं कही समझ सोइ धारे॥
संत चरन में सूरति राखे। सतगुरु सब्द कहन अस भाखे॥
जो सब्दन में करे बिवेका। तो सतगुरु का पावे ठेका॥

---

(१) माथा

छल तजि प्रीति जो करे हमेसा। तो वे काटैं काल कलेसा॥
अंतर साँच रहे मुख बैना। सतगुरु संत बचन क्या कहना॥
या बिधि से सत सुरति लगावे। भव जल पार उतर के जावे॥
कोई बिषाद[1] न रोके भाई। आद अरु अंत साध समझाई॥
या बिधि समझ करे निरवारा। कोइ न उसका रोकन हारा॥

॥ दोहा ॥

तन मन से साँचा रहे, गहे जो सतगुरु बाँहि।
काल कधी रोके नहीं, देवे राह बताइ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे नाव नदी के पारी। केवट[2] वा को देत उतारी॥
जैसे जहाज समुंदर माहीं। वार पार सहजै उतराई॥
सतगुरु केवट मिलैं दयाला। रोके न काल जबर जम जाला॥
मन होय लीन दीनता पावे। मरजीवा[3] मोती ले आवे॥
पैठे माहिँ समुंदर केरे। जो सतगुरु चरनन को हेरे॥
जाने जोई संत गति प्रीती। हिरदय में नहिँ रहे अनीती॥
सुरति सिरोमन चरन लगावे। जब संतन की गति को पावे॥
जैसे बनिज करे बैपारी। मूर रहे पर नफा बिचारी॥

॥ सोरठा ॥

सौदागर का ज्ञान, माल दिसावर से भरे।
करे नफा से भाव, घटी जानि बेचे नहीं॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी अस अस कोइ कहिया। सतसँग कर हम कछू न पइया॥
सतसँग करत बहुत दिन बीते। देखा न नजर नैन से प्रीते॥
यह सतसँग कस कस गोहरावा। वाके तो कछु हाथ न आवा॥

---

(१) कष्ट, विघ्न। (२) मल्लाह। (३) समुद्र में डुबकी लगाकर मोती निकालने वाला।

याका भर्म भया मन माहीँ । यह संसै स्वामी समझाई ।
कैसे मन ने मन को रोका । या का समझ मिटावो धोखा ।
सतसँग की महिमा कहैँ भारी । कहो जो समझ परै अधिकारी ।
कहो जो कहा कौन उन कीन्हा । सतसँग से उन लाभ न लीन्हा ।
क्योंकर के सतसंग न पाया । कैसे वाको बोध न आया ।

॥ दोहा ॥

कौन बात कीन्हा नहीँ, कैसे न बोध समान ।
ज्ञान रतन कहो कौन सा, सो न परा पहिचान ॥

॥ छंद ॥

हिरदे कहे गुरज्ञान स्वामी, कस न वोहि हिय में भयो ।
अस कौन बात बिबेक तन मन, आप में खाली रह्यो ।
कोइ समझ सोध न बोध कीन्हा, गुरु भटक मन से गयो ।
कोइ भाँति बरन बिचार कारन, बूझ बिन लै ना लयो ।
कहो कौनि बिधि बिस्वास मन से, दिल बिकल है नहिँ सह्यो ।
कोइ कहन में नहिँ कान दीन्हा, यह कहो कैसे भयो ।
याको कहो बरतंत मोसे, संग में मन ना दियो ।
तुलसी तरक मन माहिँ अचरज, कौन बिधि मोटो कह्यो ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे कहत सुनाय, स्वामी यह मो से कहो ।
कर्मन के बर्त्तमान, की कोइ और उपाय से ॥

सतसंग से लाभ कितनोँ ही को क्योँ नहीँ होता

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

तुलसीदास कहे सुनु भाई । तोको बचन कहूँ समझाई ॥

---

(१) ससय ।

जीव अनादि काल से आया। जन्मजन्मकर्मकीट[1] लगाया ॥
लोहा को काई खा जावे। कीड़ा लगे काठ घुनि जावे ॥
जैसे असल सिरोही[2] होई। लगे मोरचे माहिँ बिगोई ॥
जस ओला घुल पानी होई। अस जिव आप अपनपौ खोई ॥
कर्म कराल बड़ा अधिकारी। सूरत पर मन करे सवारी ॥
बिष बंधन मन करे बिहारा। गाँठ बाँध चेतन जड़ डारा ॥
मन मलीन सुधि बुद्धि हिरानी। कहु वह सतसँग को का जानी ॥

॥ सोरठा ॥

जैसे अपढ़ अज्ञान जो, पढ़े जो पोथी जाय।
अच्छर की सुधिबुधि नहीँ, नहिँ उस अरथ प्रभाव ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे उन सतसंगत कीन्हा। भोजन लोभ माहिँ मन दीन्हा ॥
जब लग स्वाद मिला मन माहीँ। तब लग संग करा उन जाईं ॥
राह रकाना एक न बूझै। कहो कैसे आँखी से सूझै ॥
भरे पेट जो खाय अघाई। सोवे सई साँझ से जाई ॥
बैठे गाल फटाका मारे। मनमौजी को नाहिँ सम्हारे ॥
जन्म जन्म का उरझा सूता[3]। को सुरझाय सके मजबूता ॥
करनी करे आप की सोई। की सतगुरु के सरनै होई ॥

॥ दोहा ॥

की अपनी करनी करे, की गुरु सरन उबार।
दोनों में कोइ एक नहिँ, नाहक फिरत लबार ॥

॥ चौपाई ॥

डाँवाँडोल बोल मन केरा। सो क्या पावे जीव निबेरा ॥
संत चरन पर प्रीति बढ़ावे। तो उन से उपकारी पावे ॥
दीन देखि के करें निबेरा। जो कोइ साँचे मन से हेरा ॥

---

(१) मैल की काई। (२) तलवार। (३) सूत।

संतन को चीन्हब बड़ि बाता । छल बल दाँव चलावैं हाथा ॥
जो करनी में देखन चावे । भटकत जन्म नजर नहिँ आवे ॥
उनके रीति रकाने भारी । तैं का जाने चीन्हि अनारी ॥
बेद नेत उनको गोहरावे । अवतारी कोइ भेद न पावे ॥
तिरदेवा नहिँ पावैं अंता । परखि न परैं लखन में संता ॥

॥ दोहा ॥

कोइ सतसँग करके लखे, सज्जन सुमन बिचार ।
दीन गरीबी रहनि जो, मन से बैठे हार ॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदय मन के जो ऐसे । सो लख पावैं संत सदेसे[1] ॥
रहनी और करनी में नाहीं । जो खोजे सो रहे भुलाई ॥
कधी इक करें अज्ञानी काजा । कधी सभा में ज्ञान बिराजा ॥
कधी इक बड़े ज्ञान के राजा । कधी मूरख अज्ञान समाजा ॥
कहो को उनको परखे भाई । पारख परखे लखन में नाहीं ॥
यह क्या परखे जीव बिचारा । सतसँग के बिन सार असारा ॥
जोई कदाचित भाग से पावे । तो अपने मन साँच न लावे ॥
कई तकरीरें कहन उठावे । या बिधि उनका भेद न पावे ॥

॥ दोहा ॥

जो उपाय छल से करे, मिले न उनका भेद ।
फेर जुगन जुग में सहे, उनगति अगम अभेद ॥

॥ चौपाई ॥

जो कोइ कहे संत को चीन्हा । तुलसी हाथ कान पर दीन्हा ॥
कोइ कोइ सज्जन हैं बड़भागी । जिन की सुरति चरन में लागी ॥
वे परखें गति अगम सनेही । जो मिथ्या जग जानैं देही ॥
नर पसुवत जग माहिँ घनेरे । सो का जानैं जम के चेरे ॥

हिरदे मोसे कही न जाई। यह जिव कुटिल बड़ा अन्याई ॥
जो याकी करनी दरसाऊँ। तो जग कागज स्याही न पाऊँ॥
इन अपनी सुधि कबहुँ न पाई। आद अरु अंत रह्यो भर्माई ॥
खोटे जन्म कर्म कर बीता। ऐसइ रहा हाथ से रीता ॥

॥ दोहा ॥

यह अज्ञानी जीव की, क्योँ कर करूँ बखान।
अपनी बुद्धि बिकार की, करे न मन पहिचान ॥

॥ चौपाई ॥

इतनी नजर कहाँ से आवे। बाहर भीतर को कस पावे ॥
सतगुरु को कहो कहा पिछाने। कहो यह बुद्धि कहाँ से आने ॥
जग धंधे में जन्म बिताया। साँझ पड़े घर अपने आया ॥
भोजन करिके खाट बिछाई। पौँढ़े पाँव पसारे जाई ॥
ऐसे जन्म गयो सब बीती। कस आवे सतसँग की रीती ॥
जक्त भेष दोउ आहिँ अनारी। यह बँधे माया मोह की जारी[1] ॥
सुपने संतसँग कबहुँ न पावे। इनको कहो कौन समझावे ॥
हिरदे कौन जिकर मन लागे। इनको देख दूर मन भागे ॥

॥ दोहा ॥

यह जग जीव अनादि से, भटकत फिरे निकाम।
काम बान[2] मन में बसे, जुग जुग से भरमान ॥

॥ चौपाई ॥

कइ मति के बहु भाँति बिकारा। लोक न बने परलोक बिगारा ॥
केहि केहि भाँति पड़ा जम घेरा। अरु दूजे यह चले अनेरा ॥
कौन भाँति कहूँ याकी रीती। अपने बस नहिँ चूके अनीती ॥
सतसँग में कैसा होइ जावे। कैसी बिरह बात समझावे ॥
ज्योँ ठग ठगन करे ठगियाई। मारे माल लेन के ताँई ॥
ज्योँ बैपारी माल खरीदे। सौदा लोभ माहिँ मन बीधे ॥

(१) जाल (२) एक लिपि में "बान" है दूसरी में "बाम", बान=तीर; बाम=स्त्री।

रोकड़ बाँधि कमर के माहीँ। चौकस करिके माल बिसाही[1] ॥
उथल पथल कर कीन्हा सौदा। अपनी नजर देख मन बोधा ॥

॥ दोहा ॥

या बिधि सतसँग में करे, रोकड़ कम्मर बाँध।
चाँद सुरज जहँ लगि रहे, कभी न आवे हाथ ॥

॥ चौपाई ॥

माँगे माल संत से आँधे। जैसे कम्मर रोकड़ बाँधे ॥
खिजमत नहिँ कछु खरचे दामा। सहज संत का माल निकामा ॥
सभी महात्मा कठिन बतावेँ। यह जाने अस माँगे आवे ॥
योँ बुधिहीन करे लड़िकाई। यह तो मिले मेहर के माहीँ ॥
ज्योँ जल भरा सिंधु के माहीँ। तोला चाहे तोल में नाहीँ ॥
गगरी जो अपनी भरि लावे। या बिधि पानी प्यास बुझावे ॥
अस संतन मति तुले न भाई। है अतोल तोलन में नाहीँ ॥
जो गगरी जल जीव बिचारे। संत कृपा से कारज सारे ॥

॥ दोहा ॥

सिंधु अथाह न थाह कहिँ, मिले न वाका अंत।
भटक भटक भव पचि मरे, को गति पावे संत ॥

॥ छंद ॥

सिंधु अगम अथाह जल को, अकल कर तोले तुही ॥
ऐसे अगम गति संत की, आगे नहीँ ऐसी हुई ॥
कोइ कहे परख पिछान मैं, सोइ गिरि पड़े माहीँ भुँई[2] ॥
खोटे करम मन भोग करि, जस बस्त्र को सीवे सुई ॥
जो संत से आधीन होय, जब कर्म की आसा मुई ॥
जिव काज कारज की कहूँ, नर जाय जो ममता धुई ॥
भवसिंधु से केहि भाँति कढ़ जिव, जक्त यह औंधी कुई ॥
तुलसी तरक मन तोल के, जब छूटि हैं गाँठैँ गुई[3] ॥

(१) मोल ले। (२) धरती। (३) गूढ़।

॥ दोहा ॥

संतन से माँगे नहीँ, घट घट जाननहार ।
जीव दया हिरदय बसे, नाहक करत बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

मन सूरत चरनन मेँ लागी । वे हैँ हिरदे संत अनुरागी ॥
उनका बार बंक[1] नहिँ होवे । वे नित पाँव पसारे सोवेँ ॥
जैसे साँड़ दगे जग माहीँ । उनको जग कोइ पूछे नाहीँ ॥
मोहर छाप कागज पर लागी । रुके न जीव सुरत बड़भागी ॥
जो कोइ संत चरन के दागी । जिनसे काल दूर होइ भागी ॥
जम की जाल निकट नहिँ आवे । मारग छाँड़ि अलग होइ जावे ॥
साँचे मन आवे बिस्वासा । संत चरन नहिँ दूजी आसा ॥
जिनके भर्म निकट नहिँ आवे । एक आस विस्वास समावे ॥

॥ दोहा ॥

संतन की साखी सभी, देत जुगन जुग ज्ञान ।
सतसंग करिके बूझि ले, करत सभी परमान ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

कह हिरदे यह सच कर भाखी । कहे अस सुनी सबन की साखी ॥
अब वह कथा कहो बिस्तारी । चार खानि में जीव दुखारी ॥
जस जस कर्म जीव ने कीन्हा । सुन कर आवे हृदय अकीना ॥
कर्म जक्त में बहु परकारा । जस जिनकी करनी बिस्तारा ॥
जो जिन कर्म किये हैँ जैसे । सो तिन ने फल पाये कैसे ॥
यह भवसिंधु बड़ा दुखदाई । कौन कर्म केहि खान समाई ॥
इच्छा सँग दुख देवनहारी । रहे नाहिँ ढिँग ज्ञान करारी ॥
तन धर के दुख सहे अनेका । जो जस कहो खानि का ठेका ॥

---

(१) टेढ़ा ।

असज्जन अंडज खानि में उतर जाते हैं

॥ दोहा ॥

अपकीरति जग में बढ़ी, सब सिर डारे धूर।
लाज कधी आवे नहीं; साँची कहे न मूर ॥

॥ चौपाई ॥

यह तो ऊपर जग ब्योहारा। मन अंदर का सुनो बिचारा ॥
मन इच्छा सँग साथ चलावे। इच्छा मन सँग तरँग उठावे ॥
जहँ मन लगे तहाँ तन जावे। मन मन मिले मिलाप कहावे ॥
जैसे नदी लहर की लहरी। जैसी बास चले मन केरी ॥
यह जग जीव लहर में माता। दुनिया नाम पड़ो यहि भाँता ॥
मन की कला अनेकन होई। मन इच्छा सँग बाद बिगोई ॥
मदिरा को कलवार बनावे। पीवे दाम देइ दुख पावे ॥
मन भट्टी कलवार चढ़ावे। कलवारिन पी पीव छकावे ॥

॥ सोरठा ॥

मन है मुकर[1] कलार, कलवारिन इच्छा भई।
बिष रस बिषम बिकार, रात दिवस करते रहें ॥

॥ चौपाई ॥

जाग्रत में मन लागे जोई। पहुँचे सुपने में तहँ सोई ॥
छल बल करे रीति दरसावे। जाग्रत सो सुपने में पावे ॥
लहर उठे जो मन के माहीं। सो तदरूप देख दरसाईं ॥
या मन मन इच्छा जिव बाँधे। कर्म करूर ताहि में फाँदे ॥
जैसे माल भरे बैपारी। जाय दिसंतर बेचे भारी ॥
ऐसे कर्म खरीदी लेखा। चौरासी के भोग अलेखा ॥
जो हिसाब कागज में होई। धर्म राय भुगतावे सोई ॥
नरक स्वर्ग दोउ बने करूरा। या में से कोइ बाचे पूरा ॥

(१) आईना, दर्पण।

॥ सोरठा ॥

अंड असज्जन रीति, जन्म जन्म जोनी पड़े ।
अंडज में बिसराम, तीन[1] तत्त तन मन धरे ॥

॥ छंद ॥

अब यह असज्जन रीति की, करनी करम गति यों भई ।
मर के अँडज की खानि में, तन पाय के भुगते सही ॥
अप* काय बाई। तेज। तत बस, बास में आवे वही ।
सागर कलप के बाद[2] फिर फिर, जोनि में उतपति रही ॥
कोइ कर्म के अनुसार करि, चर[3] खान में पावे नहीं ।
जुग जुग वतन[4] करिके रहे, नर की जोनी भई ॥
जस बाट में कोई बृच्छ फल, पड़ पड़ पके गिर के भुईं ।
कोइ संत आय उठाय मुख, जब खाय नर जोनी भई ॥
दइ[5] जोग से संजोग अस कोइ, आनि के बरते सही ।
करनी करे नहिं पार पावे, संत की किरपा भई ॥

॥ सोरठा ॥

अस जड़ खानि सुभाव, निकसन का रास्ता नहीं ।
संत सँवारें आय, नर तन पावे मुक्ति मन ॥

॥ चौपाई ॥

अंडज से जो नर तन पावे । जाका भाखूँ सकल सुभावे ॥
खानि लच्छ मैं कहूँ समझाई । अंडज से नर देही पाई ॥
खानि जुगन जुग रहे अनेका । उनका लख पहिचान परेखा[6] ॥
मन की बसन बसे परतीता । वह उपजावे वैसी रीता ॥
जस जस रहे खानि रसमाहीं । जस जस बुधि उपजावे भाई ॥
जैसी रहनि चाल नित चाले । लच्छ अलच्छ दोई प्रतिपाले ॥

(१) अंडज जीव (पक्षियों) में तीन ही तत्व अर्थात तत्व-सम्बन्धी गुण होते है—*जल, वायु। और अग्नि। । (२) पीछे । (३) चार । (४) घर मान कर । (५) दैव । (६) परख ।

जोइ रस में मन रहा निदाना। सोइ रस दरसे परख पिछाना ॥
रहनि रहे सब भासक रीती। सो भासक होइ परसे प्रीती ॥

॥ सोरठा ॥

अंडज खानि सुभाव, धरा जो नर तन आइ के।
लच्छन के बर्तमान, जोनि जन्म जुग जुग रहे ॥

॥ चौपाई ॥

आलस नींद नैन भरि सोवे। काम क्रोध दालिद्दर होवे ॥
चंचल चोर चुगल चतुराई। माया मोह ममत अधिकाई ॥
गुरु के चरन चित्त नहिँ लावे। संतन की संगति नहिँ भावे ॥
भूत पिसाच रु पूजे देवा। देवी दरस और नहिँ सेवा ॥
तीरथ बरत बहुत मन लावे। ठाकुर प्रीति भाव चित चावे ॥
बेद पुरान कहन बहु भावे। सिवलिँग परसि पूजि लौ लावे ॥
बन बाहर घर आगि लगावे। रोवत माहिँ हँसी उठि आवे ॥
छिन सुर तान अलाप सुनावे। दुख सुख पीर पराई न आवे ॥
कोइ कछु कहे गुस्सा भरि आवे। जिद्द पड़े मारन को धावे ॥

॥ सोरठा ॥

या बिधि उद्‌मद ज्ञान, अज्ञानी भव भटक में।
अटक न माने काहु, पूरब करनी करम फल ॥

॥ चौपाई ॥

कोइ कोइ को देखत कछु देवे। मन मलीन मैला करि लेवे ॥
मन में झुरे आप दुख पावे। अंदर माहिँ बहुत पछतावे ॥
जिकर विवाद बहुत मन भावे। ज्ञान ध्यान सुधि बुधि बिसरावे ॥
सुरख नैन रतनारी[१] रेखें[२]। भौं टेढ़ी दिरगन से देखे ॥
मुख में लार बहे दिन राती। बहु विधि हेत जुवारी साथी ॥
नीचा आप ऊँच मन राखे। मन का मोट मधुरता भाखे ॥
हम समान दूसर नहिँ कोई। या बिधि बसे हिये में सोई ॥

(१) लाल। (२) आँख के डोरे।

कुबरी पीठ पेट हलुकाई । सुने कोइ बात तुरत कहे जाई ॥
बाँकी धरन मूड़ टेढ़ाई । यह लच्छन बहु भाँति रहाई ॥

॥ सोरठा ॥

यहि बिधि बरनन बाक, भाख कहूँ प्रकृती सभी ।
कभी न चूके भाव, जो लच्छन यहि में कहे ॥

॥ चौपाई ॥

जामें कुटुँब काज यों धावे । ज्यों कूकर पिल्ले को चावे ॥
लेत एँड़ाई तन को तोड़े । सभा बैठि के मूछ मरोड़े ॥
मीठे भोजन अधिक सुहाई । फल फलहार खाय बहु भाई ॥
जाने न जाति आपनी छोटी । बातें करे बड़न से मोटी ॥
चाल चले तीतर की नाईं । काग सुभाव रहे मन माहीं ॥
लंपट बात करे बरियाई[1] । अंदर सदा कपट रहे छाई ॥
अंडज जो जोइ खान कहावे । तत्तहीन भव भटका खावे ॥
कोइ संजोग पड़े अस भाई । नर की देंहि धरे तब आई ॥

॥ दोहा ॥

तीन[2] तत्त अंडज कह्यो, अद्यादिक सब कोय ।
नर अंडज से जो भया, यह सुभाव प्रति होय ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक संसय लाई । स्वामी मोहिं कहो समझाई ॥
अंडज से जिन नर तन पाऊ । जाका भाखो सकल सुभाऊ ॥
तीन तत्त अंडज में कहिया । उन नर तन कहो कैसे पइया ॥
नर तन में तत पाँच बतावे । तीन तत्त कस नर तन पावे ॥
यह संसय मोरि दूर बहावो । हिरदे चित संसय समझावो ॥
तत्त हीन यह क्यों कर भयऊ । सो स्वामी मोहिं बरनि सुनयऊ ॥

---

(१) शेखी । (२) देखो नोट पृष्ठ ३३ में ।

थाकी बिधी कहो बरतंता । कस कस भाख सुनाये संता ॥
यह अचरज मोरे मन आवा । सो स्वामी पूछूँ परभावा ॥

॥ सोरठा ॥

नर तन धर ततहीन कस, कस अंडज में जाय ।
सो मोहिँ बरन सुनाइये, जोनि खानि परभाव ॥

कर्मफल से खानों में उतार

(तुलसी दास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बात अतंता । सूरतवंत कहे सब संता ॥
जस जस देखा अंड पसारा । सो तोसे भाखूँ अनुसारा ॥
परथम नर बैराट बनाया । तीन लोक यहि उदर समाया ॥
प्रभुता आप आपनी भूला । किरिया करम करे तज मूला ॥
कर्म कलंदर[1] ने भटकाया । पिंडज चार तत्त में आया ॥
चार तत्त जड़ रहे अचेता । तीन तत्त अंडज में रहता ॥
कर्म होय अधिकारी भाई । टूटे तत्त एक जब जाई ॥
तब नर से पिंडज में आवे । पिंडज चार तत्त तन पावे ॥

॥ दोहा ॥

नर देही ततहीन से, पिंडज माहिँ पसार ।
सार भुलानो आपनो, खानइ खानि खुवार[2] ॥

चार खानों का भेद

अब पिंडज से अंडज माहीं । पसुवत देह बनै कछु नाहीँ ॥
जड़ता तन निरज्ञान कहावे । कर्म भोगि फिर भव में आवे ॥
भव के भार तत्त नस जावे । तीन तत्त अंडज तन पावे ॥
अस अस्थावर[3] उपमज[4] लेखा । सुरतवंत कोइ करे बिबेका ॥
हिरदे नर तत पाँच कहाई । पिंडज पसू चार के माहीँ ॥

(१) वैरागी का भेप। (२) खराब। (३) जड सृष्टि, जैसे पेड वगैरह।
(४) गरमी से पैदा हुई सृष्टि।

तीन तत्त अंडज तन पावे। दो तत उष्मज खानि कहावे ॥
अस्थावर तत एक रहाई। यों ततहीन गुनन के माहीं ॥
पिंडज चार तीन तत आया। यों अंडज की खानि कहाया ॥

॥ दोहा ॥

कर्म करे बरियार से, तत्त छीन होइ जाय।
तत्त घटे घट खानि में, दुख सुख माहिं बिलाय ॥

॥ सोरठा ॥

कही असज्जन रीति की, उतपति कर्म सुभाव।
अंडज की करनी करे, यों तत तीन समाय ॥

॥ दोहा ॥

सागर में जो संख है, रंक[१] जीव कृत भाव।
हिरदे यह गति यों भई, संख असज्जन राव[२] ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले अस बाता। स्वामी समझि लीन्ह बिख्याता ॥
जो स्वामी भाखें मुख बानी। सो सब हिरदे सुनि मन आनी ॥
कहा असज्जन का परभावा। सो सब मोरि समझ में आवा ॥
अब वह बरनि कहो सहदानी। नर उष्मज तन क्यों कर जानी ॥
याका भेद कहो समझाई। नर तन तजि उष्मज को पाई ॥
उष्मज के लच्छन दरसावो। नर तन तजि उष्मज समझावो ॥
सो बिरतंत[३] कहो अरथाई। लच्छन गुन कहो भेद बताई ॥
कौन कर्म नर तन में कीन्हा। जासे उष्मज खान अधीना ॥

॥ सोरठा ॥

नर तन की करतूत, उष्मज में बासा किया।
दई कर्म भ्रम भूत, मन तन में बासा लिया ॥

---

(१) दरिद्र। (२) राजा। (३) वृत्तान्त।

॥ चौपाई ॥

उष्मज से नर तन कस पावे । भिनभिन कहो समझ में आवे ॥
करनी कौन खानि में बूड़ा । कस नर देही मिले अगूढ़ा[1] ॥
नर तन मिला भक्ति नहिँ पावा । कौन कर्म के भोग प्रभावा ॥
नर की देह जीव निस्तारा । सो नहिँ पावे कौनि बिचारा ॥
यह दुर्लभ तन सभी पुकारेँ । जिव बाजी नर तन में हारे ॥
नहिँ कछु ज्ञान,बिबेक बिचारा । बहु बहि जाय सिंधु की धारा ॥
सिंधु कराल बहे बहु भाँती । भँवर करूर[2] उठे दिन राती ॥
यह संसार भँवर बड़ भारी । जो उबरे जन रहे करारी ॥

॥ दोहा ॥

नर तन तो पावे नहीँ, पसु पंछिन में जाय ।
अस्थावर उष्मज रहे, नर तन बाद गँवाय ॥

अज्ञानता और भोग विलास में आशक्ती का फल

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे नर बड़ा अयाना । सतगुरु सोधि चरन नहिँ जाना ॥
सतगुरु बिन नर फिरत भूलाना । ज्योँ केहरि भेड़न में आना ॥
जग भेड़न की चाल चलाई । सतगुरु बिना रह्यो उरझाई ॥
जुग जुग भटकि भूलि दुख पाया । मन इंद्री गुन माहिँ चलाया ॥
लच्छ अलच्छ कहूँ का भाई । को हिरदे कहे कथा बढ़ाई ॥
इक इक बात कहूँ बिस्तारा । तो नहिँ कहन उमर निरवारा ॥
वन वन खेले जीव सिकारा । मारिजीव पुनि करत अहारा ॥
दयाहीन मुख स्वाद सँवारा । जिह्वा का बंधन बिस्तारा ॥

(१) निर्मल । (२) विकराल । (३) शेर ।

॥ सोरठा ॥

जीवत मारे जीव, कधी दर्द आवे नहीं ।
तलफत जीव नसाय, बेदर्दी बूझै नहीं ॥

॥ छंद ॥

हिरदे अधम नर रीति की, बरनन कहो कहँ लग कहूँ ।
जग रीति को रहे जीति जिन से, मैं पुनी हारे रहूँ ॥
कोइ खोट नीक बिचार की अस, कहन में सब की सहूँ ॥
जग को निरखि निज नैन से, सुख चैन हित चित क्यों बहूँ ॥
खोटी कुभंडी चाल जग से, भाग कर गुरु को गहूँ ।
अस कुटिल काँट करील[1] जग लखि, लोग से भाग्यों महूँ[2] ॥
जग जीव के यह कर्म अघ, बेफायदे नाहक लहूँ ।
तुलसी अधम संसार की गति, हारि के हिरदे कहूँ ॥

॥ सोरठा ॥

अकरम करम बिचार, जीव हतत हारे नहीं ।
आतम होत बिनास, आस अवस पावे यही ॥

॥ चौपाई ॥

बाक बिलावल[3] में समझाऊँ । जग अचेत की आस सुनाऊँ ॥
कहुँ कहा रीति भाँति बहुतेरी । कर्म कुटिल से प्रीति न फेरी ॥
जग को तोल तरक कर हारा । कहा बिलावल में अनुसारा ॥

॥ बिलावल ॥

हिरदे जग तरक तोल, बोल हेरि हारा ॥टेक॥
देखो दृग काल साल, माँगे स्वर्ग बास हाल ।
लिये मोह भर्म जाल, ख्याल खोज पारा ॥
बूझे नहिँ साध संत, खोजे नहिँ आदि अंत ।
पावे कस पिया पंथ, बूड़े भव धारा ॥

(१) एक काँटेदार झाड़ । (२) मैं भी । (३) एक राग का नाम ।

ऐसा भव भर्म माहिँ, काम क्रोध लारा ॥ १ ॥
राम प्रिये परन ठानि, मन से सुत त्रिये मानि ।
माया बस पड़त खानि, बूझ खोज पारा ॥
यहि बिधि अज्ञान बास, बूझे मृत अंत नास ।
प्रीति मुक्ति कहे अकास, स्वाँस नास न्यारा ॥
ऐसी बुधिहीन चीन्हि, बूझि ले गँवारा ॥ २ ॥
चाहत पद राम बास, रामही पूरन प्रकास ।
उन के बस काल फाँस, आस मौत मारा ॥
वासे कोउ करो न हेत, बूझो नर अंध अचेत ।
सूरति छबि नाम लेत, चौथे पद पारा ॥
याही बिधि बान ठान, संत पंथ न्यारा ॥ ३ ॥
देखो कृत कर्म काग, यासे पुनि निकसि भाग ।
साधो सत सुरति लाग, लख अकास पारा ॥
ऐसी लख मान सीख, नाहीँ भव खानि नीक ।
ऐसी अज अमर लीक, हिरदे तन छारा ।
याही घट खोज रोज, चौज मौज मारा ॥ ४ ॥
भाखा सत मत पसार, ताका भव भिन अपार ॥
चाखा पद मूर सार, जाहिर जग सारा ॥
पावे सत मत्त सार, देखे अगमन बिचार ।
उतरे भव सिंधु पार, नौका भव वारा ॥
हिरदे घनघोर सोर, निरतो चित चारा ॥ ५ ॥
हिरदे तन माहिँ पैठि, छाँड़ो नर सकल टेक ।
आदि और अंत देखि, टेक एक सारा ॥
कहनी मन मेँ विचार, तेरा कोउ ना निहार ।
निरखो निज नैन पार, वाहि को अधारा ॥
हिरदे यह खूब अजूब, पावे मन मारा ॥ ६ ॥

मोको सब जक्त कहत, तुलसी के राम टेक ॥
जाना निज एक अलेख, संतन की लारा[१] ॥
जाके नहिँ रूप रेख, देखा जाइ जो अदेख ।
ऐसा पद पार पेख, पंकज[२] गुरु चेरा ॥
हिरदे तत कर बिचार, राम रमत हेरा ॥ ७ ॥
हिरदे सतगुरु की दृष्टि, ता से निरखा अदृष्ट ।
सत्तलोक पुरुष इष्ट, वे दयाल न्यारा ॥
मोरी लौ चरन लार, छिन छिन निरखत निहार ।
कीन्हा पद पूर पार, काल जाल मारा ॥
हिरदे यह जक्त भ्रष्ट, देखा दीदारा ॥ ८ ॥
हिरदे यह अंड खंड, निरखा सगरा ब्रह्मंड ।
मारा मन काल डंड, छाँड छूँड न्यारा ॥
धरती और चंद सूर, निरखा सगरा जहूर ।
लीन्हा रन खेत सूर, सतगुरु मत सारा ॥
हिरदे दीदा निहार, भागे बट पारा ॥ ९ ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे हेर बयान, हरख हृदय प्यारा लिया ।
जड़ जिव जग अज्ञान, कहा जाने यह भेद मत ॥

॥ दोहा ॥

जड़ जूड़ी त्रय ताप, जुगन जुगन तपता रहे ।
गहे न गुरु गम बास, आस अथिरता की गहे ॥

॥ चौपाई ॥

दुनिया माहिँ दुरंगी रीती । नहिँ कनिष्ट[३] नर निजघर प्रीती ॥
सिंधु माहिँ सीपी जिमि होई । यों कनिष्ट जिव जक्त बिगोई ॥
अब सुनु आगे नर बिस्तारा । यह मन अधम नेक नहिँ हारा ॥

(१) साथ । (२) कँवल । (३) छोटा [illegible]

परथम नर बैराटी काया । कर्म भोग पसु पिंडज पाया ॥
तत्तहीन पिंडज में भाई । अंडज तन तत बास कराई ॥
अंडज में करनी से हारा । उष्मज खानि भया सिर भारा ॥
चूक पड़ी करनी में भाई । ऊँचे चढ़ि नीचे गोहराई[1] ॥
हिरदे सतगुरु बिन बौराया । आदि अपन तजि उलटा आया ॥

॥ दोहा ॥

परथम नर तत पाँच में, पिंडज में तत चार ।
तीन तत्त अंडज रहे, उष्मज दो बिस्तार ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

उष्मज का लेखा समझावो । हिरदे को यह भेद सुनावो ॥
अब सब कथा कहो बिस्तारी । समझ पड़े बिधि न्यारी न्यारी ॥

(तुलसीदास बाच)

तब तुलसी कहे यह नर काया । बेद पुरान मुनिन भटकाया ॥
कर्म रीति नीके समझाई । आदि अधर घर राह भुलाई ॥
जग की रीति करन सब लागे । सिंधु गये तजि रहे अभागे ॥
दुनिया जग दिन राति दिवानी । ब्रह्म बंध नर भये जिवप्रानी ॥
समुँदर माहिँ सीप का लेखा । योँ कनिष्ट नर जीव बिबेका ॥
सुरत सुमन[2] तजि नीचे आई । कुमन[3] करंदे[4] से चित लाई ॥

॥ दोहा ॥

पाँच पचीसो तीन मिलि, इच्छा कीन प्रचंड ।
मार मार सब कोउ करे, ज्योँ दुखिया पर डंड ॥

॥ चौपाई ॥

या विधि उष्मज खानि समाया । नरतन तजि उष्मज में आया ॥
परथम नर करनी विस्तारा । तपफल राजभोग अनुसारा ॥

---

(१) पुकारा । (२) अच्छा मन अर्थात ब्रह्मांडी मन (३) बुरा अर्थात पिंडी मन । (४) कारिन्दा ।

जुगन जुगन तप मारग लीन्हा । नर तन तजे राज सुख कीन्हा ॥
जिव फल भोगि रहे बहु भाँती । ममता बढ़ी अधिक दिन राती ॥
चक्रवर्त राजा होइ जाई । अंदर यों आसा उपजाई ॥
कोइ संजोग पड़ा अस भाई । चहुँ दिस चक्र फिरे जग माहीँ ॥
चक्रवर्त होय सब बस कीन्हा । मकड़ जन्म देह तजि लीन्हा ॥
टूटे पाँव लँगड़ता चाले । माया ममता फिरे बिहाले ॥

॥ दोहा ॥

योँ नर तन तजि जीव यह, उष्मज माहिँ समाय ।
दुख सुख भोगे कर्म को, लख सत्ताइस माहिँ ॥

उष्मज जीव संत चरन से कुचल जायँ तो उद्धार हो जाता है

॥ चौपाई ॥

यह आसा उष्मज में लाई । लख सत्ताइस जोनि कहाई ॥
कृत्रिम[1] सँग मन माया व्यापी । रोग सोग दुख सुख संतापी ॥
जो जो उष्मज खानि कहाई । भुगतत फिरे जुगन जुग माहीँ ॥
कोइ संजोग उदय कहुँ होई । बिचरत संत मिले कहुँ कोई ॥
मारग पाँव चलत के माहीँ । चरन पड़े जिव मुक्त कहाई ॥
पाँव तरे कोइ जीव कुचाना । जो जिव मरे धरे नर जामा ॥
योँ उष्मज से नर तन आवे । और भाँति कहुँ गैल न पावे ॥
करनी करे भोग फल पावे । नर तन कोटि करे नहिँ आवे ॥

॥ दोहा ॥

संत चरन अति बहुत बड़, जो जिव चरन खुँदाय[2] ॥
नर जामा पावे वही, संत चरन परभाव ॥

---

(१) बनावटी । (२) पिस जाय ।

(हिरदे बाच)
॥ चौपाई ॥

स्वामी से पूछूँ इक बाता । सो मोहिँ बरनिक हो बिख्याता ॥
चक्रवर्त मक्कड़ तन धारा । यह कारन कहो कौन बिचारा ॥

(तुलसीदास बाच)

कहे तुलसी हिरदे सुनु काना । ममता बढ़ी बढ़े अभिमाना ॥
यह हिरदे सब जग बिस्तारा । चक्रवर्त कहो कौन बिचारा ॥
बढ़ बढ़ गये राज मद माहीँ । इंद्र पदी लेने को चाही ॥
जब ममता ने मारि गिराया । तन मक्कड़ यह योँ बिधि पाया ॥
माया बड़ी चूहड़ी[१] होई । नर बस करन मोहनी सोई ॥
जो जो जोनि खानि मेँ डारा । जीव ममत माया बिस्तारा ॥

॥ दोहा ॥

हिरदे करम कराय के, देत पलीता बार[२] ।
अंदर आगि लगाय ज्योँ, दगन करे तन झाड़ ॥

॥ चौपाई ॥

यह ऐसे मक्कड़ तन पाया । हिरदे तो को बरनि सुनाया ॥
उष्मज जीव खानि योँ आवै । योँ आसा सुख भोग समावै ॥

(हिरदे बाच)

इक हिरदे संदेह उठावा । स्वामी भर्म एक मोहिँ आवा ॥
उष्मज से नर तन जिन पावा । संत चरन के पद परभावा ॥
ऐसे बरनि कही तुम बानी । यह दरसावो भिन भिन छानी ॥
नर तन मेँ लच्छन दरसावो । लच्छ अलच्छ सभी समझावो ॥
रहनि गहनि कौने बिधि होई । सो स्वामी कहो बरनि बिलोई ॥
उष्मज खानि लच्छ बिस्तारा । नर तन मेँ किन कस कस धारा ॥

॥ सोरठा ॥

खानि लच्छ परभाव, नर तन मेँ कस बूझिया ।
संसे समझ उपाव, बरनि कहो सब भेद यह ॥

(१) भगिन । (२) जलाना ।

अज्ञान का रूप और लक्षण

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह खानि सुभाऊ। दो तत दुर्गम पाँच तत माहूँ ॥
बुद्धिहीन जड़ता के माहीं। तन छूटे रस खानि सुभाई ॥
जक्त माहिं बड़ भक्त कहाई। माला कंठी अधिक सुहाई ॥
चंदन तिलक लगावे खोरी। झूँठा ज्ञान करे बरजोरी ॥
दसन[1] बहुत बड़ बदन[2] भयाना[3]। गुरु के बचन सुने नहिं काना ॥
गुरु बानी कबहूँ नहिं माने। सुने न कभी न हित पहिचाने ॥
गुरु को मेटि करे अधिकाई। निंदा करे गुरुन की भाई ॥
बातें करे मूढ़ की नाईं। ज्ञानी बनि कथि ज्ञान सुनाई ॥

॥ सोरठा ॥

यह अस बरन सुभाव, बर्तमान ऐसा रहे।
गहे कर्म तन पाय, सहाय सुरत समझे नहीं ॥

॥ चौपाई ॥

बातें कहत नाहिं सरमावे। ज्वाब स्वाल नहिं पूरा आवे ॥
पाप अँदर मुख भाखे दाया। सो जिव जम के बंधन सहिया ॥
नाक बड़ी सूवा की नाईं। पीरे नैन माहिं सुरखाई ॥
रति[4] करने चोरी से जावे। कहे कोइ लाख सरम नहिं आवे ॥
लम्बे पाँव परखिये सोई। अँगुठा से अँगुरी बड़ होई ॥
कान सुने स्वारथ की बाते। परस्वारथ के डगर[5] न जाते ॥
हाँसी करे और की मीठी। कहते ज्वाब बँधे मुख सीठी ॥
लेत पराया देत न भावे। माँगे जब लड़ने को जावे ॥

॥ दोहा ॥

हिरदे यह लच्छन सुनो, गुनो गिरा के माहिं।
तन मन भीतर और है, कहते और बनाय ॥

---

(१) दाँत। (२) चिहरा। (३) भयानक (४) मैथुन (५) रास्ता।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी इक संसै आई । मोरे भर्म भया मन माहीँ ॥
संत चरन मेँ जीव कुचाना । तुमने कहा भया नर जामा ॥
यह बिसमय[1] भइ अंतरजामी । स्वामी कहनि परख पहिचानी ॥
संत चरन मेँ जीव खुँदाना । भयानर बरनन और बखाना ॥
उष्मज से नर की भई काया । उनका बरनन बरनि बताया ॥
यह बिचार करिमन के माहीँ । स्वामी सन्मुख आनि सुनाई ॥
यह सुन के मन भया अँदेसा । स्वामी भाखो सकल सँदेसा ॥
याकी मोहिँ तफसील सुनावो । बिधि[2] बचन समझ समझावो ॥

॥ दोहा ॥

संत चरन बड़ भाग से, मिले कहैँ सब संत ।
मोको सुनि संसय भई, बानी बचन बृतंत ॥

संत की अपरंपार महिमा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी हिरदे सुन लीजे । यह संदेह कभी नहिँ कीजे ॥
संतन की गति अगम अतोला । उनके बानी बचन अमोला ॥
उनका भेद कोई नहिँ पावे । कोटिन जन्म समाधि लगावे ॥
क्या जानेँ जग जीव बिचारे । खोजत बड़े बड़े सब हारे ॥
ब्रह्मा बिस्तु महेस कहावा । वह खोजत कहिँ पार न पावा ॥
वेदहु नेत नेत गोहरावे । औतारी कोइ पार न पावे ॥
यह का लखे जक्त जिव अंधा । मन तन जन्म काल के फंदा ॥
दृष्टि पड़े देखन मेँ सोई । वे अदृष्ट गति अगम अगोई ॥

(१) संदेह । (२) विस्तार ।

॥ दोहा ॥

संतन की महिमा सभी, कहते माहिँ लजाय ।
चरन आस सब कोइ करे, भागन से मिलि जाय ॥

॥ चौपाई ॥

वे हैँ सत्त पुरुष अबिनासी । हैँ सतगुरु पूरन पद बासी ॥
दृष्टि देह देखन में नाहीँ । हैँ अदृष्ट गति अगम अथाही ॥
उनकी गति सूछम समझाऊँ । हैँ अरूप रूप नहिँ नाऊँ ॥
सूरज तेज बड़ा जग माहीँ । उनसे अधिक तेज कोइ नाहीँ ॥
कोटि सूर इक रोम लजावे । संतन की महिमा अस गावे ॥
और कहाँ लगि बरनि बताऊँ । थोड़ी कहन माहिँ समझाऊँ ॥
कोटि सूर इक रोम कहाई । ऐसे रोम करोड़न भाइ ॥
कहँ लग हिरदे बरनि बताऊँ । यह सुनु सौदा अगम अथाऊँ ॥

॥ दोहा ॥

यह अथाह के थाह को, कोटिन करे उपाव ।
सतसँग बिन जाने नहीँ, दया दीन परभाव ॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे सतगुरु का पद भारी । यह कहा जाने जक्त अनारी ॥
किर्मि कीट उष्मज के माहीँ । जड़ता ज्ञान खानि में आहीँ ॥
यह कहा जाने जीव अचेता । बुधि अबूझ हिरदे नहिँ हेता ॥
चेतन तन में चेत न पावे । जड़ता तन की कौन चलावे ॥
जड़ तन खानि तीन बिस्तारा । चौथे नर देही निस्तारा ॥
तन अचेत सुधि अपनी नाहीँ । पसुवत में नहिँ ज्ञान समाई ॥
संत कृपा बिचरन परभाऊ । यह अचेत वे सहज सुभाऊ ॥
उन के मन इच्छा में नाहीँ । चले जातु हैँ सहज सुभाई ॥

॥ दोहा ॥

मरत जीव जो चरन से, सहज चलत के माहिँ ।
जो खुँदाय कुँच के मरे, छूवत नर तन पाय ॥

संत चरन परताप से, खानि राह रुकि जाय ।
नर तन में सतगुरु मिलें, मेटैं सकल सुभाय ॥

॥ छंद ॥

हिरदे सुनो गति संत की. बेअंत कोइ कहँ लग कहे ।
तन मन सुरति धर ध्यान करिके, लौ लगी चरनन रहे ॥
कहूँ और ठौर न छूट छटके, भटक भव भ्रम ना गहे ।
जो चरन लीन अधीन होइ कर, चीन्ह चित से ना बहे ॥
पसु कीट किर्म कदाचि कोइ जिव, जान नर तन वे भये ।
चित हित हिये में साँचि उपजे, सुरति तन मन से लये ॥
अस बचन बाक बिचार मन में, संत सब ऐसी कहे ।
हिरदे समझ सब सोध खोली, बोध बोली को गहे ॥

॥ सोरठा ॥

जो जिव चरन निवास, और आस बिसराय के ।
सत मत सूरत साथ, नित प्रति रहे लौ लाय के ॥

॥ चौपाई ॥

जिन हिरदे यह बचन बिचारा । कबहुँ न रहे काल की जारा ॥
नर तन में सतगुरु पद सेवे । संत चरन चित से लौ लेवे ॥
चरन छुवे छिन छिन में भाई । आठ पहर रहे लगन लगाई ॥
मन में बास बसे नहिं औरी । संत दया से बंधन छोरी ॥
जड़ चेतन बंधन की गाँठी । अंदर खुले भरम की टाटी ॥
मैला मन साबुन से धोवे । गहि गुरु ज्ञान हिये में जोवे[1] ॥
परम प्रकास भास दिन राती । दीपक ज्ञान ध्यान बहु भाँती ॥
अगम अनैन नैन से न्यारा । सो जाने संतन का प्यारा ॥

॥ सोरठा ॥

भक्ति पदारथ सार, यह नर जग जाने नहीं ।
जग के विषम विकार, सो सब समझे साँच करि ॥

(१) ढूँढे ।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी इक संसय आई। हिरदे को कहो समझि सुनाई ॥
उष्मज चरन भई नर देहा। नर तन में नहिँ संत सनेहा ॥
यह कारन कहो कौन बिचारा। भर्म खोलि कहिये निरबारा ॥
चित संदेह जाय नर देही। उनके बचन कान नहिँ लेई ॥
सच बिस्वास नहीँ मन आवे। कहो स्वामी यह कौन प्रभावे ॥
महिमा संत सनातन गाई। क्योँ याको बिस्वास न आई ॥
सब अवतार भये जग आई। राम कृस्न दोउ नर तन माहीँ ॥
संत चरन की महिमा गावेँ। सब पुरान ऐसे गोहरावेँ ॥

॥ सोरठा ॥

सुनेँ कथा नित कान, ब्यान बरन बूझेँ नहीँ।
संतन को जस जान, गायेँ महातम सभी सब ॥

चलनी ज्ञान और सूप ज्ञान

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह देखत भूला। ठगिठगि रचा काल तजि मूला ॥
सुनि सुनि के सब बूझ बुड़ाई। खेत रहा खर नाज गोड़ाई ॥
खेत रहा खर से भरि भाई। वा में नाज कौन उपजाई ॥
यहि बिधि ज्ञान सुने नर लोई। नाज निकाइ[1] खर खेती बोई ॥
जैसे चलनी चून छनावे। चून सार गिरि चूकर[2] पावे ॥
यहि बिधि ज्ञान गहे जग सारा। तत्त बस्तु कोइ नाहिँ बिचारा ॥
ज्ञान मान की बड़ी मोटाई। भक्ति गरीबी कोइ न पाई ॥
संत चरन यासे नहिँ भावे। क्योँकर हिरदे साँच समावे ॥

(१) उखाड कर। (२) चोकर।

॥ दोहा ॥

सूप ज्ञान सज्जन गहे, फूफर देत निकार।
सार हिये अंदर धरे, पल पल करत बिचार॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे नर यह बड़े अभागे। सार छाँड़ि चूकर[1] में लागे॥
कहो वे फुलके[2] चहें बनाये। चूकर के फुलके किन खाये॥
यह जग चूकर रीति समाना। संत चून फुलके पर ध्याना॥
चून चीन्ह कर करें रसोई। या बिधि जग खावे सब कोई॥
चूकर में नहिं भूख नसावे। यहि कारन कहि कर गोहरावे॥
कोइ सज्जन जन परम सनेही। माने बचन करे हित वेही॥
अगम सुधा रस अमृत बानी। सो उनने गहे करि पहिचानी॥
संत बचन हिरदे अभिलाषा। रस बिसेष सज्जन ने चाखा॥

॥ दोहा ॥

अमृत रुपी संत के, बचन गहे सुन कान।
सो सज्जन सत रीति में, हित चित करत प्रमान॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह खानि सुभावा। भइ नर देह जड़ तन से आवा॥
देह धरे छूटे जस खाना। जाका जैसे उपजे ज्ञाना॥
नर तन पाय कहो का कीन्हा। लच्छन तो जड़वत के लीन्हा॥
कर्म प्रभाव ज्ञान उपजावे। सत गुरु बिन को ज्ञान सुझावे॥
जो रँग पगे वही खसबोई[3]। निकरें तदपि तरंगें सोई॥
भँवर न करे चंप पर बासा। वह सुगंधि सँग रहे उदासा॥
ऐसा मन भँवरे की नाईं। नीकी तज फीकी पर जाई॥
नीम कीट[4] जस नीम पियारा। विष को अमृत कहे गँवारा॥

(१) भूसी। (२) पतली रोटी। (३) खुशबू, सुगंधि। (४) नीम का कीड़ा।

॥ दोहा ॥

बिष रँग के सँग में पगे, किया न मन को तंग ।
संग मिलै मधु मालती, जब निकसै कछु रंग ॥

॥ चौपाई ॥

मन भँवरा सतसँग जब पावे । हिरदै बिषय बास जब जावे ॥
ज्योँ हलवाई करे जलेबी । अंदर खैंच पिये रस गैबी ॥
अस संगति रस पिये अघाई । जब यह मन की दुरमति जाई ॥
संगति में सुनि देइ न काना । जासे नर तन में भरमाना ॥
संगति करे रीति नहिँ जाना । कस कस छूटे मन अभिमाना ॥
यह हिरदे योँ नर तन हारा । योँ मद ममता ने जग मारा ॥
बिन सतगुरु नहिँ कर्म नसाई । जो कदाचि करे कोटि उपाई ॥
वे सूरज यह किरनि कहावे । भुमि भास तजि रबि में जावे ॥

॥ दोहा ॥

सूरज बसे अकास में, किरनि भूमि पर बास ।
जो अकास उलटे चढ़े, सो सतगुरु के दास ॥
अललपच्छ[1] का अंड ज्योँ, उलटि चले असमान ।
त्योँ सूरति सत सजन की, आठ पहर गुर ध्यान ॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह सज्जन रीती । जोई असज्जन करे अनीती ॥
सज्जन हंस मुक्ति पद पावे । बग बपुरा मछरी को चावे ॥
ऐसे असज्जन सज्जन लेखा । उभय[2] बीच कछु कह्यो बिबेका ॥
यह जग अंध असज्जन जाने । संतन का मति कहा पिछाने ॥
योँ भई अंध धुंध जग माहीँ । मनमत ज्ञान कहेँ गोहराईं ॥
साख महातम की पढ़ि गावैँ । फूटे हिया समझ नहिँ लावैँ ॥
कर्म कांड पर लीन्ह घटाई । जो उन कही समझ नहिँ पाई ॥
योँ अज्ञान बसा जग माहीँ । कछु कछु खानि सुभाव रहाई ॥

---

(१) देखो नोट पृष्ठ ८ में । (२) दो ।

॥ दोहा ॥

योँ हिरदे अज्ञान में, सब जग रहा भुलाय ।
बिन सतगुरु उपदेस के, जुग जुग खेई[1] खाय ॥

(हिरदे वाच)
॥ चौपाई ॥

स्वामी अगम सुगम समझाई । मन मोरे में खूब समाई ॥
अंडज उष्मज के कहे बैना । स्वामी बचन सुने सुख चैना ॥
अब वह कथा कहो समझाई । अचल खानि का भेद बताई ॥
नर अस्थावर[2] में तन पाया । जब बैराट प्रथम से आया ॥
जब की करनी कहो बनाई । नर तन से अस्थावर माहीँ ॥
तीस लाख अस्थावर जाती । उत्पति बरन मरन बहु भाँती ॥
सो लेखा मोको समझावो । कस कस भयो भेद बतलावो ॥
ऋषी मुनी जप तप बहु कीन्हा । वाहि समय भया अचर अधीना ॥

॥ सोरठा ॥

ऋषी मुनी जप तप करें, जग कस कीन्ह बिचार ।
नर तन तो तबही हता, कस चर अचर समान ॥

नर को स्थावर योनि कैसे मिलती है

(तुलसीदास वाच)
॥ छंद ॥

हिरदे सुनो गुन वेद ने, जग बाँधि कर रचना करी ।
मुनजन ऋषी तप जोग करि, जग बोध नर हिरदे धरी ॥
कह्यो ज्ञान गुझ[3] बैराग बानी, बचन सुनि गुन में परी ।
गुन गो[4] गिरा[5] वस बाँधि करिके, भर्म की आसा भरी ॥
महातम कहे फल करम के, जस धरम की धारन धरी ।
सुभ असुभ अंक बढ़ाय करि, जित्र जन्म जग बुद्धी हरी ॥

---

(१) विष्टा । (२) जड सृष्टि अर्थात ऐसी सृष्टि जो चल फिर नहीं सकती । (३) गूढ । (४) इन्द्री । (५) बानी ।

कोइ बोध सोधि न आप अस, जस नारियर भीतर गरी ।
जैसे बिधी बादाम मेवा, मद्ध में मींगी भरी ॥
कोइ संत ने यह अंत अंदर, देख कर सूरत करी ।
जग रचन के बस बास मन तन, तरँग में सूरत जरी ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान जोग बिज्ञान तप, सब मुनि कीन्ह प्रमान ।
जक्त आस बिस्वास दे, कर्म ईस परधान ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे पुत्र सराफ सिखावे । कौड़ी से पैसा परखावे ॥
ज्योँ गुड़ियाँ लड़की लौ लावेँ । साँच पिया मिलने को चावेँ ॥
साँचे पिया मिले नहिँ भाई । झूठे काल दीन्ह उरझाई ॥
पिय तजि के दधि बेचन आईँ । जब से गुजरी[1] नाम कहाईँ ॥
जब गोपाल गौ पालन लागे । रस दधि मोल बिकन जब लागे ॥
मन गोबिँद गौ इंद्री माहीँ । नाद बिंद दधि बेचन आइँ ॥
सो बिँद ने बिंदाबन कीन्हा । तन बैराट समझि जिन लीन्हा ॥
यह कोइ भेदी भेद बतावे । जब रचना की बिधि को पावे ॥

। दोहा ॥

योँ रचना यहि बिधि भई, छूटा मूल मुकाम ।
स्याम कंज के बीच मेँ, आय रहे निज धाम ॥

॥ चौपाई ॥

जग ब्योहार कर्म की बाजी । भूले मुल्ला पंडित काजी ॥
पढ़ि पढ़ि के सब खोज लगावेँ । पढ़ने पार भेद नहिँ पावेँ ॥
मुरसिद गुरू मिला नहिँ भाई । परखे बिना सराफी नाहीँ ॥
ज्योँ सराफ रुपिया को परखे । गुरु देँ दृस्टि हिये मेँ हरखे ॥

---

(१) गुजरी अर्थात गूजर जाति की स्त्री जो पछाँह में दूध दही बेचती हैं और दूसरे उसके अर्थ "गुजरी हुई" या "पतित" के होते हैं जिससे इस चौपाई में खूबसूरती आजाती है ।

पाट कीट[1] की होत हगारा। गुरु लछ्छ से पीतंबर पारा[3] ॥
अस गुरुज्ञान मिले जब भाई। कर्म कीट से लेइ छुटाई ॥
परथम सतगुरुपद नहिँ चीन्हा। जब बैराट कर्म बस कीन्हा ॥
सो नर धरि आतम यह देही। छूटा गुरु पद सब्द सनेही ॥

॥ दोहा ।

सूरत भटकी भर्म में, सब्द गुरू का ध्यान।
आप अमर पद को तजा, कहँ पावे बिसराम ॥

॥ चौपाई ॥

कुंदन से सोना कर दीन्हा। सोना खोँट खार से कीन्हा ॥
या बिधि जीव कर्म के खारा। क्योँकर के पावे निरबारा ॥
परथम नर पिंडज की काया। फेरि पिड पसु जोनि में आया ॥
अंडज कर्म जोग अनुसारा। उष्मज जब से आइ तन धारा ॥
अस्थावर तत एक रहाई। कर्म जोग करनी समझाई ॥
कुंदन से अस सोन कहाया। खार कर्म जिव खोँट मिलाया ॥
अब यह कथा कहूँ बिस्तारी। कुंदन सोन खोँट भया भारी ॥
दीपा मुनि करे जोग अभ्यासा। जोजन एक द्वारिका पासा ॥

॥ दोहा ॥

दीपा मुनि जोगी कहे, रहे द्वारिका पास।
जोजन भरि वहि नगर से, करते तप अभ्यास ॥

॥ चौपाई ॥

यह गुजरात द्वारिका नाहीँ। वह बूड़ी है जल के माहीँ ॥
महातम बड़े मुनिन के माहीँ। जिन सास्तर कीन्हे जग माहीँ ॥
तप जप जोग भया परवेसा। यह सास्तर कीन्हे उपदेसा ॥
कर्म उपासना ज्ञान दृढ़ाया। या में सब जग को उरझाया ॥
ज्ञान कांड मारग मत कीन्हा। फिर नर से नरदेही लीन्हा ॥

---

(१) रेशम का कीडा। (२) दृष्टि। (३) बनाया।

जिन उपासना आस बिचारी । मृग पसुवत अद्यादिक धारी ॥
कर्म कांड जो जीव बिचारे । सो भये अचर खानि में सारे ॥
जिन तप जोग किया मुनि राया । परथम तिन मुक्ती को पाया ॥

॥ दोहा ॥

मुक्ति जो पूछे मुक्ति को, मेरी मुक्ति बताय ।
जो घट चीन्हे आपने, मुक्ति मुक्ति होइ जाय ॥

॥ चौपाई ॥

भई प्रथम रचना में काया । जबका बरनन बरनि सुनाया ॥
कर्म अकर्म कीन्ह जब काया । जब नर से अस्थावर आया ॥
जंगम[१] भया काठ का कीड़ा । तज जंगम अस्थावर पीड़ा ॥
कुंदन अंस आतमा आई । तन संचय में सोन कहाई ॥
कर्म खार सास्तर उपजाया । या बिधि सोना खोट कहाया ॥
जब न्यारीगर[२] सतगुरु पावे । सोना खार खोँट अलगावे ॥
तब निस्कर्म आतमा होई । गुरु किरपा से मारग जोई ॥
बूंद सिंधु मिलि भया अकेला । सो कुंदन सतगुरु का चेला ॥

॥ दोहा ॥

यह मारग गुरु मेहर से, चेला चिन्ह बिचार ।
निराधार इक-रस रहे, कुंदन चेला सार ॥

॥ चौपाई ॥

कीड़ा कीट बीज बिस्तारा । योँ उपजे अस्थावर सारा ॥
वही आस अस्थावर बासा । काठ घुनै कीड़ा रहै पासा ॥
यह इनकी उत्पति समझाई । कीड़ा रहै काठ के माहीँ ॥
जो रस भास करै परकासा । अंत जहाँ जिन लीन्हा बासा ॥
पूरब प्रीति काठ सँग कीटा । सोई स्वाद लागु जेहिँ मीठा ॥
इच्छा आसा देत घुमाई । जहँ मन लीन[३] देह तस पाई ॥

(१) ऐसी सृष्टि जो चल फिर सकती है। (२) थैली। (३) सोना को साफ़ करने वाला। (४) आशक्त।

चार खानि उतपति रस माया। चर और अचर चराचर खाया ॥
उपजे मरे धरे फिर देही। आसा बँध बस बास सनेही ॥

॥ दोहा ॥

जुगन जुगन जड़ जीव यह, बिष बिसेष रस खाय।
भँवर पुहुप गुंजार ज्यों, मायहिँ माहिँ बिलाय ॥

स्थावर से एक दम नर तन कैसे मिल सकता है और मनुष्योँ की बुद्धि की दशा

॥ चौपाई ॥

अब आगे का सुनो बिचारा। काठ कीट बंधन निरबारा ॥
जिन आसा अस्थावर माहीँ। सो रहे कीट काठ में जाई ॥
योँ बंधन बिस्तार बताया। अब छूटन का सुनो उपाया ॥
कीट छाँड़ि नर देही पावा। जो जेहि काठ का पलंग बनावा ॥
बना सिँघासन आसन संता। जो वहि माहिँ कीट नर अंता ॥
कीट काठ में जो रहे भाई। जो जन नर भये चरन छुवाई ॥
सो सुतार तन भया बढ़इया। कीट काठ से संत कढ़इया ॥
जस बुधि रही काठ के माहीँ। जस लच्छन भाखूँ समझाई ॥
छिनक[1] बुद्धि भरमावे कोई। तुरत भर्म ले आवे सोई ॥
छिनक बुद्धि मति हीन विचारे। सत मत में जग रीति निहारे ॥

॥ दोहा ॥

काठ बुद्धि काया धरी, कीट सुभाव निहार।
सत मत में पाया नहीँ, उलटे करत बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

जो जिव अचर खानि से आया। धरि नर देह चरन जिन पाया ॥
करनी खानि माहिँ कहा होई। इक तत करनी जड़ता जोई ॥

---

(१) एक छिन में।

पाँच तत्त करनी करि हारे । एक तत्त कहो कौन उबारे ॥
जो कोइ संत भूमि जहँ बैठे । जीव भूमि के कर्म उलेटे[1] ॥
जीव छुड़ाय योनि से भाइ । संत भूमि जहँ चरन छुवाई ॥

[महादेव पारबती की कथा]

एक समय संकर और गौरा । चले जात मारग बड़ भोरा ॥
संकर बड़ी डंडवत कीन्हा । पारबती मन भया मलीना ॥
होइ मलीन संकर से पूछी । काहे करो डंडवत छूछी ॥
देवल देव मनुस नहिँ होई । कीन्ह डंडवत दीख न कोई ॥
जब संकर ने बचन उचारा । बड़ी भूमि के भाग अपारा ॥

॥ दोहा ॥

पारबती या भूमि का, क्या कहूँ बरनन भाग ।
दस हजार के बाद[2] यहँ, संत रहे यहि जाग[3] ॥
सुनु हिरदे कहुँ संत की, महिमा अगम अपार ।
कर प्रनाम वहि भूमि को, संकर बारम्बार ॥

॥ छंद ॥

हिरदे बड़े वहि भाग भुमि, जहँ संत के चरना पड़े ।
संकर करी परनाम अति सुख, सीस भूमी पर धरे ॥
बारम्बार करि डंडवत, जिन नीर से नैना भरे ।
गदगद पुलक सब गात कहुँ क्या, हरष हिये से ना टरे ॥
संकर बिकल बेहाल हिरदे, कहत में छाती भरे ।
रहि गै कहें यहँ संत आगे, सहसदस बर्स के परे ॥
गहे चरन भूमि पुनीत जो जिव, संत ने कारज करे ।
हिरदे हरष मन तरक तोले, काज संतन से सरे ॥

(१) पलट दिये । (२) पीछे अर्थात् बीते हुए काल में । (३) जगत ।

॥ दोहा ॥

संत चरन अति बहुत बड़, जानत चतुर सुजान ।
जो संतन हित ना करै, सो नर पसू समान ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

अस्थावर नर देह अलेखा । भइ कस साहब कहो बिसेखा ॥
कहो करनी उन कौन बनाई । पुनि फिर कस नरदेही पाई ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

अस्थावर जिव जड़ अस्थूला । कौन कौन कहुँ या की भूला ॥
जुगजुग कल्प कल्प कहूँ लेखा । कहँलग बरनन कहूँ बिसेखा ॥
की कोइ समय जोग परभाऊ । की कोइ संत कृपा भई काहू ॥
फूल पात फल पान खवाये । अस्थावर अघादिक आये ॥
बिचरत कोई संत चलि आये । भावभोग जिन रुचिर लगाये ॥
जो जो बृच्छ पान फल बीड़ा । जिन जिन पायो मनुस सरीरा ॥
सो जेहि के लच्छन दरसाऊँ । लच्छअलच्छ दोऊ समभाऊँ ॥
गुन औगुन जस जस करतूती । भाखूँ होनहार मजबूती ॥

स्थावर से नर तन में आये हुये जीवों का लक्षण और सुभाव

॥ दोहा ॥

अस्थावर की खानि का, नर तन माहिँ सुभाय ।
दाव पेच जस जस वही, बरनि कहूँ अलगाय ॥

॥ चौपाई ॥

हाँपत चले राह के माहीँ । बैठत उठे पीर अधिकाई ॥
वाई रहे वतीसो¹ माहीँ । बाइ चार नित प्रतिहिँ सताई ॥

(१) बत्तीस दाँत ।

पँच हथियार सवारी चावे। घोड़ा चढ़े हँफन सी आवे ॥
जामा फेँटा पाग सुहावे। नित दरबार करन को चावे ॥
जीव मारि मन आनँद माहीँ। औँके खाय बहुत सुख पाई ॥
पूजा सेवा अधिक सुहाई। तीरथ बर्त करे मन लाई ॥
और उपासना नेम बिचारै। ब्राह्मन मिलै चरन पर वारै ॥
चुगली सैन करै बहु भाँती। हिरदे माहिँ बसै दिन राती ॥
हानि लाभ जिनके बहु नीके। नीका निरखि करे मन फीके ॥

॥ दोहा ॥

यह अस्थावर खानि के, हिरदे लच्छ सुभाव।
और बरनि आगे कहूँ, मन के छलबल दाँव ॥

॥ चौपाई ॥

अब खाने का स्वाद सुनाई। दूध भात नीके मन लाई ॥
उरद दाल फुलकी बहु भावे। माहिँ खटाई मिरच मिलावे ॥
कढ़ी बरी तरकारी माहीँ। यह सब स्वाद अवस कर चाही ॥
मीठा मिले चोरी से खावे। देखे खात तो हाथ छिपावे ॥
जो कोइ माल पराया आवे। लेने को बहु मन ललचावे ॥
कौड़ी खरचत प्रान गँवाई। वैसेइ कोइ दे आन खिलाई ॥
नाच तमासा देखै जाई। मन मेँ उमँग रहै बड़ भाई ॥
हरि चर्चा मेँ नीँद जुड़ावै। जो जगवै तेहिँ मारन धावै ॥

॥ सोरठा ॥

सुनु हिरदे यह भेद, कर्म सुभाव लच्छन कहूँ।
आगे सुनो निषेद, जो जो भाखूँ बाक जस ॥

॥ चौपाई ॥

आमै सामै[1] देत लड़ाई। लबराई[2] की बात बनाई ॥
जब कोइ लड़े देइ हँसि तारी। अपने अवगुन नाहिँ बिचारी ॥

(१) वक्त, बेवक्त। (२) झूठ।

माया मोह बहुत मन लावे । कधि रोवे कधि मंगल गावे ॥
जो कधि हानि होय घर केरी । तो मारे सब घर को घेरी ॥
जूझ झपट करि रहे रिसाई । खाने को कहे गुसा[1] कराई ॥
जो कोइ घर में बड़ा कहावे । जाकी बात नेक नहिँ भावे ॥
उत्तर पर प्रति-उत्तर देई । लोचन रूख[2] सनेह न जेही ॥
मूल मुलाजा[3] नेक न लावे । अपनी खरी बात ठहरावे ॥

॥ दोहा ॥

यह अस्थावर खानि के, अस सुभाव जड़ताय ।
अपनी अपनी कहत हैं, पूरब अंग प्रभाय ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हिरदे कहे स्वामी समझाई । सो सब कहन समझ में आई ॥
अचर खानि का कहा बिबेका । सो सब बैठा मन में लेखा ॥
नर पिंडज पसु पिंडज आया । यह पसु पिंड धरी कस काया ॥
यह हिसाब मोको समझावो । स्वामी दया दीन दरसावो ॥
कौन जोग परभाव कहाया । ता से पसु पिंडज में आया ॥
सो बरतंत कहो समझाई । जासे चित की संसय जाई ॥
कर्म कांड जब हता न कोई । करनी कहो कौन सी होई ॥
देव पिंड पित्तर नहिँ पूजा । केहि कारन दुरमति में जूझा ॥

॥ दोहा ॥

सास्तर वेद पुरान यह, कब से संग सहाय ।
हाय हाय बंधन पड़े, लख चौरासी माहिँ ॥

नर से पशु योनि कैसे पाता है

जड़ चेतन जब गाँठि बँधानी । इच्छा नारि भई पटरानी ॥
इन अपना परिवार बसाया । सार तेज का भास नसाया ॥
जब नर हुआ जगत का रासी[1] । राज करे मन इच्छा बासी ॥
जो इच्छा मन उठे तरंगा । जस जस खेल करे परसंगा ॥
उधर आस सब दीन्ह छुटाई । इधर तरँग मन इच्छा माहीँ ॥
जब कछु रहे नाहिँ बिस्तारा । नर का नर होवे करतारा ॥

॥ दोहा ॥

इच्छा रानी सँग हती, आप रहे करतार ।
जो तरंग मन में उठे, वैसा करे बेवहार ॥

बेदोक्त करनी

(पिंडदान इत्यादि) मनुष्य को तन की आसा धराती है

॥ चौपाई ॥

ऐसे कई दिवस गये बीती । तेहि पाछे भइ ऐसी रीती ॥
ब्रह्म सृस्टि सब जक्त कहावे । उतरे नहिँ नहिँ बंधन आवे ॥
जब बेदन का किया बिचारा । ओंकार जब सब्द निकारा ॥
सो भया सब्द तिरकुटी माहीँ । बेद नाद ने योँ उपजाई ॥
जब जब बेद किया बिस्तारा । कर्मकांड करनी निरबारा ॥
अस बेदन ने कही पुकारी । यासे सृस्टि बही चौधारी ॥
ब्रह्म सृस्टि का तेज उड़ाई । जब नर सृस्टि भई सुनु भाई ॥
जब रहि ब्रह्म सृस्टि बरहाला[2] । परमहंस मति जब से चाला ॥
वही समय बेदांत बतावे । यह नर मनुष ब्रह्म ठहरावे ॥
ब्रह्म तेज परथम था भाई । तेज गये नर मनुष कहाई ॥
दिब्य ज्ञान हिरदे रहे बासा । जब बंधन से ब्रह्म खुलासा ॥
सो बेदांत बाक बतलावे । नर बुधि ज्ञान ब्रह्म-ठहरावे ॥

---

(१) रसिया । (२) क़ायम ।

॥ दोहा ॥

ब्रह्म सृस्टि पहिले हती, जब रहे ब्रह्म प्रमान ।
नर सृस्टी जब से भई, बेद बचन उरझान ॥

॥ चौपाई ॥

नर सृस्टी जब से भइ भाई । केवल कर्म बेद अधिकाई ॥
नर घर अधर तजे जगमाहीँ । करनी कर्मकार उपजाई ॥
यासे नर तजि पिंडज बासी । पसुवत देह धरै अबिनासी ॥
पसु पिंडज ऐसे उपजाया । नर तजि देह पसू में आया ॥
पिंडज सब जो जात कहाई । फिरि फिरि रहे जहाँ लगि भाई ॥
गिनती का कछु अंत न छेवा[1] । यह सब संत बतावैं भेवा ॥
हिरदे जग याको कहा जाने । संत काज सज्जन को छाने ॥
वह बिबेक रस पिये बिचारी । छूटि भर्म रुचि की अधिकारी ॥

॥ दोहा ॥

नर पिंडज पसु पिंड में, योँ अस कियो प्रबेस ।
करनी कर्म कराय के, बेद बरन जग भेस ॥

॥ चौपाई ॥

षटदर्सन सनमान बढ़ाये । यह सब बेद मते में आये ॥
जोगी जती सेवड़े[2] भाई । सन्यासी दुरवेस कहाई ॥
और जंगम[2] इकजाति कहाई । ऐसे षट दर्सन दरसाई ॥
इन से भये छानवे पीछे । सो प्रवेस पाखँड जग बीचे ॥
यहि पाखँड ने जक्त भुलाया । अपनी पूजा बरनि बताया ॥
याके संग सृस्टि सब लागी । भव के भूत भये अनुरागी ॥
किरिया करन मरन जब लागे । बाम्हन पिंड करे जग आगे ॥
पिंड सरीर आसा बँधवाई । योँ भया जीव बंध के माहीँ ॥

(१) हद। (२) भेषों के फ़िरकों के नाम।

॥ दोहा ॥

पिंड आस बँधवाय के, अबिनासी रहे छाय ।
अपनी आदि बिसारि के, कोइ पीछे नहिँ जाय ॥

॥ चौपाई ॥

योँ परबेस खानि का लेखा । बूझै को जो करे बिबेका ॥
योँ आसा पिंडज की काया । कर्म पिंड पिंडज मेँ लाया ॥
पिँड कर पिंड बँधाई आसा । योँ पिंडज पसु तन मेँ बासा ॥
यह सब बेद कीन्ह उपचारा[1] । बाँधे सभी सिरन पर भारा ॥
यासे नर पसुवत मेँ आया । दुर्लभ तजि जग मेँ भर्माया ॥
पसुवत ज्ञान हीन है काया । यह प्रभाव से बहुत भुलाया ॥
एक रोग की औषधि नाहीँ । पचिपचि मरै हकीम कहाई ॥
पावे संत चरन निरबारा । और नहीँ कोइ भाँति उबारा ॥

॥ दोहा ॥

पसुवत पिंडज अंग को, नहिँ कछु ज्ञान समाय ।
सँग अज्ञान जड़ देहि मेँ, औषधि लगे न ताहि ॥

पशु से नर चोला फिर कैसे मिलता है

॥ चौपाई ॥

योँ बिधि हिरदे कारज नाहीँ । दया संत की जो बनि आई ॥
जब कभि संत चरन चलि आये । किरपा कीन्ह दीन दिल लाये ॥
जब कबहूँ कोइ जीव जो दाया । चरन धूरि रज पावन[2] पाया ॥
चारा चरत चरन पड़ि गयऊ । वहि प्रताप से नर तन भयऊ ॥
उड़ी रज धूरि चरन की भाई । किनका उड़ि लागै तन माहीँ ॥
दधि घृत मट्ठा और असवारी । रज पावन नर देहि सँवारी ॥

---

(१) करतूत । (२) पवित्र ।

कहुँ मारग चलते परछाइ । पड़ी जाय जिव सुफल कहाई ॥
पिंडज से यह यों तन पावे । मनुस सरीर सुभग जब आवे ॥

॥ दोहा ॥

संतन की यह मेहर से, जो कछु होय उपाव ।
नाहिँ और तादाद की, बात बिना बरनाव ॥

॥ चौपई ॥

यह अब पसुवत से नर आवाँ । जाका सुनो सकल परभावा ॥
गुन लच्छन लख लीक लखाऊँ । जस जस परबल प्रकृत सुभाऊ ॥
बैरागी होइ उन्मति[1] धारी । करै ज्ञान जो बेद बिचारी ॥
जग ब्योहार हरख बहु माने । उजले बस्तर सुभग सुहाने ॥
सौड़[2] सुपेदी पलँग बिछाई । पान सुपारी बीड़ा खाई ॥
जो सन्मान करे कोइ आई । बहुत भाँति से सीस नवाई ॥
बोलै बचन मीठ मधुराई । करै सनेह छाँड़ि चतुराई ॥
काँचे बचन बाक नहिँ काढ़ै । प्रीति परस्पर नित प्रति बाढ़ै ॥

॥ दोहा ॥

पिंडज से जो नर भया, जाका यही सुभाव ।
और बहुत कहँ लग कहूँ, बरनन का परभाव ॥

॥ छन्द ॥

पिंड के प्रभाव पुनीत नर यह, देह पसुवत की धरे ।
बिधि वेद के मारग मते से, आप जिव बंधन पड़े ॥
जासे भई बहु खानि काया, ममत माया में मरे ।
गुरु ज्ञान बचन बिचार कहे कोउ, नेक हिरदय ना धरे ॥
बिन संत के नहिँ अंत पावे, खोजि के पचि पचि मरे ।
जिन पै कृपा भइ संत की, जब अंत के कारज सरे ॥
नहिँ और ठौर उपाव लागे, भाग कर्मन के भरे ।
हिरदे दया दिल संत बिन, नहिँ जीव को कारज सरे ॥

(१) मस्ती । (२) बिछौना ।

॥ दोहा ॥

संत चरन कारज सरै, हरै सकल बिष व्याधि ।
साध सुरति चरनन रहै, टारै सकल उपाधि ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

नर की नर धर देही पाई । सो साहब कहो बरनि सुनाई ॥
सो बरतंत कहो बिधि लेखा । समझ पड़े बिधि बाक बिबेका ॥
करनी कौन कीन्ह करतूता । क्योंकर कीन्हा मन मजबूता ॥
की कोइ करतब के बसि पाई । की सतगुरु की दया बसाई ॥
की कोइ और रंग रस भावा । सो जा से नर देही पावा ॥
संतन की सब साख बिचारी । दुर्लभ सब कहें सब्द सिहारी ॥
सब सतसंग सुनावत संता । बिन सतगुरु नहिँ पावे पंथा ॥
अस अस बरनि कही सब बानी । सो साहब मोहिँ कहो निसानी ॥

॥ दोहा ॥

नर तन से नर होत है, बहुत कहें नहिँ होत ।
यह जग में बायब[1] सुने, बिन करनी कहें थोथ ॥

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी अचरज की बाती । को जाने यह समझ सनाथी ॥
भूत भवेस[2] अरन जिन कीना । उनकी सुरति कहाँ भइ लीना ॥
आगे कही भई वहि भाखे । सो सूरति रस कसकस चाखे ॥
कहँ को गये कहा उन पाया । ऐसी कहो कहँ दृस्टि समाया ॥
यह कहुँ कहन जक्त नहिँ जाना । दृस्टि न पड़ी सुनी नहिँ काना ॥
यह बरनन भिनभिन समझावो । हिरदे के दिल को दरसावो ॥
जो परबोध मोद मन आवे । हिरदे की तब सुरति जुड़ावे ॥
कई दिवस का सोच समाना । सो निरवार कहो विधि नाना ॥

(१) अचरजी । (२) भविष्य ।

॥ दोहा ॥

कौन करसमा[१] देखि के, सब कहैं बिधी बयान ।
भिन भिन भाखो उधर की, बाचा बचन प्रमान ॥

नर का पुनर्जन्म नर तन में क्योंकर होता है

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बरन बयाना । भाखूँ संत बचन परमाना ॥
पूछी तैं नर से नर भइया । यह प्रतिबाकबचन तैं कहिया ॥
सुनु याकी बिधि कहूँ बुझाई । परथम से कहूँ बरनि सुनाई ॥
बुंद सिंध से निर्मल आया । चोला पहिर धरी नर काया ॥
काया के गुन व्यापैं नाहीं । या बिधि रहै बदन के माहीं ॥
आसा तन बंधन नहिँ भासी । रस माया से रहै उदासी ॥
जग का राग त्याग बैरागा । रहे अंतर इन से मन भागा ॥
नहिँ संग्रह तजि त्याग कहाई । उभै बंध बस के नहिँ भाई[२] ॥

॥ दोहा ॥

आस बास बस ना रहे, निर्मल अंग उदोत[३] ।
पोत परख अपनी रहे, ज्यों दरियाव का सोत ॥

॥ चौपाई ॥

जैसे बादल जल भरि लाया । ज्यों अकास भुइँ पर बरसाया ॥
भुइँ पर बुंद पड़ा जल जेता । गया तड़ाग[४] सलिता[५] में तेता ॥
जो समुद्र से बाहर बरसा । जल भूमी मिलि मैला परसा ॥
जो जो बुंद पड़ी समुदर में । निरमल बुंद धसा अंदर में ॥

---

(१) कौतुक, इशारा । (२) वह गृहस्थाश्रम को छोड़कर भेष नहीं लेते क्योंकि उन के मन का बंधन किसी में नहीं है । (३) प्रकाश । (४) तालाब । (५) नदी ।

यह नर तन यों ऐसा पाया। जैसे बुंद सिंध में आया ॥
जो जल भूमि पड़ा सुनु भाई। मैला नीच कींच के माहीं ॥
मल अरु मुत्र पृथ्वी पर पड़िया। वे वे मिलि मन अंदर भरिया ॥
जब निरमली[1] कहूँ से पावे। होइ उजला जल मैल थिरावे ॥

॥ दोहा ॥

निरमल जल निर्मल करे, जल मलीन थिरियात।
जग ढूँढ़त ढूँढ़त रहे, पड़ी संत के हाथ ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसा मैला जगत दिवाना। निरमली का नहिँ खोज पिछाना ॥
वह निरमली सन्त के पासा। मिलै मेहर जब होइ खुलासा ॥
निरमलि बिना मैल नहिं जाई। जो कोइ कोटिन करे उपाई ॥
निरमलि नाम दया का होई। जो अंदर मल डारे धोई ॥
दीन गरीबी भक्ति सुहावे। जब सतगुरु किरपा से पावे ॥
नहिँ तलास कोइ ढूँढ़नहारा। तनमन फैलि रहा जग सारा ॥
अंदर मन में साँच न आवे। मन परदे कर बचन सुनावे ॥
परदे आड़े आप कराई। गुरु को देवे दोस लगाई ॥

॥ दोहा ॥

गुरू बतावें पुरब को, चेला पच्छिम जाय।
अंदर टाटो कपट की, मिले जो क्योंकर आय ॥
तन मन से साँचे रहे, अंदर मेल मिलाप।
साफ सूपेदी को करे, धोबी के परताप ॥

॥ सोरठा ॥

काग पढ़ाया पींजरे, पढ़ गया चारो बेद।
अंदर की छूटी नहीं, रहा ढेढ़[2] का ढेढ़ ॥

(१ एक बीज जिसे गदले पानी में डालने से वह निर्मल हो जाता है। (२) कौवा।

॥ चौपाई ॥

योँ ऐसा मैला मन भाई। कहो क्योँकर आवे सुधताई ॥
काल अपरबल बाजी लाई। यह पाजी को मालुम नाहीँ ॥
अब याका परसंग सुनाऊँ। काल बली का छल दरसाऊँ ॥
यहि कबीर के ग्रंथन माहीँ। भाखे आप कबीर गुसाईँ ॥
संतन की योँ साख सुनावे। बिना साख परतीत न आवे ॥

(मधुमकुंद सेठ के रूप में काल)

मधुमकुंद इक सेठ रहाई। घर में त्रिया और कोउ नाहीँ।
खुद कबीर का चेला होई। द्वादस[1] और संग में सोई ॥
सँग कबीर कृपा नित राजे। तन मन सूरति चरन बिराजे ॥

॥ दोहा ॥

आठ पहर लागी रहे, सुरति कबीर के माहिँ।
योँ ऐसे सब संग महिँ, काल किया छल दाँव ॥

॥ चौपाई ॥

जबही सेठ ने चोला छोड़ा। सूरति मन साहब से पोढ़ा ॥
सतगुरु सब्द कबीर कहाया। सूरति निरति मिलाप मिलाया ॥
जहँ का माल जहाँ पहुँचाया। साहब कबीर ग्रंथ में गाया ॥
जेहि पाछे इक भया तमासा। किया काल इक खेल बिलासा ॥
धर्मदास को कबीर सुनावे। अचरज का लेखा समझावे ॥
सो मैं हिरदे तोहि सुनाऊँ। जैसी की तैसी समझाऊँ ॥
काल पवन का रूप बनाया। तिरिया का सिर आन घुमाया ॥
बोला वचन नाम गोहराई। मैं मकुंद हूँ सेठ जनाई ॥

॥ दोहा ॥

जहाँ कबीर बैठे हते, द्वादस संगी पास।
खबर जाइ के योँ कही, त्रिया सिर सेठ घुमाय ॥

---

(१) कबीर साहब के बारह मुख्य चेले थे।

॥ चौपाई ॥

द्वादस साथि संग में बोले । स्वामी यह तो सुनो अतोले[1] ॥

(कबीर वाच)

तब कबीर बोले मुख बानी । याका भेद कहूँ सब छानी ॥
बिरोध काल का हमसे परिया । नाम सेठ कहे सिर पर चढ़िया ॥
काल भूत होइ त्रिया घुमावे । यों कबीर मत झूठ कहावे ॥
द्वादस साथि समझ भरमावे । तौ इनके कोइ पास न आवे ॥
मुक्ति द्वार को दीन्ह खुलाई । तौ संसार रहन नहिँ पाई ॥
जीव अहार करूँ मैं मोरा । सो कबीर ने बंधन तोरा ॥

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे यहि काल जनाया । काल भूत तिरिया सिर आया ॥

॥ दोहा ॥

सेठ गये निज धाम को, कीना काल प्रपंच ।
भूत रूप तिरिया छली, नहिँ कबीर मत संच ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे काल करी छल बाजी । कोइ कबीर से रहे न राजी ॥
ऐसे धरमदास से भाखी । कही कबीर ग्रंथन में साखी ॥
सतसँग साँच होन नहिँ पावे । यों छल करि करि काल जनावे ॥
हे हिरदे सतसंगत माहीँ । निहचै काल उपाधि उठाही ॥
जो भरमाय गये जम जाला । उनको खाय गया धर काला ॥
वह उपद्र[2] केहि कारन करई । चारा मोर जीव अनुसरई ॥
मोरी खुधा[3] कौन बुझावे । यह कबीर मत मोर नसावे ॥
जिन सतसंग रंग नहिँ पाया । जिनके सदा काल उर छाया ॥

॥ सोरठा ॥

हिरदे सुनु सम्बाद, काल दाँव ऐसा करे ।
सूरति देत घुमाय, जाय पड़े मुख काल के ॥

---

(१) अगरजी बात । (२) उपद्रव, फसाद । (३) क्षुधा, भूख ।

॥ दोहा ॥

ग्रंथ पद्मसागर महीँ, कहि कबीर सम्बाद ।
धरमदास से कहत हैं, हिरदे तुलसीदास ॥

॥ चौपाई ॥

काग असज्जन की समझाई । यह तो सब मोरे मन आई ॥
बायस[१] पालिये अति अनुरागा । होय निरामिषि[२] कबहुँक[३] कागा ॥
यह रामायन में चौपाई । हिरदे को दृस्टान्त सुनाई ॥
काल फाँस में कागा आवे । पंछी पकरि पारधी[४] लावे ॥
फंदा करि जिव घेरे आई । ज्यों नलनी का सुवना भाई ॥
जग यह यों अस काल फँदाना । ऐसे असज्जन का सरधाना ॥

(हिरदे वाच)

जब हिरदे इक पूछि प्रसंगा । स्वामी कहो हंस सतसंगा ॥
रह निगहनि कहो बूझि बिचारा । हंसन के पद का निरवारा ॥

॥ दोहा ॥

हंसन की रहनी कहो, तन मन सुरति सुभाव ।
काल बली के पेच से, कस कस निकरे जाय ॥

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे सज्जन गति न्यारी । करेँ भक्ति वे सुद्ध बिचारी ॥
मुक्ताहल[५] मोती चुनि खावे । मानसरोवर में सुख पावे ॥
त्रिकुटी माहिँ चित्र चित सारी । सो वहँ जाइके दीपक बारी ॥
विना तेल विन बाती भाई । दीपक जरे रैन दिन माहीँ ॥
चहुँदिसि फैलि रहा उँजियारा । तेज पुंज वह देस निहारा ॥

---

(१) कौवा । (२) माम आहार का त्यागी । (३) कभी । (४) शिकारी । (५) हंस ।

सो घर वहि हंसन का बासा । करैं कुतूहल हंस हुलासा ॥
निसदिन प्रेम भक्ति अनुरागी । तद्यपि नाम बिमल बड़ भागी ॥
आगे तोहिँ परसंग सुनावा । हंसा बुंद सिंध यों आवा ॥

॥ दोहा ॥

बुंद सिंध हंसा मिले, निर्मल मुक्ति बिचार ।
नर देही की अब कहूँ, सुनु यह हिरदे सिहार ॥

॥ चौपाइ ॥

सूरा होवे रन के माहीँ । भव डर कंप कधी नहिँ आई ॥
निद्रा रैन दिवस नहिँ सोवे । जब देखो तब जागत जोवे ॥
कोइ बँदगी डंडवत करावे । सबके पहिले सीस नवावे ॥
भूखा कोइ देखा नहिँ जाई । जब कछु देवे जीव जुड़ाई ॥
दया सील संतोष अपारा । भक्ति अरु ज्ञान चले चौधारा ॥
बैठे बैठे में मरि जावे । देह छूटि फिर नर तन पावे ॥
प्रान छूटि निज घर में बासा । सुनु हिरदे यह भेद खुलासा ॥
नर नर का तन ऐसे पावे । जब कहूँ हिरदे लखन में आवे ॥

॥ सोरठा ॥

नहिँ मूरख पतियात, ले जराय बाती दिया ।
हिये अंदर के माहिँ, देखो जोइ निहारि के ॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु नाम सुरति की बाती । गैबी जोति जरे दिन राती ॥
हिरदे यह सज्जन की रीती । अंग असज्जन करे अनीती ॥
परखि प्रकृति का कहूँ सुभाऊ । कहि लच्छन उनके दरसाऊँ ॥
कूर कुभंडी लुच्चे नंगे । वे गँवार कहैं बचन बिढंगे ॥
जो उनकी सोहबत सँग करई । नरक खानि जुग जुग लों परई ॥
मुख बोलै नहिँ बचन सँवारे । जैसे मेढक हंस बिचारे ॥
हंसन की हाँसी करवावे । काग सुभाव कभी नहिँ जावे ॥

[मेढक हंस सम्वाद]

याका इक दृस्टांत सुनाई। मेढक रहे कूप के माहीँ ॥
हंसा आय दिसंतर बाटे। बैठे जाय कूप के काठे ॥

(मेढक वाच)

मेढक ने पूछा को आही। आये कहाँ कौन हो भाई ॥

(हस वाच)

हम हैं हंसा जाति गरीबा। कागा हमसे करे हरीफा[१] ॥
कागा मिले आप को हारे। जीतन की नहिँ गैल सिहारे ॥
हंसा हंस मिले सुख होई। बिमल बिलास करेँ मिलि दोई ॥

॥ सोरठा ॥

सुन मेढक यह रहस, देस हमारा दूर है।
रहेँ दरियाव के पार, हंस नाम हमरो कहेँ ॥

॥ मेढक बाच ॥

वह दरियाव बड़ा कहो केता। कहाँ वह देस तहाँ तैँ रहता ॥
चोपट चौड़ा केता पानी। सुन के समझ लेव सहदानी ॥

(हस वाच)

जब हंसा बोले अरे भाई। सिँधु अथाह कोइ थाह न पाई ॥
जल जोजन कहा कहूँ बताई। संख्या नाहिँ असंख्या भाई ॥

(मेढक वाच)

तब छलाँग मेढक इक मारी। कहो समुद्र इतना है भारी ॥

(हस वाच)

तब हंसा बोले सुनि लीजे। सिंधु अथाह थाह कहा कीजे ॥

(मेढक वाच)

जब मेढक मन में रिसियाना। दे फलाँग दूजी अभिमाना ॥
कहे मेढक इतना है भाई। जो दरियाव रहै तैँ जाई ॥

---

(१) शरारत।

(हंस बाच)

जब हंसा ने बचन उचारा। बिन जाने कहा कहे बिचारा ॥

(मेढक बाच)

तब छलाँग तीसर उन मारा। यासे कहा कहे अधिकारा[१] ॥

(हंस बाच)

कूप सिंधु कहा पटतर लावे। तोरी बुद्धि समझ नहिं आवे ॥

(मेढक बाच)

मेढक के मन गुस्सा छूटा। तैँ है लबार जक्त का झूँठा ॥
यासे कहा बड़ा बतलावे। तैँ अंधे को नजर न आवे ॥
मेढक टेक आपनी राखा। हंसा को झूँठा कहि भाखा ॥

॥ दोहा ॥

सज्जन और असज्जना, दोनोँ का प्रतिबाद।
हंस हारि आपइ गये, मेढक अधम उपाध ॥
ज्योँ अज्ञानी मनुख की, मेढक बुद्धि बिचार।
हार जीत माने नहीँ, ज्योँ मछ धीमर जार[२] ॥

॥ छंद ॥

मेढक अधम कहै हंस से, यह कूप से भारी कहा।
हंसा कहे दरियाव की गति, जन्म से ह्वाँही रहा ॥
दोनोँ मेँ यह प्रतिबाद उत्तर, परसपर होता रहा।
कहि बात हंस न मानि मेढक, भूल मेँ बादै बहा ॥
हंसा सरोवर बास बस, जस हगन से देखी कहा।
मेढक कुबुद्धी जाति मूरख, उमर भर देखा कुआ ॥
वो सिंध को संधि समझ बिन, नहिँ हंस की बातेँ सहा।
हिरदे कठिन मन मेढका, जड़ टेक मेँ अपनी रहा ॥

---

(१) इस से विशेष क्या हो सकता है। (२) जैसे मछुआ के जाल मे फँसी हुई मछली।

॥ सोरठा ॥

मेढक मूरख ज्ञान, हानि लाभ समझे नहीं।
हंस सिरोमनि आहि, जानि बूझि बरते नहीं॥

। चौपाई ॥

मेढक मन यह मनुष कहाया। संसै के भव-कूप रहाया॥
समुदर संत हंस जहँ बासा। मानसरोवर सदा निवासा॥
वह जड़ कहे कूप की बातेँ। सुरत समुंदर हंस समाते।
इन उनका कहा बाक मिलापा। वे कहेँ और और इन थापा॥
मेढक मन बस जीव बिचारा। यह कहा जाने वार अरु पारा॥
भौजल कूप बंध में बासा। हंस सरोवर रहे खुलासा॥
हंस सीख जो मेढक माने। भव जल कूप परख जब जाने।
मानसरोवर संधि लखावे। कूप भवन तजि हंस कहावे॥

॥ दोहा ॥

मेढक माने कहन को, हंस बचन बिस्वास।
आस कूप भव जल तजे, सरवर हंस निवास॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी इक बिसमय जानी। हंसन की क्योँ बात न मानी॥
मन बुधि में मेढक नहिँ लावा। कहो स्वामी यह कौनि प्रभावा॥
संत परमारथ के सहुकारा[1]। कारज करज मुक्ति निरबारा॥
यह नहिँ लेत चेत चित लाई। कौन खोट कमन के माहीँ॥

चेतावनी और उपदेश

(तुलसीदास वाच)

भेख संत दोउ एक समाना। संत चीन्ह नहिँ परख पिछाना॥
दोऊ को यह इक सम जाने। धनवँत निरधन परख न आने॥

---

(१) साहूकार।

करज कँगाल से लेने चाले । लकड़ी बाँस बेचने वाले ॥
वह का देवे करज बिचारा । मिहनत करि करि पेट सँवारा ॥
साहूकार से लेन न आवे । नित निरधन से माँगन जावे ॥
आवे न हाथ टका इक भाई । मूरख वोहि की करत बड़ाई ॥

॥ दोहा ॥

निरधन से निस्चय करे, साहूकार से फेर ।
कैहर[1] करे कधी कोप से, करत सुरति से बैर ॥

॥ चौपाई ॥

अंधा जग यह फिरत भुलाना । माँगे भेखन का नहिँ जाना ॥
सतगुरु की कोइ गैल न पावे । सुरति सिख सतगुरु पै आवे ॥
ऐसा उनको कहा बिबेका । देखा सुना गुना न परेखा ॥
जो संतन की साख बिचारे । दृस्टि माहिँ जब इस्ट निहारे ॥
इस्ट जानि के इस्क लगावे । तौ सुधि बुधि थोड़ी सी पावे ॥
उनकी कृपा दृस्टि है न्यारी । यह कहा जाने भेख अनारी ॥
जस जग रीति भेख के माहीँ । भेख भिखारी जक्त कहाई ॥
ज्ञानी बड़े गाँठि नहिँ पैसे । वे लखपती होइ हैं कैसे ॥

॥ दोहा ॥

लखपतियन की रोकड़ी, अँगड़े लैके जाय ।
साह दिसावर के बड़े, खाते जमा कराय ॥

॥ चौपाई ॥

माल अपूरब संतन केरा । सो जग कोइ पावे नहि हेरा ॥
उनका रोकड़ माल खजाना । बीजक वह उनही का जाना ॥
माल सड़े नहिँ काई लागे । चोरै न चोर रैन दिन जागे ॥
कबहुँ न हाथ चढ़े केहु भाँती । खोदत रहे दिवस अरु राती ॥
यह दौलत दुनिया नहिँ जाना । गुप्त भेद मेँ माल छिपाना ॥

---

(१) क्रोध ।

दया दीन दिल कूँची[१] पावे । मेहर नजर करि वे दरसावें ॥
जो मूरख कोइ लेन बिचारे । जन्म जन्म पचि पचि के हारे ॥
जुगन जुगन कोउ अंत न पाया । घर घर मुए अनेकन काया ॥

॥ दोहा ॥

यह दौलत दरबार की, बकसीसी[२] के माहिँ ।
और तरह आवे नहीँ, कोटिन जन्म सिराय[३] ॥

॥ चौपाई ॥

यह जग अँग सँग मेँ मतवारा । चावे बिषय भोग अनुसारा ॥
इन्द्री सुख बहु भाँति सुहाई । मद के नसे छके रहे भाई ॥
रात दिवस सिर काल सिकारी । पकरि घेरि के मारि पछाड़ी ॥
जब कोइ कुटुँब काम नहिँ आवे । जम जुलमी की जूती खावे ॥
दो दिन जग मेँ देख तमासा । फूले फिरेँ जक्त मन आसा ॥
कबहुँ न हार हिये मेँ लावे । मूरख जन्म बाद योँ जावे ॥
जब सुपना अपना करिचावे । अंत समय कोइ काम न आवे ॥
योँ जग की यारी समझावा । मुए गये कोइ खोज न पावा ॥

॥ सोरठा ॥

गुललाला का फूल, छुवत हाथ मुरझात है ।
ज्योँ ओला जल गाँठि, काँचे बर्तन नीर जस ॥

॥ चौपाई ॥

नर तन पाय किया का भाई । अंदर की नहिँ अगिन बुझाई ॥
जुग जुग रहा खानि में भटका । काल कला कर्मन में लटका ॥
नरतन ले कहो का फल पाया । जाना जो जिन आप बनाया ॥
यह ओसर भलि भाँति विचारे । नहिँ यह जन्म वायदे[४] हारे ॥

---

(१) कुंजी । (२) बख्शिश । (३) बीत जाय । (४) वायदा=वादा यानो इकरार जो मालिक के भजन का जीव ने गर्भ में किया था । दूसरे तौर पर "बाद ही" भी हो सकता है जिसके मानी "बेफायदा" के हैं ।

मन आपने बिबेक बसावे । बढ़ी घटी सब नजर में आवे ॥
ज्ञानी रहे मगन मन माहीं । सुपने दुख सुख व्यापे नाहीं ॥
ज्ञानवंत नर परम अनंदा । भक्ति सिरोमन काटै फंदा ॥
ज्ञानी का जीवन जग माहीं । रहे बिचार हिये लघुताई ॥

॥ दोहा ॥

बाक[1] ज्ञान में निपुन है, अंदर का नहिं भेद ।
उग्र[2] ज्ञान बिन भक्ति के, जुग जुग पावे खेद ॥

॥ चौपाई ॥

संत बिना नहिं कारज होई । या बिधि बात कहें सब कोई ॥
जो संतन ने बचन उचारा । बिन सतसंग नहीं निरधारा[3] ॥
ऐसे आगे साख पुकारे । साँच होय तन मन से हारे ॥
दुर्गम घाटी काल कराला । बाँधी बाट जुलम जम जाला ॥
सतगुरु तेग सुरति से काटे । निकरि जाय जुलमी की बाटे ॥
तन मन सोधि रहे निरबाना । तब लख पावे पुरुष पुराना ॥
जुग जुग से जिव चले अनेरा । काटा कधी न जम का घेरा ॥
जन्म जन्म चौरासी माहीं । कबहुँ न सुरति संधि को पाई ॥

॥ दोहा ॥

सुरति सब्द के भेद बिन, होय न पूरन काम ।
चमर चाम की दस्टि में, तन तत तिमिर[4] समान ॥

॥ चौपाई ॥

अंडज पिंडज उस्मज खाना । चौथे मनुष जन्म का जामा ॥
यह सब बाक बचन बरतंता । यहिबिधि कही जुगन जुग संता ॥
जिन नर तन में मूल बिसारा । कबहुँ न होय खानि निरवारा ॥
उत्पति परलय में जिव जावे । फिरि फिरि जग जिव खानि समावे ॥

---

(१) वाच या जबानी । (२) प्रचंड, लच्च । (३) स्थिरता । (४) अंधकार ।

करनी करे भोग फल भाई । जोनी धर फल को भुगताई ॥
यह रहनी की बात बिचारा । यामेँ नहीँ होय निरधारा[1] ॥
करनी करे कर्म की बाजी । इन्द्री सुख भोगन में राजी ॥
बिना सुरति नहिँ संसय जाई । यह सतगुरु भाखेँ गोहराई ॥

॥ दोहा ॥

करतब तौ सब ने किया, जस जस जिनके भेद ।
कर्म खेद छूटी नहीं, सूरति सब्द उमेद ॥

(हिरदे बाच)

॥ छंद ॥

हिरदे अरज कहे साँच स्वामी, सब्द तो ऐसी कहे ।
सत बचन बाक बिलास बोली, आस बिन ऐसे रहे ॥
कोइ सुरतवंत जो पंथ पावे, बिकट मारग को गहे ।
इन्द्री सिथिल मन कैद करिके, जुगति थिरता की लहे ॥
ज्योँ पेड़ पौद झकोर पवना, योँ डगन मन की सहे ।
जब सुरति सोधि उपाधि टारे, बाट मन की ना बहे ॥
धर नीलगिरि पर ध्यान निस्चल, सिखर पर सूरत रहे ।
हिरदे बिना अस काज कीन्हे, मीन जल मछरी बहे ॥

॥ सोरठा ॥

सुंदर[2] में स्रुति ध्यान, ज्ञान भक्ति बल्ली गहे ।
करि केवट पहिचान, सतगुरु पार उतारिहैं ॥

॥ चौपाई ॥

यहि विधि करे जीव निरबारा । भव जल से जब उतरे पारा ॥
यह ऐसे विन कधी न होई । यहि विधि संत कहें सब कोई ॥
संत जुगन जुग कहते आये । कोई जीव ख्याल नहिँ लाये ॥
भवसागर में नाव बतावें । जो कोइ उतरि पार को जावे ॥

---

(१) स्थिरता । (२) सुख का द्वार ।

परमारथ के संत सुखदाई। उनके हृदय दया रहे छाई ॥
वे पुकार करि कहें अवाजा। ज्यों मेघा बादर में गाजा ॥
गरजे मेघ सुने सब कोई। अस कहें गरजि संत सब सोई ॥
जड़ता जीव जोनि के माहीं। उनके बचन कान नहिं लाई ॥

॥ दोहा ॥

वे दयाल जुग जुग कहें, बहिरा सुने न कान।
ज्यों मतवाले मद पिये, छके नसे के माहिं ॥

॥ चौपाई ॥

यों अस फिरे खुमारी माहीं। छके नैन मद कहा न जाई ॥
सब्द साख कहें बचन पुकारे। यह मूरख मन में नहिं धारे ॥
ग्रंथ बनाय कीन्ह यह काजा। डारे भाख अनेक समाजा ॥
नर तन यह यहि में कछुलावे। करि उपाव बुधि ज्ञान जगावे ॥
निरमल ज्ञान सिला जल धोवे। मैले से उजला यह होवे ॥
कई प्रकार की बानी बोले। यह अज्ञान गाँठि नहिं खोले ॥
कहते कहते जन्म सिराना। एक न बात कान पर आना ॥
संतन की कछु खोर[1] न भाई। कहन कहें सब कछु गोहराई ॥

॥ दोहा ॥

यह अज्ञानी पातकी, सुने न उनके बैन।
कहन कान लावे नहीं, कहाँ मिले सुख चैन ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे भटक भटक दुख पावे। चौरासी बंधन में आवे ॥
राज रोग रोगी जिमि होई। वाको औषधि लगे न कोई ॥
ऐसे रोग रहे संसारा। कोइ औषधि नहिं दर्द सिहारा ॥
संत हकीम दवा को देवें। निर्मल अंग आप करि लेवें ॥
बिना दाम की दवा बतावें। जीव सुखी करि रोग छुटावें ॥

---

(१) क्रोध, सराप।

यह कमबखत कहन नहिँ माने । भूत भवानी में मन आने ॥
करे पिसाच अरु पित्तर पूजा । सतसँग की कछु बात न बूझा ॥
कैसे भरम जीव को जावे । मैली बुधि नहिँ ज्ञान समावे ॥

॥ दोहा ॥

जुगन जुगन बंधन पड़े, कर्म काल के द्वार ।
नर्क स्वर्ग की सुधि नहीँ, दुख सुख बारम्बार ॥ ॥

॥ चौपाई ॥

ज्योँ कूकर हड़काना[1] होई । मारे मार करे सब कोई ॥
जो घर को कोइ के पग धारे । दुरदुर करि के मारि निकारे ॥
ऐसे जीव भया हड़काया । आवागवन नाहिँ सुख पाया ॥
उपजे मरे बहुरि तन पावे । फिरि फिरि आवागवन समावे ॥
चौरासी बासी बस होई । जनमे मरे काल मुख सोई ॥
ऐसे जनम अनेक सिराने । सतगुरु बाक बचन नहिँ माने ॥
खानिहि खानि जनम जुग धारे । बिन अधार फिरे मारे मारे ॥
अंत अधार कोई नहिँ कीन्हा । बिना सार सन्मुख नहिँ चीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

जो सन्मुख रहे संत के, अंत कहूँ नहिँ जाय ।
सूरति डोरी लौ लगे, जहँ को तहाँ समाय ॥

॥ चौपाई ॥

त्रियसुत मात पिता परिवारा । यह झूठे इन बंधन डारा ॥
मोह जाल जग रह्यो बँधाई । ममता माया बिपति बसाई ॥
यह जग जाल घेरि घुन खाई । जैसे कीट काठ के माहीँ ॥
घुन घुन खाय काठ को भाई । योँ संसय सब जग घुन खाई ॥
रात दिवस कोइ चैन न पावे । संसय छुपने जाइ सतावे ॥
यह बंधन बिपता ने मारा । कैसे होइ जीव निरबारा ॥

---

(१) रोने वाला ।

जुगन जुगन परिपाटी[१] आई। योँ जिव पड़ा भूल के माहीँ ॥
ज्ञान बिबेक बचन नहिँ बूझा। योँ भया अंध आँख नहिँ सूझा॥

॥ दोहा ॥

आँखी मेँ जाले पड़े, काढ़े कौन किनारि॥
जब सथिया[२] नस्तर भरे, सुरति सलाई डारि॥

॥ चौपाई ॥

जब छूटेँ आँखी के जारे[३]। सुरति सलाई नैन निहारे॥
सो कोइ यह सतगुरु से पावे। तिमिर नैन के तुरत छुड़ावे॥
योँ जग का छूटे अँधियारा। गुरु सूरज से होइ उबारा॥
जो कोइ तिमिर नसाया चावे। गुरु चरनन पर सुरति लगावे॥
सुरजमुखी पथरी की नाईँ। सन्मुख लावत अगिन समाई॥
जो चेला सतगुरु को चावे। गुरु प्रताप पद अगम लखावे॥
जब बंधन टूटे जम फाँसी। जग आसा से रहे उदासी॥
मन अनुराग विषय सब त्यागे। राग रीति जग की सब भागे॥

॥ दोहा ॥

सुंदर सुरति सुधारि के, गुरु चरनन करि ध्यान।
भान उदय नितही उगे, संत बचन परमान॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

चौरासी तजि नर तन थापा। यह सब संत चरन परतापा॥
एक बचन मोरी अभिलाखा। सो सुनि हौँ स्वामी मुख भाखा॥
फिर नर तन का कहो बिचारा। जिन पाये जस जस निरबारा॥
नर निज रूप प्रकिर्त्ति बिचारा। कोइ कोइ आप अपन पौहारा॥
कोइ सज्जन सुख सेज बिलासा। कोइ अपराधी बाँधी आसा॥
यह इनका कहो भेद निवेरा। हिरदे दास चरन का चेरा।

(१) बंधेज, रीति। (२) जर्राह। (३) जाला।

जुग चारो कलु[1] मूल मलीना । नर तन धरे कलू[1] मतिहीना ॥
यासे मन संदेह उठावे । स्वामी बचन बोध मन आवे ॥
यह मोरी संदेह मिटावो । हिरदे को बिधबिधि अर्थावो ॥

॥ सोरठा ॥

कठिन कलू की रीति, जीति सकै नहिँ आपको ।
मन इन्द्री संग प्रीति, हित अनहित गुन गाँठि मेँ ॥

कलियुग में जीव की दुर्दशा

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे यह अकथ कहानी । कहँ लग बरनन कहूँ बखानी ॥
नर कलु के मतिहीन अभागी । चाल चलें मन बिष अनुरागी ॥
अब याका बरतंत सुनाऊँ । मन तन बरन बास बतलाऊँ ॥
कोइ नर कर्मी कर्म करावे । जो कोई जैसे फल पावे ॥
कोइ नर ज्ञानवंत अनुरागी । नर तन सुफल भोग बड़ भागी ॥
कोइ नर मुक्ति मनोहर पावे । नर तन में सो सुफल कहावे ॥
कोइ कोइ नर गुर गगन बिचारा । संत कृपा से आप सम्हारा ॥
कोइ नर कुटिल आप अपराधो । पड़े कुमति बस काल उपाधो ॥

॥ दोहा ॥

कलू काल की का कहूँ, नर नारी मतिहीन ।
दीन भाव दरसे नहीँ, मैली बुद्धि मलीन ॥

॥ छंद ॥

हिरदे कलू परताप से, नर की नजर मैली भई ।
गुन द्रोह दुंद विकार मारग, दिवस निस बिष में रही ॥
इन्द्री अपरबल वास बस अस, प्रीति में फाँसी गई ।
जग लोभ मोह विकार माया, ममत में लागी रही ॥

---

(१) कलियुग ।

पोट बिष मद मान सिर पर, बाँध करि गठरी लई ।
जुग जुग करम के भोग काया, दुर्गति[1] दुख दीन्हा दई[2] ॥
कहुँ का बिपति यह जीव जड़ पर, जुलम जम की का कही ।
हिरदे हिरस[3] करि कोटि कर्मी, तुरत तन छूटै सही ॥

॥ दोहा ॥

कोटि कर्म करनी करे, जम जुलमी की दाढ़ ।
जोरे पड़े सो ना बचे, सब जिव डारे चाब[4] ॥

मरने के समय सुरत कैसे खिँचती है—

संत अपनी शरनागत सुरत को कैसे रक्षा करते हैं

॥ चौपाई ॥

संत जीव की बिपति छुड़ावें । कर्मी जीव जक्त को चावें ॥
याको फल चौरासी माहीं । भिन्न भिन्न तोहि कहूँ सुनाई ॥
जब जिवनि करि देह दरसाऊँ । वोहि समय की समझ सुनाऊँ ॥
निकरि जीव तन छूटे भाई । जब की बातें कहूँ बुझाई ॥
सिमटि अकास भास जब जावे । जब नाड़ी में सीत समावे ॥
जस रबि अस्त होय अँधियारा । प्रान पती तन धुक धुक धारा ॥
जस रबि भास गये उजियासी । धुकधुक प्रान बसे तन बासी ॥
निकसे स्वाँस भासकुन[5] प्राना । येरे सिमटि कहो कहाँ समाना ॥
जो वो ठाँव जौन से ठाईं । दसवाँ द्वार ब्रह्म के माहीं ॥
सूरज ब्रह्म द्वार दस माहीं । उनसे किरन अंड में आई ॥
किरन पाँचतत प्रान कहाया । ततमिलि पाँच अकास जगाया ॥

(१) दुर्गम, कठिन । (२) ईश्वर । (३) लालच । (४) चबा । (५) किरन ।

आतम सब में भास प्रकासा । सोई भास किया तन बासा ॥
मारग भास जोई मग आया । तरक तालुवे राह समाया ॥
ज्यों प्रतिबिंब पड़े जल जाई[१] । ऐसे भास नाभ के माहीं ॥
नाभ तेज तन माहिँ समाना । रोमहि रोम बदन में जाना ॥
भास तेज चेतन भइ काया । यह भीतर में बरनि बताया ॥
जिन घट सैल करी काया की । भीतर भेद कहै जोइ भाखी ॥
ऊपर की कहनी नहिँ मानूँ । अंदर उदय होय घट भानू ॥

॥ दोहा ॥

अंदर भानु उदै बिना, भीतर की का कहेन ।
बैन बचन झूँठे कहे, बिन अंदर नहिँ ऐन[२] ॥

॥ चौपाई ॥

ब्रह्म जीव कून प्रान कहाया । यह काया में भाखि बताया ॥
ठीक ठौर अरु ठाम ठिकाना । अंदर कोई परखि पहिचाना ॥
यह सब बैन बदन में भाखी । सुन करि साध देइँगे साखी ॥
निकरे प्रान बदन से जावे । जाहि समय की संत सुनावें ॥
जाका अब दृस्टांत सुनाऊँ । नकल माहिँ मैं असल दिखाऊँ ॥
जैसे पतँग गगन चढ़ि जावे । डोरी देत देत बढ़ि जावे ॥
जब डोरी वह खैंचि खिलाड़ी । खैंचि डोरि भूमी पर डारी ॥
सिमटी डोरि किया उन पिंडा । यहि विधि सुरति खिँचै ब्रह्मंडा ॥
रोम रोम से तेज खिँचाना । सिमटि सिमटि नाभी में आना ॥
नाभि तेज से भास उठाया । जब तन मद्ध तालुवे आया ॥
तालुवे से जब डोरि खिँचानी । जब तत पाँच अंड में आनी ॥
खैंचे डोरि प्रान इँचि आवे । काल कान पर आसन लावे ॥
काल कान के मारग लाई । या विधि तन के माहिँ समाई ॥
जब वा डोरि पकड़े जाई । संत सुरति की बैठक वाही ॥

(१) जैसे पानी में जाकर परछाईं पड़ती है । (२) आँख ।

वही सतगुरु की बैठक पासा । डोरि छाँड़ि होइ काल निरासा ॥
प्रानी सतगुरु की सुधि लावे । डोरी छाँड़ि काल अलगावे ॥
जो सतगुरु सुधि बिसरे भाई । जबहिँ काल घर बजत बधाई ॥
जिनके हृदय संत लौ लागी । सतगुरु साँच प्रीति अनुरागी ॥
जिनकेकालनिकट नहिँ आवे । डोरि छाँड़ि के दूर परावे ॥
काल ठिकाने अपने आवे । सूरति में सूरति लिपटावे ॥
अपनी सुरति सुरति मेँ डाली । ज्यों बंसी मच्छी खिँचि चाली ॥
बंसी मेँ मच्छी खिँचिआवे । ज्योँ सतगुरु में सुरति समावे ॥
सुरति डोरि पोढ़ मजबूती । जबहिँ काल सिरमारे जूती ॥

॥ दोहा ॥

सुरित डोरि सतगुरु गहे, रहे चरन के माहिँ ।
सुन्न सुरति सब्दै मिली, डोरी डोरि समाय ॥
काल रहा झख मारि के, गये जो दावा चूक ।
निर्मल होइ आगे चले, कर्म काल मुख थूक ॥

॥ चौपाई ॥

जे सतगुरु सज्जन अनुरागी । संत चरन सूरति बड़भागी ॥
कहुँ उनका यह योँ बरतंता । सूरति बसे सरन मेँ संता ॥
जो कोइ ऐसी लगन लगावे । सो सूरति सतगुरु मेँ आवे ॥
वार काल जहँ बसे ठिकाना । काल पार सतगुरु का थाना ॥
जेहि के मद्ध सुरति का बासा । सज्जन जो कोइ करे निवासा ॥
अष्ट कँवल पखड़ी दल माहीँ । जो जेहि आस रहे जहँ जाईं ॥
काल स्याम के बीच रहाई । सेत सुरित सतगुरु की भाई ॥
बूझै यह कोइ समझ लखावे । याकी बूझ समझ कोइ पावे ॥
यामेँ जिव का लगे ठिकाना । यह मारग सज्जन का जाना ॥

॥ दोहा ॥

नैन स्याम और सेत के, मद्ध सुरत की लाग ।
जो जैसे सतगुरु मिले, तैसे तिन के भाग ॥

॥ चौपाई ॥

जो सूरति सतगुरु को चाही । जैसी डोरि ऊँट की नाईं ॥
जैसे ऊँट अगाड़ी जावे । सब कतार पीछे चलि आवे ॥
बाँध डोरि पूँछि के माहीं । सब कतार पीछे चलि आई ॥
सतगुरु सूरति मूल ठिकाने । ज्यों कतार जिव सुरति समाने ॥
जो सूरति सतगुरु दृढ़ लावे । सुनु हिरदे वह वही समावे ॥
यही भाँति से चले न दावा । और भाँति सब मार गिरावा ॥
तप संजम जोगी बहु पाले । ये मारग में भये बिहाले ॥
जो कोइ समझि करे यह लेखा । बिन सतगुरु नहिं मिले बिबेका ॥

॥ दोहा ॥

ज्यों कतार रहे ऊँट की, अगले ऊँट बँधाय ।
यों सूरति सतगुरु कहें, सब जिव वही समाय ॥

(हिरद पान)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सज्जन की बाता । यहि बिधि भाखे सभी सनाथा ॥
सब संतन की देखी बानी । सबने कही बिमल मति ज्ञानी ॥
अब वह मोको भेद बतावो । करमी जीव काल को दावो ॥
सज्जन का भाखा निरबारा । करमी जीव काल को जारा ॥
उनके प्रान कहाँ होइ जाईं । कहो स्वामी मोहिं बरनि सुनाई ॥
काल घाट रोके केहि द्वारे । सब जीवन को खाय बिडारे ॥
कौन राह से जीव नसावे । कैसे सकल जगत को खावे ॥
यह तन में केहि भाँति समावे । बदन बीच वह क्योंकर आवे ॥

(१) पानी ।

॥ दोहा ॥

प्रान निकारे आय के, घेरे घट के माहिँ ।
एक जीव बाचे नहीँ, धरि धरि सब को खाय ॥

॥ चौपाई ॥

करता कौंन जीव का होई । बिन जाने जग जाय बिगोई ॥
कहँ से आय कौन उपजाया । क्योँकर देह धरी जग काया ॥
पाँच तत्त तन रहा बँधाई । उपजि मरे चौरासी माहीं ॥
याको सब यह सबब सुनावो । स्वामी यह धोखा दरसावो ॥
पत मत हीन दीन हौँ दासा । चरन कँवल की निसदिन आसा ॥
और आस बिस्वास न आवे । निस दिन सूरति चरन समावे ॥
ज्ञान बिबेक एक नहिँ जानी । ऊपर चरन सुरति कुरबानी ॥
दिल दृढ़ मेहर सरन मेँ होई । चित संसय मेटो प्रभु सोई ॥

॥ दहा ॥

दिल दुबिधा मोरे भई, स्वामी सरन तुम्हार ।
जार जक्त कैसे पड़े, कैसे जीव उबार ॥

॥ चौपाई ॥

काल बली परचंड कहावे । यासे जीव बचन नहिँ पावे ॥
छल बल दाँव करे कइ भाँती । करे कोप जिव पर दिनराती ॥
नहिँ कोइ ठौर बचन जिव पावे । जहाँ जाय तहँ जाय समावे ॥
स्वर्ग मिर्त्त पाताल न बाचे । को है जबर सरन जेहिँ याचे[१] ॥
भटकत फिरे जुगन के माहीं । काल बली से पार न पाई ॥
यह कइ दाँव लगाये फंदा । कर्मी जीव जक्त का अंधा ॥
मारे जो जोरावर कोई । जबर संग कछु जोर न होई ॥
काल बड़ा बरियार कहावे । बिकट बिपति करि जीव सतावे ॥

(१) माँगे ।

॥ दोहा ॥

काल जबर जुलमी बड़ा, खड़ा रहे मैदान ॥
कर क़मान खैंचे फिरे, मारे गोसा¹ तान ॥

॥ चौपाई ॥

ज्यों बन भेड़ी सिंघ अहारा। जैसे जीव काल का चारा ॥
डाके² सिंघ भेड़ के माहीं। ऐसे डाक काल जिव खाई ॥
यह स्वामी मोहिं कहो बुझाई। कौन चरित्तर काल कसाई ॥
या की कर कूँची बतलावो। भिन्नभिन्न कहि करि समझावो ॥
केहि बिधि जाय जीव को घेरे। केहि मारग से सूरति फेरे ॥

जीव सत्य पुरुष को अंश

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे तोहिं आदि सुनाऊँ। जीव सुरति की संधि लखाऊँ ॥
चौथे महल पुरुष इक स्वामी। जीव अंस वहि अन्तरजामी ॥
उनकी अंस जीव जग आया। करता पाँच तत्त में लाया ॥

॥ दोहा ॥

करता ने काया रची, जुग जुग जग बिस्तार।
सार दियो बिसराय के, घर घर करत पुकार ॥

कर्म काया का संग

॥ चौपाई ॥

पिंड प्रधान बसे तन माहीं। करता ने काया उपजाई ॥
बेद पुरान कर्म उपराजा। यासे करे जीव जग काजा ॥
करता करम किया बिस्तारा। लख चौरासी रूप सँवारा ॥
काल³ अपर्बल जाल पसारा। उन सब घेरि जीव को मारा ॥

---

(१) तीर की गाँसी या भाल। (२) दहाड़ना है। (३) काल।

कर्म कलंदर[1] आप नचावे। बाजी लाय जीव भटकावें ॥
कोइ बंधन से बाँधे भाई। ऐसे बंध अनेक लगाई ॥
कोई दाँव नहिँ मारग पावे। धरि धरि देही जन्म सिरावे ॥
चौरासी से निकरि न पावे। बारबार वहि माहिँ समावे ॥

॥ दोहा ॥

कर्म सारनी[2] बुधि बसी, सूरति रही अधीन।
आसा के बस में पड़ी, बासा बिपति मलीन ॥

॥ चौपाई ॥

कर्म अपरबल भारी भोगू। सब जग जार जबर यह रोगू ॥
बिना कर्म कोइ काया नाहीं। जग बस रहा कर्म के माहीँ ॥
काया बिना कर्म नहिँ होई। कर्म बिना काया नहिँ सोई ॥
यह अनादि से रचना भाई। जुगन जुगन ऐसे चलि आई ॥
कर्म भूत सब जग को लागा। यासे बची नहीं कोई जागा[3] ॥
कीट पतंग संग सब केरे। तीन लोक अंडा सब घेरे ॥
सात दीप नव खंड कहावे। चौदह लोक कर्म बस गावे ॥
चन्द्र सूर अरु दस औतारा। यह सब बँधे कर्म की जारा ॥

॥ दोहा ॥

अंड खंड ब्रह्मंड लोँ, लोक सकल जग जाल।
काल कर्म सिर ऊपरे, जुग जुग फिरत बेहाल ॥

काल के चरित्र

॥ चौपाई ॥

अब यह काल चरित्र लखाऊँ। अंदर प्रान बसे जेहि ठाऊँ ॥
काया मद्धे काल सतावे। जब वह प्रान लेन को आवे ॥
सिमटत भास स्वाँस उठि जावे। प्रानपती जम सिमटि समावे ॥

---

(१) बंदर नचाने वाला। (२) कुटनी। (३) जगह।

भास अकास तत्त में जाई। तत्त अकास अंड[1] के माहीं ॥
जब यह कर्म कला उपजावे। बुद्धि सुरति को आन दबावे ॥
ऐली बुद्धि सुरति के माहीं। वही समय में जाय समाई ॥
कर्म अनुसार बसे मन आभा। सूरति मन बुधि बंधन फाँसा ॥
सुनत अवाज स्याम सठ[2] गाँसा[3]। घेर घुमरि लावे जहँ स्वाँसा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म सारनी बुधि बसै, आसा बास निदान।
यह नव द्वारा पिंड में, निकसि जाय ज्यों प्रान ॥

। चौपाई ।

यह तो कर्म बुद्धि अनुसारा। अब सुनियो यह काल पसारा ॥
अस्ट कँवल दल अन्दर माहीं। ह्वाँ छिपि बैठा काल कसाई ॥
जब सब भास सिमटि करि आवे। जब सूरति पै बुधि पहुँचावे ॥
कँवल द्वार पखड़ी को रोके। उलटी सुरति काल मुख सोखे ॥
काल दाढ़ में आन चबानी। जब ढरके नैनन से पानी ॥
लगे टकटकी दिखे न भाई। वाहि समय को करे सहाई ॥
जम के दूत घेर चहुं फेरा। निकसे प्रान छोड़ करि डेरा ॥

जहाँ आसा तहाँ बासा

कर्म सारनी बुद्धि कहाई। जहँ भइ आस बास जेहिँ माहीं ॥

॥ दोहा ॥

कर्म आस की बास में, जोनी जोनि समाय।
जो जैसी करनी करे, सो तैसे फल खाय ॥

नर्कों के दुक्ख

॥ चौपाई ॥

जम का जुलम जोर दरसाऊँ। मारग में जिव बिपति बताऊँ ॥

---

(१) मस्टदल कँवल। (२) दुष्ट काल। (३) घेर कर पकड़ लेना। (४) कुटनी।

लोह के खंभ तपत के माहीँ । जहाँ जीव को ले चिपटाई ॥
तड़फ तड़फ जिव जुलम दुखारी । तपत खंभ दुख उपजे भारी ॥
वाहि समय की कहा सुनाई । लोहा अगिन धमन⁽ धौंकाई ॥
ज्यौं धम्मन से धौंकि लुहारा । लोहा जो अगिनी में डारा ॥
ऐसे कस्ट जले जिव भाई । वही समय की बिपति बताई ॥
पाया भोग सोग सोइ जाना । छटपट करे जीव बिलखाना ॥
अब नर्कन का सुनो सुभावा । कर्मी जीव सहैँ दुख दावा ॥

॥ दोहा ॥

कुंभी नर्क निदान यह, पड़े जीव जब जाय ।
सिर समेत बूड़ा रहे, सदा नर्क के माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

जबहि नर्क सिर ऊपर काढ़े । जब ऊपर जूती जम मारे ॥
डूबा रहे नर्क के माहीँ । सिर काढ़े जम मारे भाई ॥
कुंभी नर्क कल्प लौं रहे बासा । मुख में नर्क नाक में स्वाँसा ॥
कई जुगन लौं रहे बिहाला । फिर अघोर नर्क लै डाला ॥
हाँको कठिन भोग दुखदाई । तन सड़ि मरै उपजि वहि माहीँ ॥
निकसि न होय कभी निरबारा । गाढ़े बंध बँधे चौधारा ॥
पापी जीव अधम है सोई । करम भोग भुगते जो कोई ॥
करनी कीन्ह मलीन बनाई । जिन को दसा भोग दरसाई ॥

॥ सोरठा ॥

नर्क अनेकन और हैं कहँ लग करूँ बयान ।
दुख भुगते यह जीव ज्यौं जाने जो भोग समान ॥

खानि योनि के कष्ट

॥ चौपाई ॥

ये भुगताय बहुरि सुनु भाई । जोनी खानी जुलम दुखदाई ॥

(१) भाथी । (२) दशा, हालत ।

खानि खानि का कहूँ निबेरा। लख चौरासी जीव बसेरा ॥
भवसागर जल भरा अथाही। अंडा जीव पड़े सब माहीँ ॥
अंडा मद्धे जीव बिचारा। सो सब बहे चौरासी धारा ॥
धार धार का कहूं बिबेका। तो लिखने नहिँ लागै लेखा[१] ॥
हे हिरदे यह अद्भुत बाता। लख पावे नहिँ करम बिधाता ॥
ब्रह्मा बासन गढ़ै कुम्हारा। वोहु पुनि कर्म जोग अनुसारा ॥
सिव जोगी भिच्छा में राजे। बिस्नु भोग बैकुंठ बिराजे ॥

॥ दोहा ॥

करम भोग अनुराग में, माया का बिस्तार।
तीन त्रिया तीनोँ लई, कर्म जोग अनुसार ॥

॥ चौपाई ॥

यहि बिधि जक्त चलाई बाटा। इन भुलाय दीन्हा घर घाटा ॥
सब दुनिया मारग यहि लागी। भवसागर जिव भया अभागी ॥
जग में जीव करै ब्योहारा। घटी बढ़ी कछु नाहिँ सिहारा ॥
आवागवन भया बिस्तारा। भवसागर योँ जीव बिचारा ॥

संत छाप के एक जीव ने नर्क में पड़ कर सब नर्कियोँ का उद्धार कराया

अब वह कथा कहूँ बिस्तारी। हिरदे सुनिये ज्ञान बिचारी ॥
संत छाप जेहि जिव पै लागी। कोइ जिव भूल गया अनुरागी ॥
कूसंगति से भूल समानी। जाकी कहूँ सुनो सहदानी ॥
जो कदाचि नरक में जावे। संत जाय के जहाँ छुड़ावेँ ॥

॥ दोहा ॥

साह असामी पै करज, जाय लेइ जहाँ होय।
ऐसे संत सुभाव को, परख लीजिये सोय ॥

---

(१) हिसाब।

॥ चौपाई ॥

मोहर छाप के काज सिधावें। नरक माहिं वे जीव जुड़ावें॥
अँगुठा बोरि नरक के माहीं। वहि तत छिन में नरक सुखाई॥
जोनी छूटि नरक से आवे। फिरि नर देही जोनि जड़ावे॥
एक जीव कारन उपकारी। सब छूटे भये जीव सुखारी॥
अब नानक की साख सुनाऊँ। सोदर[1] पौड़ी[2] में समझाऊँ॥

संत की अनूठी दया

॥ दोहा ॥

धन धन राजा जनक है, जिन सुमिरन किया बिबेक।
एक घड़ी के सुमिरते, पापी तरे अनेक॥
ऐसा सुमिरन जानि के, संतन पकड़ी टेक।
नानक सुमिरन सार है, बिसरे घड़ी न एक॥

॥ चौपाई ॥

नानक जाय अँगूठा बोरा। नरक जीव के बंधन तोड़ा॥
ऐसी साख समझ कोइ बूझे। तिमिर जाय आँखी से सूझे॥
साखी देन का कारन नाहीं। अंधे जीव भरम के माहीं॥
जो बड़ भाग दया वे करई। तो कदाचि बंधन निरबरइ॥
जुग जुग भूले जीव अनेका। दया भाव सतगुरु से ठेका॥
संत दया की रीति नियारी। बार बार चरनन पर वारी॥
जो कछु करें करें सोइ संता। संत बिना नहिं पावे पंथा॥
सतगुरु जो जोइ राह बतावें। भूले को मारग दरसावें॥

(१) ग्रन्थ साहब के वह पद जिस के शुरू में "सोदर" का शब्द आता है।
(२) पद्य, नज़्म।

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दयाल से, करम रेख मिटि जाय।
मन तन सूरति साँच से, ज्योँ का त्योँ रहि जाय॥

॥ छंद ॥

हिरदे अजब वोहि रीति घर की, संत से नाहीं बड़ी।
जहँ लौँ निगम कहे बाक बानी, सो सभी नीचे पड़ी॥
आगे अगम बेअंत मारग, सुरति वहिँ जा कर अड़ी।
जहँ लोक लखन अलोक लखि कर, गगन पर सूरति चढ़ी॥
तक सूर सन्मुख दृस्टि धरि कर, नेह निसाने पै गड़ी।
सूरति सिखर के पार होइ कर, कँवल पखड़ी से कढ़ी॥
चढ़ते पलक नहिँ बार उनको, निमख नहिँ लागे घड़ी।
छोड़े सकल सँग साथ सबको, फौज तजि पहुँची छड़ी॥
सबको दिये छिटकाय करिके, सुरति सत मत से लड़ी।
यहि भाँति साथ जड़ाव कुन्दन, नग अँगूठी ज्योँ जड़ी॥
अंदर अलख के पार पद मेँ, पुरुष के आगे खड़ी।
भयो मेल मिलन मिलाप पिव को, संत के सरने पड़ी॥
सत पुरुष संत दयाल दिल ले, सुरति सज्जन की बड़ी।
कैसे नरक दुख खानि मेँ से, काढ़ि लेँ वोही घड़ी॥
ऐसे पुकारेँ साख सब कहेँ, संत की बातेँ बड़ी।
सब सुन स्रवन पर हाथ डारे, संत पट खोलेँ कड़ी॥

॥ दोहा ॥

संत सरन जो जिव रहे, गहे जो उनकी बाँह।
थाह बतावेँ समुद की, बल्ली भवजल माहिँ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे हिरदे संत सुभावा। भवजल पार लगावेँ थावा[1]॥
जहाज सुरति उनकी नित चाले। समुदर पार भरावेँ माले॥

(१) थाह में।

भरती भरैं सुरति की डोरी। पहुँचे पार जहाज को छोड़ी ॥
माल बिलायत में जा बेंचैं। मेवा आनि[1] खरीदी खैंचैं ॥
जम्बू दीप मुलुक के माहीं। खलक माल को चीन्हे नाहीं ॥
गली गली में ले दरसावैं। मेवा ल्यो जो जिनको चावैं ॥
बार बार कहि कर गोहरावैं। कोइ मेवा के पास न आवैं ॥
देखे सुने समझ कर कहते। यह तो माल बड़ा कछु लेते ॥
भाव सुने पर मूड़ हिलावैं। साँची मानि बहुरि नहिं आवैं ॥

॥ दोहा ॥

तन मन से साँची कहैं, खरी खरी बतलान।
पल्ले में डालैं जबै, खैंचै खूँट निदान[2] ॥

॥ चौपाई ॥

कदर बिना नहिं माल बिकाना। संत दिसावर बड़ी न जाना ॥
मेवा मोल खरीदी नाहीं। वह सवाद कहो क्योंकर पाई ॥
देखे सुने खाय मुख माहीं। सो कीमत को जाने भाइ ॥
लिया दिया देखा नहिं आँखी। वह कहा परख कहेंगे भाखी ॥
यह संतन का माल अगूढ़ा। सो का जाने जग मन मूढ़ा ॥
यह तो नाज खरीदा चावे। धर गठरी सिर ऊपर लावे ॥
धड़ा[3] पसेरी तोल पिछाने। यहि बिधि माल संत का जाने ॥
गठरी बाँधि लेउँ सब सारी। यह जाने यों माल अनारी ॥

॥ दोहा ॥

संत मता दुरलभ कहैं, सतसँग में गोहराय।
बड़े बड़े हारे सभी, संतन की गति गाय ॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले इक बानी। स्वामी बचन कहन पहिचानी ॥
बचन अडोल बोल प्रिय लागा। मोको मिले पुरब बड़े भागा ॥

---

(१) ला कर। (२) जब उसके पल्ले में माल देने लगते हैं तो वह पल्ले का कोना खींच कर लेने से इनकार करता है। (३) दस सेर का बाट।

करनी कौन पुरबली रेखा। स्वामी को भरि नैनन देखा॥
ऐसो कहा भाग भल मेरा। चरन माहिँ चित रहे बहोरा॥
हे स्वामी यह कहनि बखानी। तुम्हरी दया समझ में आनी॥
को यह कहे अपूरब बाता। हिरदे चित बिस्मय[1] बिख्याता॥
बिस्मय दूर भर्म सब भागा। स्वामी चरन कँवल अनुरागा॥
एक बात मेरे मन आई। मेवा माल कहो समुझाई॥

॥ दोहा ॥

संत समुंदर पार में, जहाज भरी दरियाव।
सो मेवा मो से कहौ, संत खरीदैं जाय॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

हिरदे जग आँखी में जाला। उन कहा कहूँ प्रगट वह माला॥
अच्छर में बोली समझाई। जग ने बूझ मर्म नहिँ पाई॥
यह मेवा मैं वा समझाई। यहि में समझि लेव तुम भाई॥
अच्छर माहिँ अर्थ समझाया। जिन बूझा जिन ने कछु पाया॥
जो जाने यह भेद भलाई। जहँ कहुँ कृपा संत की छाई॥
बानी बचन अपूरब बोली। जग में प्रगट नाहिँ हम खोली॥
सज्जन सूर सुरति के नाका। सो समझे बोली यह भाखा॥
देस देसंतर के हम बासी। दीपक दृग नैनन पर चासी[2]॥
हिरदे हमरी जाति न पाँती। मैं कहा कहूँ बड़ा अपराधी॥
यह अच्छर का लेखा लावे। कोइ सज्जन सत साध कहावे॥

॥ दोहा ॥

सतसँग में मन नीच है, जिनके हिरदे हार।
दीन गरीबी गवन से, बैठे मन को मार॥

---

(१) संदेह। जगाया।

भक्त के लक्षण

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे यह भक्त कहावे। दास भाव स्वामी को चावे ॥
भक्ति बड़ी खाँड़े की धारा। जो यह करे आप जिन मारा ॥
आपा को समझे नहिँ भाइ। जिन यह भक्ति गरीबी पाई ॥
बिन सतसंग भक्ति नहिँ आवे। दास भाव मन नाहिँ समावे ॥
यहि बिधि भक्ति करै मन लाई। जग स्वामी अज्ञा अस गाई ॥
सिर धरि उचित चले मन मोड़ी। मद मन मान बड़ाई तोड़ी ॥
सो सज्जन निज दास कहावे। यों सेवा सतगुरु की गावे ॥
छलबल साफ सुरति से तोले। योँ सतगुरु की बानी बोले ॥

॥ दोहा ॥

छलबल से साँचा रहे, निर्मल बुद्धि बिचार।
जब रँग मिले मजीठ को, सतगुरु पुरुष अपार ॥

अभक्त के लक्षण

॥ चौपाई ॥

अब यह अभक्तन की सुनु भाई। कपट भक्ति मन में चतुराई ॥
बगुला भक्त बड़े जग माहीँ। बैठे जाय राह में जाई ॥
छाप तिलक कर माल सुहावे। गठरी काटन को मन चावे ॥
परदेसी निज बास निवासी। डारे जाय गले में फाँसी ॥
मीठे मधुर दीन लघुताई। यह लच्छन उनके हैँ भाई ॥
और अभक्त अधम अरथाऊँ। मन में कुटिल प्रीति परभाऊ ॥
मैल अँदर मुख मीठा बोले। भीतर कपट गाँठ निहिँ खोले ॥
अंदर पाप बसे मन माहीँ। ऊपर भक्ति भाव दरसाई ॥

जन्म मरन दुखिया में दौड़ा। नाँगे फिरे पाँव नहिँ जोड़ा[१] ॥

॥ दोहा ॥

जुलमी की जाली पड़े, बड़े बड़े उमराव।
दाँव कधी लागे नहीं, भागन कवन उपाव ॥

काल कराल

॥ चौपाई ॥

खेले जुगजुग काल सिकारी। खाये जक्त जीव सब सारी ॥
को रोके जबरी के माहीं। आड़े[२] फिरें सामरथ नाहीं ॥
सतगुरु से डरपत है भाई। कछू और न चले उपाई ॥
जिव मूरख वो[३] जबर कहावा। याको कछू चले नहिँ दाँवा ॥
कई परपंच करे जम काला। यासे बपुरा[४] जीव बिहाला ॥
कोई उपाव से बाचे नाहीं। सतगुरु सरन बिना कोइ भाई ॥
उन बिन फंद कटन को नाहीं। जो कोइ कोटिन करे उपाई ॥
मारग रोक बाट में बैठा। सन्मुख होइ को खावे खेटा[५] ॥

॥ दोहा ॥

सतगुरु के टारे टरे, और न माने एक।
भेष टेक करि करि मुए, करि दरियाप[६] दिल देख ॥

॥ चौपाई ॥

सब जिव सौंपि पुरुष यहि दीन्हा। तीन लोकका मालिक कीन्हा॥
जो चाहे सो करे अनीता। यहि के सन्मुख कोइ नहिँ जीता॥
जबरी जोर अपरबल भाई। संत बिना कोइ पार न पाई ॥
नाक छेर जो नाग नचावे। ऐसे करि काबू में आवे[७] ॥

---

(१) जूता। (२) छिपते। (३) काल। (४) निर्बल। (५) सोंटा—"खेटक" नाम बलराम जी के हथियार का है। (६) दरियाफ़्त=खोज और जाँच। (७) जैसे श्रीकृष्ण ने काली नाग को नाथ के नचाया था वैसे संत काल को पस्त करते हैं।

सात्विकी और दीन रहनी के गुन

यह संतन से बनै बिचारा। उन अपना कारज यों सारा॥
जग आसा सबही बिसराया। जब यह उनके काबू आया॥
सब रस भोग खान अरु पाना। इन्द्री सुख सबको बिसराना॥
मेवा मट्टी एक समाना। मीठ[1] मिठाई सम करि जाना॥

॥ दोहा ॥

सहज भाव से जो कछू, आवे अमृत भाव।
यह सुभाव भीतर बसे, जब कछु चले न दाँव।

॥ चौपाई ॥

रूखी रोटी साग अलोना। बहुत प्रेम से पावे दूना॥
उनके मन ऐसी उपजावे। जब वह उनके काबू आवे॥
यहि बिधि और करे जो कोई। सो चीन्हे मन बिरला वोही॥
और बात कोइ बाट न पावे। मन की कला हाथ नहिँ आवे॥
सतगुरु मूर मेहर गति न्यारी। वे चाहें तो लेहिं उबारी॥
और उपाय एक नहिँ लागा। भटकत खोज फिरे कइ जागा॥
यह बिषई मन मान बड़ाई। हिरदे कपट कुमति मतिमाहीँ॥
मन मतिमंद अंध है आँखी। मन को तरँग रहे नहिँ राखी॥

॥ दोहा ॥

मन तरंग तन में चले, आठो पहर उपाव।
थाह कधी पावै नहीँ, छिनछिन छल परभाव॥

॥ चौपाई ॥

छल बल दाँव लगे नहिँ हाथा। फोड़ै सिर कितने केइ भाँता॥
जब सतगुरु की मेहर मँझावे[2]। उनकी दया रमज कछु पावे॥
और भाँति कोइ करे उपाऊ। सुपने उनका मिले न थाऊ[3]॥
ज्ञान जोग बैराग बिधी से। और तने[4] नहिँ मारग दीसे॥

---

(१) तीत ? (२) देवे, बोझे। (३) थाह, पता। (४) तरह।

वे अंदर घट लेइँ पिछानी । बोली में परखें सब बानी ॥
चाल चलन सब भाँति बिचारें । जब जेहि जीव को कारज सारें ॥
दीन लीन सब भाँति निहारें । जेहि जिव का अंकुर बिस्तारें ॥
रहनि गहनि से देखें भाई । सुधि सोचे परखें सब ठाईं ॥
यों सब भाँति लखें परबीना । जब वाको दरसावें चीन्हा ॥
उजली बुद्धि मलीन नसावे । जब मन को सुधताई आवे ॥
जग में रहे मरे मन भाई । जग इच्छा सब देइ उड़ाई ॥
मुरदा बोल बने मति हीना । जग बिरोध खुस आप अधीना ॥
मार मार सब जग गोहरावे । जब लालों की लाली पावे ॥
काला मुख मन मौज उड़ावे । जब दयाल की मेहर बसावे ॥
उनकी कृपा दृष्टि है न्यारी । वे चाहें जब लेइँ उबारी ॥
दीन जानि कोइ सरनै आवे । चरन कँवल चित सुद्ध बसावे ॥
चीन्हे बचन संत के जोई । सिर ऊपर धरि लेवे सोई ॥
उनको बड़े जानि मन माने । जब उनका उपदेस पिछाने ॥

॥ दोहा ॥

उपदेसी वहि देस के, भेष भवन के पार ।
सार समझ सुलटी कहें, जग करि उलटि बिचार ॥

भेष, पंडित, वाचक ज्ञानी इत्यादि

॥ चौपाई ॥

जो बानी मुख से उन गाई । कोई समझ न मन में लाई ॥
बाम्हन ने रुजगार विचारा । घर घर कथा कीन्ह बिस्तारा ॥
बाँचत फिरे करे रुजगारा । उदर काज उन पेट सम्हारा ॥
बानी का कछु मर्म न पाया । बाँचि बचन जग को उरझाया ॥
परमारथ पर दृस्टि न डारी । बोल अमोल न बात बिचारी ॥

संत बचन सब कहैँ अतोला । बानी मेँ कोइ सार न खोला ॥
भेख टेक मेँ रहे भुलाई । संत बचन की संधि न पाई ॥
पूजा आप करावे अपनी । रात दिवस माला को जपनी ॥
वह भी यहि मारग मेँ भूला । केहि बिधि पावे सार अतूला ॥

॥ दोहा ॥

पोथी पढ़ने में लगे, चढ़ा ज्ञान का मान ।
सभा माहिँ मोटे भये, गुन के संग गुमान ॥

॥ चौपाइ ॥

सार असार न चीन्हा भाई । गुन के ज्ञान चढ़ी गुरुवाई ॥
संत सार नहिँ बानी बूझी । गुन की गैल आँख नहिँ सूझी ॥
गुनी भये बहु जक्त रिझाया । बादइ जग मेँ जन्म गँवाया ॥
ज्योँ बिस्वा पैसे से राजी । या बिधि बुद्धि सभी उपराजी ॥
जल बिन मीन भई बेहाला । ज्योँ पैसे डाली जग जाला ॥
ज्ञानी गुनी कबेसुर होई । पंडित और भेष सब कोई ॥
माया ने चेरा करि राखा । समझे कहा संत की भाखा ॥
ज्योँ रबि अस्त होय अँधियारा । ज्योँ जग हृदय तिमिर भया सारा ॥
बिन अंजन नहिँ नैनन सूझे । सतगुरु बचन कौन बिधि बूझे ॥
गुरु दयाल से अंजन पावे । जब कहुँ तिमिर आँखि से जावे ॥
दीन होय बिन पावे नाहीँ । संत बिना नहिँ तिमिर नसाई ॥
और दवा कोइ काम न आवे । सतगुरु चरन सदा लौ लावे ॥

॥ दोहा ॥

और आस बिस्वास की, झूँठी है सब बात ।
हाथ कछू आवे नहीँ, जम धरि मारे लात ॥

---

(१) कसबी ।

॥ छंद ॥

ज्ञानी कबेसुर पंडिता, सब बाँच करि पोथी पढ़े।
कोइ अर्थ बात बिबेक पूछे, तुरत ही उनसे लड़े॥
बड़े ज्ञानवंत महंत मोटे, मान मुख बातें कढ़े।
सतगुरु अगम पुर पार पद की, बात नहिँ हिरदे गड़े॥
केइ भाँति संत पुकार बोलेँ, तोल बिन चित ना चढ़े।
गफ़लत पड़ी सब देस दुनिया, समझि कोइ सूरे अड़े॥
सज्जन सुरति के रंग राचे, कर्म काँचे से कढ़े॥
अपने रहे उनमान से, नहिँ मान सेवा इक कढ़े॥

॥ दोहा ॥

हिरदे जो जन असल है, नकल कथो नहिँ होय।
कुसंगति के गुन गहै, नकल कहावे सोय॥

॥ चौपाई ॥

असली अपनी आदि न छोड़े। करि बिबेक बंधन को तोड़े॥

असली

(तेजी[1] घोड़े का दृष्टांत)

॥ चौपाई ॥

अब याकी इक नकल दिखाऊँ। नकल माहिँ असली दरसाऊँ॥
कारवान सौदागर आया। घोड़े खरीद बहुत से लाया॥
कीन्हा सहर से बाहर डेरा। फजर[2] जाय घोड़े को फेरा॥
लोग सहर के देखन आये। तेजी गुन चित माहिँ समाये॥
कहो सौदागर कीमत भाई। कोइ कहिकर अस बचन सुनाई॥
तब सौदागर बोला भाई। सवा लाख कीमत फरमाई॥
सहर माहिँ कोइ का लै जाने। कीमत सुन करि होस हिराने॥

(१) घोड़े की एक नसल का नाम। (२) तड़के।

॥ दोहा ॥

तेजी[1] घोड़ा असल की, क्योंकर करूँ बखान।
चले पछैयाँ पवन ज्यों, ऐसा तुरी निदान॥

॥ चौपाई ॥

यह भनकार राज पै आई। राजा के कोइ कान सुनाई॥
घोड़ा एक अपूरब आया। तेजी अस कहि नाम सुनाया॥
जब राजा बोले अस भाई। लावो वह सौदागर जाई॥
हलकारे को हुकम सुनाया। सुन सौदागर पै चलि आया॥
घोड़े सुधाँ[2] चलो तुम भाई। राजा का यह हुकम बजाई॥
सुनि सौदागर घोड़ा लीन्हा। राजा सन्मुख घोड़ा कीन्हा॥
घोड़े को देखत भये राजी। कहो कीमत सच सच उपराजी॥
जब सौदागर बोले बैना। सवा लाख कीमत का कहना॥

॥ दोहा ॥

सौदागर से पूछि कर, राजा खामुस[3] खाय।
मुख से बोले कछु नहीं, मन ही मन मुसकाय॥

॥ चौपाई ॥

जब राजा ने बात बिचारी। सौदागर यह अहै अनारी॥
करोड़ रुपै कीमत का घोड़ा। इन ने मोल बताया थोड़ा॥
जब ऊपर से पाखर मोड़ा। काना एक आँख से घोड़ा॥
राजा तो घोड़े से राजी। लेना याहि बुद्धि उपराजी॥
दिये दाम सौदागर माँगे। घोड़ा भीतर भूमि उलाँगे॥
घोड़े को बाँधा घुड़साला। कइ खिजमत के करनेवाला॥
मक्खी तन पर लगन न पावे। घोड़े ऊपर चँवर डोलावे॥
जब सिकार राजा जी जावे। काने को लावो गोहरावे॥
जब जब राय सिकारैं जावे। काना कहि अस वचन सुनावे॥
ऐसे कइ दिन बीति सिराना। सुनि घोड़ा मन में रिसियाना॥

(१) ताजी। (२) समेत। (३) चुप।

राजा मूरख बूझि न बाता। तेजी असल न जानी जाता॥
मैं तेजी की असल न जाने। काना मुख से भाखि बखाने॥
जब घोड़ा मन में घबराना। काना मुख से कहै बखाना॥
घोड़ा सुने बहुत दुख पावे। अब याका का करूँ उपावे॥
बोल राय के कैसे लागे। ज्यों अगिनी हियरे में दागे॥
बहु घबराय कहे वो घोड़ा। रन पड़े कहूँ राय से तोड़ा॥
ऐसी मन में बात बिचारूँ। राजा को कोइ छल से मारूँ॥
एक दिवस ऐसा भया भाई। पड़ि चकरी[1] कोइ फौजे आई॥
भया बिगाड़ सहर में भाई। राजा की फौजें चढ़ि आई॥
आमें सामें[2] लगी लड़ाई। बहु रन खेत भया वहँ आई॥
बहुत दिनन से बात बिचारूँ। लगा दाँव अब राजा मारूँ॥
घोड़ा लाय सवारी कीन्हा। फेरा राय गरम करि लीन्हा॥
फेर फार कर एड़ चलाई। जब पहुँचा रन भीतर जाई॥
घोड़ा वही याद करि लयऊ। रन भीतर जा कर अड़ि गयऊ॥
बहु सवार राजा ले घेरा। घोड़ा अड़ा फिरे नहिं फेरा॥
वह फौजन का कहे सिरदारा। तेजी का मारो असवारा॥
तब तेजी मन किया बिचारा। मारा जाय मोर असवारा॥
तेजी कुल पै गारी[3] लाऊँ। राजा के बोलन पै जाऊँ॥
तेजी कुल को नाम धराऊँ। राजा की मन बात बसाऊँ॥
यह विचार मन घोड़ा कीन्हा। तुरत बचाय राय को लीन्हा॥
जो कोइ असल कुलन के भारी। मन में लेवें बात बिचारी॥
असली जो कोइ असल बिचारे। नकली नकल माहिं चित धारे॥
नकली न्यारी नकल चलावे। असली का वह मर्म न पावे॥
नकली असली अंतर भाई। हिरदे तो को बरनि न जाई॥

(१) चारों ओर से घेरा डाले हुए। (२) आमने सामने। (३) कलंक।

॥ दोहा ॥

असली असल जनाइया, घोड़े का दृस्टांत ।
राजा मूरख नकल यह, भाखि बरनि बरतांत ॥

(हिरदे बाच)
॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोला इक बाता । असली को भाखी बिख्याता ॥
हे स्वामी इक और बतावो । नकली को कहि कर समझावो ॥

नकली

(तुलसीदास बाच)

नकल नीच की असल निनारी । मन मलीन बुधि सकल सिहारी ॥
संकर बरन[1] यह वही कहावें । सासतर में उनको यों गावें ॥
सज्जन से वे प्रेम छुटावें । नीचे से नीचा मन लावें ॥
नीच नीच की मसलत[2] मीठी । ऊँची अकल एक नहिं डीठी ॥
ऐसे अधम नर्कपुर गामी । नहिं समझें कोइ सेवक स्वामी ॥
गुरुद्रोही पातक के मारे । हिरदे अपना जन्म बिगारे ॥

॥ दोहा ॥

जनमें नकली जन्म से, जुगल बाप के पूत ।
माता की कीमत वही, सज्जन से नहिं सूत ॥

॥ चौपाई ॥

धोबी कपड़े का मल धोवे । नकल नीच सज्जन मल खोवे ॥
ऐसे धोबी पास बसावे । अधरम पाप धोवाया चावे ॥
खोटे करम करे कुटिलाई । मुख देखन के जोग न भाई ॥
अकल अनीत रीति नहिं जाना । वे भरमें चौरासी खाना ॥
गुरु निंदा संतन की करई । नहिं अज्ञान अधम निस्तरई ॥
सुनु हिरदे यह काग सुभावे । भिस्टा[3] की बैठक वे चावे ॥

(१) वर्ण संकर = दोगला । (२) सलाह । (३) विष्ठा, गलीज़ ।

मिसरी मेवा कधी न खावे। हरदम हिरस वही चित चावे॥
करम जोग करनी की खूबी। उनकी नाव बीच में डूबी॥

॥ दोहा ॥

संतन की निंदा करे, नानक कहत पुकार।
संत को निंदक नानका, बहुरि बहुरि अवतार॥

॥ चौपाई ॥

यह नानक मुख गाये साखी। ऐसे सबही संतन भाखी॥
संत द्रोह सुख कधी न पावे। नहिँ मुख अपने कछु फुरमावे॥
अपने कर्म आप सिर बाँधे। नकली बुधि अपनी नहिँ छाँड़े॥
कूकरमी नर यही कहावे। संतन की निंदा जेहि भावे॥
गुरु से कपट साध से चोरी। की होय निरधन की होय कोढ़ी॥
ऐसे अगली साख पुकारै। जिनको नीक लगै सोइ धारै॥
संत अभाव करे जो कोई। जिनकी करम रेख जस जोई॥
नारद ने गुरु धीमर[1] कीन्हा। कर अभाव गुरु नरक हिँ लीन्हा॥

---

(१) कथा है कि भगवान ने नारद से कहा कि गुरू धारन करो विना इसके काम न सरेगा। नारद ने पूछा किसको गुरू बनाऊँ। जवाब मिला कि जो पहिले रास्ते में भेंटै। नारद वहाँ से चले तो एक मल्लाह मिला और उसी को गुरू बनाना पड़ा। जब भगवान के पास लौट कर आये भगवान ने पूछा कि कहो गुरू मिला। नारद ने ग्लानि से जवाब दिया कि हाँ एक मल्लाह जो पहिले मिला उसी को आपकी शिक्षा अनुसार गुरू बना लिया। भगवान बोले तुमने अपने गुरू की निरादर से चर्चा की इससे चौरासी के भागी हुए। यह सुनकर नारद घबराये और प्रार्थना की कि महाराज किस तरह चौरासी से बचूँ। भगवान ने उत्तर दिया कि जाकर अपने गुरू से दीनता करो और उनकी शरन पड़ो। नारद ने ऐसा ही किया जिस पर उनके गुरू मल्लाह ने उनको यह जुगत बताई कि एक पत्र पर हरि से चौरासी लिखवा कर उसी पर खूब लोटो तो चौरासी कट जायगी। इस प्रकार करने से नारद चौरासी से बचे।

फिर उनसे उन नरक छुड़ाया। फिर उनकी सरनागति आया ॥
कागज पर लिख दी चौरासी। लोटत छूटि गई जम फाँसी ॥
योँ पुरान कहि कर गोहरावे। गुरु निंदक सुख कभी न पावे ॥
अपनी नीच नकल दरसावे। हम चतुराई ऐसी चावे ॥

॥ दोहा ॥

नीच निचाई ना तजे, औगुन करे गुलाम।
काम पड़े पर फिरि खुले, खोटे खोटे दाम ॥

॥ चौपाई ॥

खोटे में खोटा मिलि जावे। खरे खरे की राह चिन्हावे ॥
अपनी खोट मोट करि जाने। खरे खराई नहिँ पहिचाने ॥
खोटे में खोटा है राजी। यहि बिधि बूढ़े मूरख पाजी ॥
उनको अकल कौन अर्थावे। ये गोते अपने से खावेँ ॥
उनको बल्ली नाव न बेड़ा। उनका होय न कधी निबेड़ा ॥
सज्जन की संगति सुख पावे। दुरजन में दूना दुख आवे ॥
अपनी अपनी रीति मिलापा। जैसे को तैसा मिलि थापा ॥
अपनी अपनी चाल चिन्हाई। जैसी गति जैसे ने पाई ॥

॥ दोहा ॥

जैसे को तैसा मिले, जैसी कहे बनाय।
वह उनकी बिधि योँ मिले, एक ठिकाने जाय ॥

॥ चौपाई ॥

वे अपनी करनी फल पावेँ। बोवेँ लुनेँ[1] वही वो खावेँ ॥
असल जीव की करनी न्यारी। वे बोलेंगे बात बिचारी ॥
असली कुल अपने पै जावे। नकली कुल को दाग लगावे ॥
बहुरुपिया कइ रूप बनावे। भाँड़ बने पै नकल दिखावे ॥

(१) काटें।

असल जीव से नकल न होई । नक़ली नकल बनावे सोई ॥
नकली असली का यह लेखा । पुरब[1] कर्म जिनकी जेहि रेखा ॥
जो निज निज जिनकी करतूती । बुधि अनुसार संग मजबूती ॥
जल में कँवल जोंक इकसंगा । उपजे गुन अप अपने अंगा ॥

॥ दोहा ॥

जोंक रुधिर को पियत है, जो कोइ जल में जाय ॥
कँवल रबी[2] देखत खिले, ऐसे अंग सुभाय ॥

॥ चौपाई ॥

कँवल जोंक उपजे इक ठाईं । न्यारे न्यारे गुन बिलगाई ॥
अब हिरदे सुनु और सुनाऊँ । साध असाध उभै[3] गति गाऊँ ॥

साध के लच्छन

साध वोही जो सब कछु साधे । नहिँ अनुमान बिरत अनुरागे ॥
संजम बिना साध नहिँ होई । बिन साधे साधू नहिँ सोई ॥
स्वाल करे नहिँ मुख से माँगे । बैठे रहे नाहिँ इक जागे[4] ॥
गदला पानी बंधन सोई । बहता सदा निर्मला होई ॥
जग की आस कबहुँ नहिँ राखे । सतगुरु बानी को नित भाखे ॥
खाय पिये पल्ले नहिँ बाँधे । पैसा न पोट उठावे काँधे ॥

॥ दोहा ॥

खाय पिये उतना रखे, बाकी रखे न पास ।
और आस ब्यापे नहीँ, सतगुरु का बिस्वास ॥

॥ छन्द ॥

हिरदे गरीबी दीनता, दृढ़ साध को निस्चै सही ।
खोटी खरी कोइ कहन कहे, जिनकी नहीँ मन में लही ॥
अपनी रहनि रस रीति को, आठो पहर जाँचे रही ।
सतगुरु वचन मुख बाक बानी, जानि सोइ समझे सही ॥

---

(१) अगले । (२) सूरज । (३) दोनों की । (४) जगह ।

सबही सनातन संत ने, गुरु बैन[१] की आँखी कही ।
हिये में समझ धरि कर करे, सोइ साध गुरु सूरत लही ॥
निसदिन चरन में लौ लगे, पल एक नहिँ बाहर गई ।
हिरदे गुरू के ध्यान बिनु, छिन एक नहिँ न्यारी रही ॥

॥ सोरठा ॥

साधन की यहि रीति, प्रीति परस परखें वही ।
गुरु चरनन जिन चीत, रमक[२] रीति जाने जोई ॥

॥ चौपाई ॥

हिरदे सज्जन साधू सोई । यहि बिधि परख चले जो कोई ॥
हेहिरदे यह साध सुभाऊ । निस दिन जिन के चरन उमाऊ[३] ॥
यहि बिधि साध रहे परबीना । निस दिन पकरि प्रेम रस पीना ॥
उनका संग करे जो कोई । जीवन मुक्त जासु की होई ॥

असाध के लच्छन

और असाधू की सुनु रीती । आसा लोभ परख की प्रीती ॥
जो कोइ देने को ले आवे । प्रीति परस्पर बहुत जनावे ॥
ऐसी चित्त बिर्ति अनुसारा । कहे मुख से हम जग से न्यारा ॥
मन का लोभ भोग भरमावे । ममता माया नित्त नचावे ॥

॥ दोहा ॥

मन की ममता ना घटी, लटी[४] न छूटे चाल ।
हाल हाथ से दे कोई, ले झोली में डाल ॥

॥ चौपाई ॥

खेती बैल महल सब राखे । हम हैं साध कहे अस भाखे ॥
बट्टा ब्याज करे दिन राती । खौं[५] खाँड़े[६] गाड़े बहु भाँती ॥

(१) वचन । (२) कुछ । (३) उमंग । (४) नीच । (५) भुँइघर, तहखाना । (६) खोद कर बनाना ।

अपनी मरन जिवन सुधि नाहीँ । साध हुए केहि कारन भाई ॥
भेख किया पर रेख[1] न जानी । करम कांड करनी पहिचानी ॥
योँ यहि भाँति रहनि दिन राती । साधू नाम करे उतपाती ॥
जो कोई दरसन को जावे । हाथ मिठाई देखि सिरावे[2] ॥
जो कोइ राजा बाबू आवे । ले परसाद सामने जावे ॥
ऐसे मन की बिर्ति बनाई । देखो बात परखि सब भाई ॥

॥ दोहा ॥

यह रुजगारी साध की, बरनि बताई बात ।
हाथ कछू नहिँ अंत को, पंथ मिला नहिँ साथ ॥

पंथ

॥ चौपाई ॥

अब पंथा पंथी दरसाऊँ । पूछे पंथ न जाने गाऊँ ॥
पंथ नाम मारग को होई । सो पंथी बूझा नहिँ कोई ॥
गाय बजाय खंजरी पीटी । गावत मुख में पड़ि गई सीटी ॥
जो संतन का सब्द बिचारा । सूझे पंथ वार अरु पारा ॥
सब्द संधि कछु और बतावे । यह नहिँ समझ सोध[3] मन लावे ॥
गुरु बानी संतन की बूझे । निर्मल नैन आँखि से सूझे ॥
गुरु चेला मिलि पंथ चलावा । संत पंथ की राह न पावा ॥
यहि लेखा देखा उन माहीँ । पूजा को उनका मन चाही ॥

॥ दोहा ॥

पूजा के कारन करे, सब बिधि भाँति उपाधि ।
आदि अपन जाने नहीँ, कहने को है साध ॥

साध शिरोमनि या संत

अब सुनु कहूँ सिरोमन साधू । उनकी मति गति कहनि अगाधू ॥
उनकी सुरति कँवल पद माहीँ । पदम पार बेनी नित न्हाई ॥

---

(१) होनी, आक़िबत । (२) सराहै । (३) विचार ।

मंजन करि करि करते ध्याना । पदम सुरति सतगुरु अस्थाना ॥
पदम कँवल पर आसन लावे । जहँ कोइ साध सूरमा जावे ॥
सुन्न और महा सुन्न के पारी । जहँ वह जाय लगावे तारी ॥
सत्तपुरुष के दरसन पावे । तीन लोक के पार कहावे ॥
यह सब संत महात्मा गाये । साखी सब्द माहिँ दरसाये ॥
जो सब्दन का करे बिचारा । जब जिव का पावे निरबारा ॥

॥ दोहा ॥

सब्द साखि में संधि है, अंध लखे नहिँ कोय ।
यह माया फरफंद से, बंध न टूटा सोय ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

साध साध का एक बिचारा । तुम कहि भाखा चारि प्रकारा ॥
साध साध सब एक बतावा । तुम बरनन कीन्हा कइ भावा ॥

साध गति

(तुलसीदास बाच)

साधन की है रीति अनेका । साधू मति है अगम अलेखा ॥
यह सब भेख नाम से पूजे । साधू की गति बिरले सूझे ॥
षटदर्सन को बेद बखानो । साध रीति फिर भिन[1] करि जानो ॥
पंथ रीति भेखन के माहीँ । योँ सब संत कहेँ गोहराईं ॥
जो प्रयाग बेनी[2] पद पावे । सुनु हिरदे सो साध कहावे ॥
सतगुरु के पूरन पद बासी । जहँ नहिँ जाय सके अबिनासी ॥

॥ दोहा ॥

जो संतन सतगुरु कहा, पूरन पद के माहिँ ।
चरन कँवल बेनी बहे, नित जहँ जावे न्हाय ॥

॥ चौपाई ॥

यह मारग साधू मत चीन्हा । सो समझे सज्जन परबीना ॥

---

(१) जुदा । (२) सुन्न ।

(हिरदे बाच)

साधू की करनी दरसाई । रहनी रमज[1] सभी समझाई ॥
गृस्थी का कहो कौन निबेड़ा । सतसँग किया न सतगुरु हेरा ॥
सिर पर मोट[2] अपरबल भारी । जुगन जुगन उतरी न उतारी ॥
आठ पहर वाही में लागे । कर्म भोग पूरबले जागे ॥
वह कहो कैसा करे बिचारा । आठ पहर आफत में हारा ॥
वोहि कभी कहुँ होय निबेड़ा । नर तन नाहिँ मिले जग फेरा ॥
जीवन तुच्छ जक्त के माहीँ । नर देही पावन को नाहीँ ॥

॥ दोहा ॥

नर देही दुर्लभ कहेँ, मिलै न बारम्बार ।
धार बड़ी भवसिन्धु की, क्योँकर उतरे पार ॥

गृहस्थी का कैसे निबेड़ा होय

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

यह भवसागर अगम अथाहा । यामेँ लगे न बल्ली थाहा ॥
सतगुरु संत भाग से पावे । की उनकी वे दया बसावेँ ॥
जो कोइ और उपाव लगावे । भवसागर गम[3] कभी न पावे ॥
काल दिवाल बाट पर कीन्हा । घाटा घेर आपने लीन्हा ॥
कूँची[4] हाथ संत के घाटा । ताला खुले मिले जब बाटा ॥
और तने[5] कोइ राह न पाई । करि करतब सब देँहि गँवाई ॥
सेवा साध करै दिन राती । तौ सुभ के फल आवे हाथी ॥
साँचे भाव प्रेम से पूरी । तौ कछु पाप होयँगे दूरी ॥
कोई आतमा भूखी आवे । वाको देखि दया दिल लावे ॥
वो अहार की कीमत नाहीं । मानो सब बैराट जेँवाई ॥

---

(१) भेद । (२) गठरी । (३) थाह । (४) कुंजी । (५) तरह ।

(पिँडुका पिँडुकी की कथा)

ब्यास भागवत माहिँ बखाना । पिँडुका पिँडुकी का दृष्टाना ॥
जेहि बृच्छ पर करेँ बसेरा । नीचे कीन्ह मुसाफिर डेरा ॥
त्रिया पुरुष दोउ बात बिचारे । भूखा रहा मुसाफिर द्वारे ॥
ठंढ की सीत लगी जब भाई । लकड़ी बीनि मुसाफिर लाई ॥
बन मेँ आग कहाँ से आवे । देह जुड़ानी सीत सतावे ॥
तब पिँडुकी मन किया बिचारा । गृहस्थी पर धिरकारी डारा ॥
भूखा रहा मुसाफिर द्वारे । घर मसान सम जानि निहारे ॥
जब पिँडुकी उड़ि अगिनी लाई । ऊपर से उन दीन्ह गिराई ॥
जबहिँ मुसाफिर आग जराई । उठ करि बैठ तापने भाई ॥
पिँडुकी पिँडुका बहु दुख भीँजे । भूखा रहा कौन बिधि कीजे ॥
पिँडुकी गिरी आगि के माहीँ । फिर पीछे पिँडुका गिर भाई ॥
दोऊ जरे आग के माहीँ । भूँजि मुसाफिर भूख जुड़ाई ॥
भाखी ब्यास कथा के माहीँ । भूखा न रहे द्वार पर जाई ॥
जेहि घर द्वारे भूख रहाना । वह घर कहे मसान समाना ॥
बड़ा दोष पातक वहि लागे । भूखा रहे द्वार के आगे ॥

॥ दोहा ॥

जो द्वारे भूखा रहे, गृहस्थी मेँ होइ पाप ।
आप अपनपौ परखि के, भूखे को संताप ॥

॥ चौपाई ॥

हे हिरदे यह गृहस्थ बिचारा । यहि बिधि से करि लेइ गुजारा ॥
गृहस्थी माहिँ बने कछु नाहीँ । भूखा देखे देइ जुड़ाई ॥
जाति पाँति नहिँ देखे भाई । भूखा कोइ होय देइ खिलाई ॥
जो अभ्यागत[१] भूखा आवे । साध जानि के सीस नवावे ॥

(१) जो इसके घर आवे, मुसाफिर ।

जो परसाद होय घर माहीँ । उनके सन्मुख आनि चढ़ाई ॥
वह भोजन को भोग लगावे । उनकी दया पाप नसि जावे ॥
यही भाँति जग जीव गुजारा । और भाँति नहिँ पावे पारा ॥
जो कोइ समझि लखे यह बानी । गृहस्थी धर्म करे परमानी ॥

॥ दोहा ॥

गृहस्थी होय हिरदे दया, भूखे कछू खिलाइ ।
बाक सनातन योँ कहे, सभी सभी गोहराइ ॥

॥ छंद ॥

गृहस्थी धरम यह भाँति, कोइ भूखा दुवार रहे नहीँ ।
सरधा बने कछु होय जो जस, आनि के लावे सही ॥
हिरदे दया दिल धोर करि, यहि भाव की भिच्छा कही ।
आतम दया मन माहिँ बरते, तत्त की बातें यही ॥
जिव आपु सम सब का लखे, दुख भूख की भारी भई ।
ऐसे बिचारे बात जब, वोहि पुन्न की कहो का कही ॥
जग एक इक जिव भूखा पोखे[1], कोटि फल उनको भई ।
ऐसे रहै जग माहिँ गिरही, वहि जीव को जीवन सही ॥

॥ सोरठा ॥

जीवन जग में सार, जो गिरही होइ अस रहे ।
पावे पुन्न अपार, स्वर्ग लोक बासा करे ॥

(हिरदे वाच)

॥ चोपाइ ॥

स्वर्ग पुन्न से पावे कोई । ऐसी तुमने बरनि बिलोई[2] ॥
पुन्न जोग से स्वर्ग सिधावे । पुन्न भोगि मृत लोकहि आवे ॥
वर्स्ग नर्क नहिँ हुआ निबेड़ा । फिर कीन्हा चौरासी फेरा ॥
आवागवन छुटा नहिँ स्वामी । जन्म धरे जिव अंतरजामी ॥

(१) पालन करै । (२) निर्नय किआ ।

जग निस्तार पार नहिँ पाये । यह तो आवागवन समाये ॥
वह उपदेस दिया नहिँ कोई । जासे आवागवन न होई ॥
सिर भरि बूड़ रहा जग सारा । माया मोह बँधा परिवारा ॥
जड़ता ने सब बुद्धि नसाई । कैसे भव जिव उतरि जुड़ाई ॥

॥ दोहा ॥

स्वर्ग भोग पुन[1] के उदै, भोग करे भुगताय ।
पुन्न भोगं जब करि चुके, फिर चौरासी जाय ॥

सतसंग की महिमा

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे जग का यहि लेखा । बिन सतसंग न होय बिबेका ॥
बिना बिबेक एक नहिँ आवे । एक बिना नहिँ दुरमति जावे ॥
दुरमति से दुनिया भई भाई । दुनिया दुरमति कीन्ह बनाई ॥
यह ऐसे बूड़ा संसारा । संसय आस बँधा सिर भारा ॥
बिन सतसंग बिबेक न आवे । बिना बिबेक ज्ञान कहा पावे ॥
बिना ज्ञान बुधि सुधि नहिँ होई । बिना बुद्धि बूझे नहिँ कोई ॥
बिन बूझे नहिँ आँखी सूझा । योँ जग अंधा भया अबूझा ॥
बिन सतसंग बूझि नहिँ पावे । बिना बूझि नहिँ तिमिर नसावे ॥
संत दया अंजन अथवेँ । जब यह तिमिर आँख से जावे ॥
सतसँग सब संतन गुहराया । तन मन दीन हुए जिन पाया ॥

॥ दोहा ॥

केई[2] मूरख भटके फिरेँ, लगा न उनके हाथ ।
साथ केई दिन से लगे, जगे न बूझी बात ॥

(१) पुन्न । (२) कोई ।

॥ चौपाई ॥

सतसँग केई दिन करै जो कोई । बिना दया नहिँ वासिल[1] होई ॥
बिन वासिल कछु पड़े न हाथा । सतसंगति नहिँ पावे बिधाता ॥
बिन सतसंगति कधी न पावे । यहि बिधि संत सभी गुहरावे ॥
सतसँग की महिमा कहेँ भारी । सो कोइ सज्जन साध बिचारी ॥
करे घड़ी इक कोइ सतसंगा । सो वह करे जक्त भव भंगा ॥
जिन अपने में लीन्ह बसाई । निकरे तिमिर आँखि खुलि जाई ॥
जो कोइ सतसँग प्रानी पावे । जिनका आवागवन नसावे ॥
हिरदे गृही[2] संगत कहा जाने । जग फंदे मेँ जीव भुलाने ॥

॥ दोहा ॥

जीव दया पाले कोई, इनको इतना बहुत ।
मौत खड़ी सिर ऊपरे, मूरख बाँधे थोथ[3] ॥

॥ चौपाई ॥

योँ हिरदे गृही का परभावा । भूखे दया भाव दरसावा ॥
और तने[4] नहिँ होय गुजारा । जिव आतम सब एक पसारा ॥
दयाहीन नर दुष्ट कहावे । नर तन नाहक जन्म गँवावे ॥
सतसँग बिना भरम नहिँ भागे । पुरबले अंकुर बिन नहिँ जागे ॥
सतसँग सतसँग सब गुहरावे । सतसँग का कोई अंत न पावे ॥
बिस्वामित्र बसिस्ठ प्रसंगा । तप सतसंग कहे दोउ अंगा[5] ॥

---

(१) मेला । (२) गृहस्थी । (३) मुँह । (४) तरह । (५) कथा है कि एक बार वशिष्ठ जी विश्वामित्र जी के घर गये तो विश्वामित्र ने उनको अपने साठ हज़ार बरस की तपस्या का आधा फल भेँट किया । कुछ दिन पीछे विश्वामित्र जी वशिष्ठ जी के आश्रम पर गये तो बशिष्ठ जी ने दो घड़ी सतसँग का फल उनको भेँट किया । विश्वामित्र जी ने जिनको अपने तपोबल का बड़ा अहङ्कार था इस भेँट को अपनी भेँट के मुकाबिले में बड़ा तुच्छ समझा और दोनों ऋषीश्वरों में बहस होने लगी कि साठ हज़ार बरस की तपस्या बढ़ कर है या दो घड़ी का सतसंग । अंत में विश्वामित्र न्याव चुकवाने को शेष

साठ हजार बरस तप कीन्हा । उभै[1] घड़ी सतसँग तिन दीन्हा ॥
दोइ घड़ी सतसंगति आगे । तुली तपस्या तुले न लागे ॥

॥ दोहा ॥

कई बरस तप करि मरे, बीते साठ हजार ।
दोइ घड़ी सतसंग से, तुला सेस का भार ॥
बिस्वामित्र बसिस्ठ की, भई परस्पर बाद ।
उन तप को कीन्हा बड़ा, उन सतसंग अगाध ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

यह स्वामी सतसँग की महिमा । जो कहुँ मिले करे इक लहमा ॥
भाग बड़े सज्जन के सोई । वे सतसँग में रहे समोई ॥
अब वह कथा कहो बिस्तारी । जुगन जुगन की पूछूँ सारी ।
सतजुग सब से बड़ा बतावें । कलिजुग छोट सबै मिलि गावें ॥
कहो स्वामी मुख बैन बिलासा । याका भाखो भेद खुलासा ॥

(तुलसीदास वाच)

सुनु हिरदे यामें दोइ बाता । याकी बूझु बचन बिख्याता ॥
जग रचना को सतजुग भारी । जिव निस्तार कलू अधिकारी ॥
भिन भिने या का भेद सुनाऊँ । तोको बरनि भाखि समझाऊँ ॥

नाग के पास गये । शेष नाग ने कहा कि मेरे मस्तक पर सारी पृथ्वी का भार है उसको जरा सम्हाल लो तो निर्नय करूँ । विश्वामित्र ने अपने साठ हजार बरस का तपोबल लगाया पर पृथ्वी तनिक न हटी, तब शेष नाग ने पूछा कि कुछ और पूंजी भी है । विश्वामित्र ने बड़ी हेठाई की निगाह से कहा कि हाँ वही दो घड़ी के सतसंग का फल जो वशिष्ठ जी ने दिया है । शेष नाग बोले कि खैर उस को भी लगा कर आजमा देखो । ज्यों ही ऋषिजी ने उसको लगाया पृथ्वी दूर हट गई—तब वह बोले कि अब निर्नय करिये, शेष नाग ने जवाब दिया कि अब भी निर्नय करना बाकी है जब तुम ने देख लिया कि वह अपार भार जिसे तुम्हारा साठ हजार बरस का तपोबल रंचक न हटा सका वह दो घड़ी के सतसग के महात्म से दूर हट गया । विश्वामित्र लज्जित हो कर लौट आये । (१) दो ।

॥ सोरठा ॥

बिध बिधि भाखूँ बैन, कहन कोई राखूँ नहीं ।
सुनने में सुख चैन, नैन निरख दीसे वोही ॥

सतजुग का प्रभाव

॥ चौपाई ॥

अब सुनु याको कान लगाई । प्रथम कहूँ सतजुग गति गाई ॥
जब लछमी प्रभुता बिस्तारी । माया सुख कीन्हा अधिकारी ॥
उमर बहुत कल्पन की कीन्हा । जोधा जोर अधिक लखि लीन्हा ॥
कंचन भूमि पिरथिवी कीन्ही । मट्टी मीठ लगे जस चीनो ॥
एक कमावे घर दस खावे । खेती में सोगुन उपजावे ॥
द्रव्य अपार अपूरब भारी । जग माया कीन्हा बिस्तारी ॥
हीरा रतन जवाहिर सोई । कञ्चसे रतन महल के जोई ॥
इन बातन सतजुग है भारी । माया छलन किया बिस्तारी ॥
इन आसा में जीव जुड़ावे । बंधन ले आसा फिरि आवे ॥
ऐसे जक्क बाँधि बिस्तारा । जीव सुखी माया अधिकारा ॥

॥ दोहा ॥

इन बातन सतजुग बड़ो, पिया घर जीव भुलाय ।
यह सुख माया में बँधे, उलटि काहे को जाय ॥

॥ चौपाइ ॥

उलटि जीव भव सागर आवे । बंधन से मालिक बिसरावे ॥
सतजुग ध्यान हाड़ में प्राना । खान पिवन बिन कस्ट बखाना ॥
कास्ठा फल तप राज कराई । दोनों जक्क भोग के माहीं ॥
इन वातन सतजुग वढ़ गाया । पिया मिलन नहिँ जीव बताया ॥
यासे सतजुग छोट बतावे । पिया मिलन की राह न पावे ॥

कलिजुग का प्रभाव

कलजुग संत बड़ा ठहरावें । संत उतरि पिय घर से आवें ॥
नाम डोरि दे सुरति लखावें । सुरति डोरि जिव पिय घर जावे ॥
सब संतन कलु बड़ा बतावा । यामें जीव अगनपौ पावा ॥

॥ दोहा ॥

बड़ा कलूजुग सब कहें, संत बचन के माँहिं ।
रामायन के बाक में, तुलसी कही बनाय ॥

॥ चौपाई ॥

कलु कर एक पुन्न परतापू । मानस पुन्न होय नहिँ पापू ॥

॥ दोहा ॥

कलजुग सम नहिँ आन जुग, जो नर करे बिस्वास ।
नाम डोरि गहि भव तरै, जा मन तुलसीदास ॥
कलजुग सम नहिँ आन जुग, संत धरें अवतार ।
जीव सरन होइ संत के, भवजल उतरै पार ॥

॥ चौपाई ॥

तुलसी कही कलू की साखी । यहि बिधि योँ सब संतन भाखी ॥
द्वापर त्रेता का यह लेखा । ये जुग में औतार बिसेखा ॥
मारि निसाचर जग के माहीँ । यह लीला उन ने दरसाई ॥
जीव जेहि घर से चलि आया । वहि घर राह नाहिँ दरसाया ॥
मार कूट संग्राम सुनाया । आतम हत जिव मारन गाया ॥
संत दयाल दया अर्थावें । जीव हतन की राह छुड़ावें ॥
अज्ञानी को ज्ञान बतावें । दे उपदेस दया उपजावें ॥
अंकूरी जिव में धरि लेई । हिरदे सुद्ध हरख हिय जेई ॥

॥ दोहा ॥

संत चरन बिस्वास से, कलजुग में निरधार।
सतजुग तो बंधन करे, कहें सब संत पुकार॥

॥ छन्द ॥

हिरदे कलूजुग जोग है, सब संत ने ऐसी कही।
लेवें संत औतार जेहि जुग, जीव को सुधि बुधि दई॥
हिये के तिमिर खुलि ज्ञान उपजे, संत की सरना लई।
दृढ़ कै दिये उपदेस मन को, भोग बिष त्यागे रही॥
इतनो कलू परताप जग में, सब्द को समझै सही।
सतजुग सुनो सब रीति उनकी, उलटि सुधि घर ना लई॥
लीला बिलोके कृतृम बस, जिव अंध का अंधै रही।
सतजुग जगत में नीक कहें, हिरदे सुनो बातें यही॥

॥ दोहा ॥

सतजुग की बरनन[1] करें, कलजुग कहत मलीन।
सब दुनिया ऐसी कहे, संत बचन मुख चीन्ह॥

॥ चौपाई ॥

संतन ने कलु नीक बताया। सतजुग का इतबार न आया॥
त्रेता द्वापर कृतृम देखा। मार कूट रस रीति बिसेखा॥
यामें नाहिं जीव को काजा। ये जुग म भूमी भये राजा॥
राजकाज जग रीति अनीती। जो जिन करी भई जस रीती॥
यहि बरनन कछु हाथ न आवे। को कहि कहि सिर मूड़ पचावे॥
यह हिरदे बकवायद[2] लेखा। आवत कछू हाथ नहिं देखा॥

सतसँग की महिमा

जो सतसंग मिले कोइ बारा। घड़ी एक दोइ होइ कृतारा[3]॥
बड़े भाग सतसंगति होई। जब अनुराग जीव में जोई॥

(१) बड़ाई। (२) बकवाद। (३) कृतार्थ।

॥ दोहा ॥

सतसंगति यह जीव को, लगे जो अंदर जाय ।
माहिं[1] भाल खटकत रहे, काल बली को दाँव ॥

॥ हिरदे वाच ॥
॥ चौपाई ॥

हे स्वामी जो सतसँग पावे । उनको भर्म कहो कस आवे ॥
यह मोरे मन भया बिचारा । सो स्वामी कहिये निर्बारा ॥

॥ तुलसीदास वाच ॥

हिरदे उन सतसंग न कीना । अंदर चुभक[2] नाहिँ रसपीना ॥
ज्योँ पानी पाहन पर डारा । ऊपर गील सूख वोहि बारा ॥
अंदर हुआ गील नहिँ भाई । कहो सूखे नहिँ कहा कराई[3] ॥
ज्योँ मिसरी पानी मेँ डाली । मिसरी घुल पानी रस चाली ॥
पानी मिसरी इक रँग राता । जल मीठा मिसरी के साथा ॥
घुली मिठाई जल के माहीँ । सो सरबत मीठा भया भाई ॥

॥ दोहा ॥

जल मिसरी कोइ ना काहे, सर्बत नाम कहाय ।
योँ घुल के सतसँग करे, काहे भरम समाय ॥

॥ चौपाई ॥

उन हिरदे सतसंग न कीन्हा । जिनको आया भर्म यकीना ॥
बिन माँगे से दूध दिवावेँ । माँगे से पानी नहिँ पावे ॥
जिन पर उनकी मेहर कहावे । पानी से वे दूध दिवावेँ ॥
जो उनकी मन मौज निहारे । दिल मेँ होय सोई धरि धारे ॥
यह सतसंग गूढ़ गति गाई । यह कोइ रतन पारखी पाई ॥
जैसे भाँग पिये कोइ भाई । नसाबाज जो जाय पचाई ॥
नया कोई पीवन को जावे । उसके तन को तुरत घुमावे ॥
ऐसे सतसँग का रस भारी । पीवत आवे तुरत खुमारी ॥

---

(१) अत । (२) डुबकी लगा कर (३) कहो तुरत सूख न जाय तो क्या करै ।

॥ दोहा ॥

सूरा रन में सीस को, धरे हथेली माहिँ ।
सरा[१] सती जरि जाय जो, पिल पैठे घर माहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

छाती बिन सूरा ज्यों पेले । सूरा बिन सिर धड़ से खेले ॥
ऐसा जो मारग पग धारे । धड़ ऊपर से सीस उतारे ॥
दूध छठी का निकसे भाई । सिर बेचे मारग जिन पाई ॥
यह नहिँ दूध भात की बाता । बैठे खान चलावे हाथा ॥
जो यह राह सहज की होती । तो ब्राह्मन क्योँ बाँचत पोथी ॥
तप अरु जोग कठिन पहिचानो । इनहिँ राह अटपट करि जानो ॥
ऐसा मारग बिकट अतोला । पचि पचि मरे किनहुँ नहिँ तोला ॥
संत राह रस्ते की बातेँ । सतगुरु बिना कोई नहिँ पाते ॥

॥ दोहा ॥

राह रकाने संत के, मारग को को जाय ।
बड़े बड़े महातमा थके, कहे को अगम अथाह ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी मोहिँ बरनि बतावो । संतन की गति गाय सुनावो ॥
कहो मारग केहि देस रहाई । कहँ होइ राह देस को जाई ॥
कैसा देस बरनि मोहिँ कीजे । हिरदे दया हिये मेँ लीजे ॥

संत देश

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

जहँ नहिँ पृथ्वी पवन अकासा । पाँच तत्त मारग नहिँ स्वासा ॥
चाँद सुरज तारागन नाहीँ । जोगी ब्रह्मा बिस्नु न जाई ॥

---

(१) अग्नि

दस अवतार राह नहिँ जानी । निरंकार नाहिँ निर्बानी ॥
जोति सरूप न पहुँचे भाई । नहिँ ओंकार अ..र न जाई ॥
पारब्रह्म जो कहिये ऐसा । जाके आगे सतगुरु देसा ॥
जाके परे संत अस्थाना । उनका देस उनहिँ पहिचाना ॥
हे हिरदे यह अकथ बिलासा । उनकी गति उनही परकासा ॥
यहि रे अपूरब को को जाने । बेद नेत कहि संत बखाने ॥
जहँ नहिँ साखी सब्द न बानी । यह अदेख गति किनहुँ न जानी॥
वे करि दया देइँ दरसाई । उनकी मेहर बिना नहिँ पाई ॥
देखन मेँ नहिँ नजरे आवे । हिये दृग नैन खुले जब पावे ॥
सो अंजन है उनके पासा । दया बिना और झूँठी आसा ॥
पल माहिँ दया दरसावेँ । कृपावंत संत को पावे ॥
केइ मूरख पचि मुए अनेका । उनकी मेहर मिले नहिँ ठेका ॥

॥ दोहा ॥

हे हिरदे यहि अकथ गति, कही सब संत विचार ।
संत सिरोमनि रीति को, पावे को निरधार ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे ने बचन सुनाया । यह तो समझ माहिँ मोरि आया ॥
कपट भेष जो साध कहावे । भेष बनाय ठगी करि लावे ॥
देखत साध सरोतर[1] भाई । अंतर कपट छलन को चाही ॥

कपट भेष--बाघ का दृष्टांत

(तुलसीदास वाच)

॥ दोहा ॥

तब तुलसी बोले सुनु भाई । याका एक प्रसंग सुनाई ॥
इक बन बाघ रहे बन खंडी । बन में मठ देवी जहँ चंडी ॥

---

(१) हर प्रकार से पूरा ।

वोहि अस्थान ठिकाने भाई। बाघ वहीँ बिसराम कराई ॥
धुंधूकार बड़ा बन भारी। एक दिवस गये बाघ सिकारी ॥
सब दिन फिरे सिकार न पाई। साँझ पड़े अस्थान सिधाई ॥

॥ दोहा ॥

खुध्या[1] में ब्याकुल हुए, लगी सिकार न हाथ।
राति बिताई बिपति से, फजिर किया उतपात ॥

॥ चौपाई ॥

बाघ साध का भेष सँवारे। फूँकि पाँव भूमि पर डारे ॥
बिन फूँके नहिँ पाँव उठावे। फूँकि भूमि जब पाँव चलावे ॥
येही भाँति मारग में आवे। मानो सुद्ध साध दरसावे ॥
बंदर एक बृच्छ पर बैठा। देखी अचरज बात अनूठा ॥
बाघ फूँक धरि पाँव चलाई। यह अचरज देखा बढ़ भाई ॥
बंदर के मन भया अचंभा। पिरथी फूँकि धरे पग लंबा ॥
बृच्छ नजीक पास जब आया। जब धीमी सी चाल उठाया ॥
बंदर ने पूछी हे भाई। तुम हो कौन कहाँ से आई ॥

॥ दोहा ॥

अरे बनचर हम साध हैँ, दया भाव के माहिँ।
फूँकि पाँव हम योँ धरेँ, जिन चींटी मरि जाय ॥

॥ चौपाई ॥

बंदर के मन में उठि आई। याके चरन धरूँ सिर जाई ॥
ऊँचे उतरि डार पर नीचे। जा करि पड़ो पाँव के बीचे ॥
तब बंदर ने बचन उचारा। स्वामी धूप बड़ी यहि बारा ॥
करो बृच्छ बिसराम निवासा। मैँ सेवक तुम्हरो निज दासा ॥

---

(१) भूख।

हौले पाँव उठाये आये । बृच्छ छाँह में आसन लाये ॥
बंदर उतरि पाँव सिर दीन्हा । तबही पकरि डाढ़ में लीन्हा ॥
हे भाई तू सेवक प्यारा । साधू को दीन्ही ज्योनारा ॥
आज अहार बनो भल भाई । तुम कीन्ही मोरी सेवकाई ॥

॥ दोहा ॥

बंदर को हाँसी लगी, सुने कपट के बैन ।
बाघ मनै बिसमय भई, क्यों हाँसे सुख चैन ॥

॥ चौपाई ॥

कहे बंदर हाँसी यों आई । एक अचंभा देखा भाई ॥
जब बन बाघ पूछिया भाई । तो को हाँसी क्यों करि आई ॥
तब बंदर बोला अस भाऊ । ढील करो मैं बचन सुनाऊँ ॥
जब बन बाघ ढील मुख कीन्हा । बंदर छलाँग डारि[1] को लीन्हा ॥
जब बिस्वास बाघ बुलवावे । नहिँ बंदर वाको पतियावे ॥
ऐसे कपट साध जग जानो । गुन मन ज्ञान कहा पहिचानो ॥
बन्दर कहे सुनु बाघ प्रसंगा[2] । अब मैं कबहुँ करूँ नहिँ संगा ॥
सर्प उरगाने की जस बाता । अस मोहिँ आज कीन्ह तुम घाता ॥

॥ दोहा ॥

यह मन तौ बंदर कहा, बाघ कहा है ज्ञान ।
उरगाना कहेँ गरुड़ को, काल सरप पहिचान ॥
ज्ञान पकरि मुख में लिया, मन बंदर को जाय ।
गरुड़ काल मुख सरप को, भच्छन को रे उपाय ॥
बाघ कहे बन्दर कहो, सरप उरगाने बात ।
कहो कैसे उनकी भई, सो बन्दर कहो साख ॥

---

(१) डाल । (२) बात ।

(उरगाने और साँप की कथा)

॥ चौपाई ॥

कहे बंदर सुनु रे बन बाघा। तैँने छल कीन्हा यहि जागा ॥
साध जान तोरे ढिँग आया। तैँने मोको डाढ़ दबाया ॥
जैसे उरगाने ने छल कीन्हा। उनने बचन सरप को दीन्हा ॥
बचन दिये पर दगा बिचारा। जेहि बिधि कीन्हा हाल हमारा ॥
उरगाना इक जाति मुसाफिर। रहे बड़चोर चलन में काफिर ॥
डेरा कीन्ह सहर इक माहीँ। खाने में अधि रात बिताई ॥
घोड़ा एक रहे उन पासा। तसमा टूटा करे तलासा ॥
वोहि दुकान बनिये से पूछा। तमसे बिन घोड़ा रहे छूछा ॥

॥ दोहा ॥

बनिये से उन पूछिया, कहाँ चमार का ठाम।
तसमा टूटि बनावने, यह जल्दी का काम ॥

॥ चौपाई ॥

आधि रात जब गई बिताई। पूछत फिरै चमार का ठाँई ॥
ढूँढ़त गये चमार के पासा। तसमा एक बनावो खासा ॥
तब चमार बोला हे भाई। रात पड़े अब नहिँ बनिआई ॥
दिया न बाती तेल उजाला। मोसे बने नाहिँ ततकाला ॥
वाको टका दिये दो चारा। फजिर बने सो करो बिचारा ॥
इतनी कहे मकाने आया। उस चमार ने डोल बनाया ॥
काट कूट करि करी तयारी। कुंडली[1] पानी माहिँ तगारी[2] ॥
वामेँ घरि पत्थर से दाबा। जब चमार सोया ले लाभा ॥

॥ दोहा ॥

ठंढ मास के दिवस मेँ, सरप कहूँ चलि आय।
कुंडली करी तगार में, माहीँ पैठे जाय ॥

---

(१) गेँडुरी बना कर। (२) बरतन जिसमेँ चमड़ा भिगाते हैँ।

॥ चौपाई ॥

ठंढ में बैठ रहा जल माहीं । तन में होस रहा नहिं भाई ॥
फजिर भये उरगाना आई । राह चले जल्दी करि भाई ॥
सरप कुँडलिया मारे बैठा । ठंढ माहिं पानी में ऐंठा ॥
लीन्हा तुरत चमार उठाई । भूल गया चमड़े को भाई ॥
दोच दाच[1] चपटा कर दीन्हा । रापी[2] ले मुख[3] चीरा कीन्हा ॥
उरगाने लीन्हा ततकाला । उनने ले तँग में कस डाला ॥
होइ सवार मारग में लागा । पाँच कोस निकले वोहि जागा ॥
सीत उड़ी रबि तेज दिखाना । गरमी भई सरप अकुलाना ॥
उरगाने को मालुम नाहीं । सरप कसा घोड़े के माहीं ॥
मारग बाँबि सरप इक बैठा । कहि अवाज इक बचन उलेटा ॥
कसा सरप घोड़े पर देखा । तोको लाज न आवे नेका ॥
काला होइ कर डसता नाहीं । तैं ने सरप जाति लजवाई ॥
जब लगि काम पड़ा नहिं काले । तैं का बोले बाँबी वाले ॥
माल गड़ा जिस पर तैं बैठा । काम पड़ा नहिं खाया खेटा ॥
माल गड़े पर तैं खुस भाई । वह गरूर मन में भरि आई ॥
मेरी दसा डसन की नाहीं । जब तूने यह नोक चलाई ॥
दोनों बोल सुने उरगाने । घोड़ा छोड़ तुरत अलगाने ॥
सर्प कसा घोड़े तँग माहीं । देखा जब दिल दहसत खाई ॥
घोड़े कसा सर्प जोइ बोला । अब कहुँ डरे जाय मत डोला ॥
खोल निकाल तंग से न्यारा । तोको नहिं मैं डसने हारा ॥
तंग खोल करि बाहर काढ़ा । मोको लगे बदन में जाड़ा ॥
जब चमार ने यहि गति कीन्हा । तैं तँग माहिं जबर कस दीन्हा ॥
अब मेरे हैं प्रान चलइया । तोको मैं इक भेद कहइया ॥

(१) पीट कर और मसल कर । (२) चमड़ा काटने का औजार ।

बाँबी माहिँ माल है भाई। ताता तेल देव छिड़काई ॥
इतनी कहि उन प्रान गँवाया। उरगाना अपने घर आया ॥
ताता तेल तुरत करवाया। उरगाना बाँबी पर आया ॥
बाँबी माहिँ सर्प ने जाना। ताता तेल छिड़क ले आना ॥
सर्प कहे सुनु रे उरगाना। लेन माल मारन को ठाना ॥
उलटि तोहिँ मैँ डस कै खाई। तौ यह माल कहाँ ले जाई ॥
यासे एक बिचार बताई। तू भी रहे माल तैँ पाई ॥
नित इक दूध कटोरा लावो। एक मोहर मोसे ले जावो ॥
तब उरगाने किरिया खाई। तुम हम बीच दगा नहिँ भाई ॥
तब चलि के वह आवन लागे। सत सत बचन कहूँ तोरे आगे॥
तू मैँ तीसर जाने नाहीँ। तीसर मैँ सब बात नसाई ॥
बचन करार हुआ दोउ केरा। जब चलि आये अपने डेरा ॥

॥ दोहा ॥

जो करार भयो सर्प से, उरगाने मिलि दोय।
तीसर कोइ जाने नहीँ, बचन पालिये सोय ॥

॥ चौपाई ॥

किरिया कसम भई सब भाँते। दीन इमान बचन की बातेँ ॥
हम तुम माहिँ बीच भगवाने। अब दूसर कोइ बात न जाने ॥
योँ कहि कर घर अपने आया। दूध कटोरा भर करि लाया ॥
बाँवी केर पास धर दीना। निकरा सर्प दूध सोइ पीना ॥
मोहर सरप लेकर इक डारी। ली उरगाने हाथ पसारी ॥
मोहर लई घर अपने जाई। सो दइ तिरिया हाथ के माहीँ ॥
ऐसे कइ दिन बीति सिराने। एक दिवस पुत्र ने पहिचाने ॥
तिरिया पुत्र कहे समझावो। कहो यह मोहर कहाँ से लावो ॥

॥ दोहा ॥

नित की मोहर मिले कहाँ, कहो कौन से ठाँव ।
सो ठिकान मोसे कहो, पिता पुत्र परभाव ॥

॥ चौपाई ॥

ठाँव ठिकान मोहिँ बतलावो । नहिँ फरियादराजपर जावोँ ॥
यहि बिधि बात पुत्र ने कीन्हा । उरगाने मुख अँगुरी दीन्हा ॥
यह तो बात कहन मेँ नाहीँ । बाक कहूँ तो बचन नसाई ॥
वह मूरख नहिँ माने बैना । यह बरतंत कहो सुख चैना ॥
मोहर कहाँ से नित उठि लावो । सो मोरे को ठौर बतावो ॥
यहि चर्चा मेँ रात बितानी । फजिर पुत्र सँग हुआ निदानी ॥
दोनोँ मिलि बाँबी पर आये । सर्प देखि दिल मेँ दुख पाये ॥
सुनु उरगान बात तैँ फोड़ी । दूसर दगा करी तैँ चोरी ॥

॥ दोहा ॥

सर्प कहे उरगान से, बचन बिरोधी कीन्ह ।
लड़काई बुधि पुत्र की, मारे कोइ दिन चीन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

तब उरगान बोलिया भाई । मैँ मोरे पुत्र भेद कछु नाहीँ ॥
तुम संका मन मेँ मत लावो । यहि अपना तुम दास बनावो ॥
तुम हम बचन करेँ प्रतिपाला । कछु मन मेँ नहिँ लावो दयाला ॥
तुम्हरी टहल करन नित आवे । दूध कटोरा नित प्रति लावे ॥
सरप बचन बोला योँ भाई । यह तो तुम कीन्ही लरिकाई ॥
इन बातन मेँ दगा बिचारे । इकदिन हानि लाभ जिव मारे॥
यह तो हाल हरकत कीन्हा । दूसर कान भेद तैँ दीन्हा ॥
जब उरगान वचन योँ बोला । जानो तुम मोरा वचन अडोला ॥

॥ सोरठा ॥

डोलै बचन हमार, जुगन जुगन नरके परूँ ।
योँ अस मनहिँ बिचारि, जनम बिगारूँ आपनो ॥

॥ चौपाई ॥

अस उरगाने बचन उचारा । तोरे मोर बीच करतारा ॥
यहि सुनि मोसे दगा न होई । सत सत बचन कहूँ मैँ तोही ॥
अस कहिकर घर डगर सिधारा । सरप समझि मन माहिँ बिचारा ॥
लड़का फजिर दूध ले आया । उरगाने ने आप पठाया ॥
बाँबी पास कटोरा लाया । धरि कर दूध तुरत अलगाया ॥
डरता सरप बाँबि से आया । दूध पियत मन संका लाया ॥
चौंकत दूध पिया उन भाई । दुबिधा मन के माहिँ समाई ॥
लई मोहर घर लड़का आया । मारग माहिँ मता उपजाया ॥

॥ दोहा ॥

रोज दिवस यह को करे, नित को आवे जाय ।
सरप मारि मरदन करूँ, माया लेउँ छुड़ाय ॥

॥ चौपाई ॥

नित नित कौन फिरे यहि काजा । सरप मारने मति उपराजा ॥
योँ बिपरीति बुद्धि उपजाई । लड़का सरप मारने चाही ॥
लड़का यहि अपने मन ठाना । दूसर कोइ सुने नहिँ काना ॥
उरगाने को मालुम नाहीँ । लड़का यहि मन मेँ उपजाई ॥
गुनता रहा रात भर सारी । सरप मारने बात बिचारी ॥
दूध फजिर को ले कर चाला । लठिया से मारूँ दरहाला ॥
सोँटा लिया हाथ के माहीँ । दूध धरा बाँबी पर आई ॥
सोँटा सरप हाथ मेँ देखा । चितवन चित्त चरित्तर लेखा ॥

॥ दोहा ॥

सरप समझ मन आपने, बिपरीत[1] बुद्धि बिचार।
आज उपद्रव होय कछु, यह मन माहिँ सिहार॥

॥ चौपाई ॥

यह अस समझि बाँबि से निकरा। सोच करी मन उपजा फिकरा॥
दीन इमान भया पितु केरा। पहिले डसूँ धरम नहिँ मेरा॥
सोँटा पहिले चलावे आई। ता पीछे काटूँ धरि खाई॥
यहि बिचार करि बाहर आया। सोँटा लड़के तुरत चलाया॥
सोँटा लगा मूड़ के माहीँ। सरप झपट लड़के को खाई॥
जहर घुमरि घन्नाटी आई। लड़का पड़ा भूमि के माहीँ॥
गया फजिर से साम कहानी। जब माता मन में अकुलानी॥
उरगाने से कहा बिचारा। लड़का गया भई बड़ि बारा॥

॥ दोहा ॥

यह उरगाना समझि के, तुरत चला वोहि बार।
देख ठिकाने सरप्र के, सोँटा हाथ मँझार॥

॥ चौपाई ॥

भीतर बाँबि सरप अस भाखा। हे उरगान बचन भल राखा॥
मैँ तो से पहिले कह दीना। लड़के का मोहिँ नाहिँ यकीना॥
तैँ बिस्वास किया मन मोरा। दगाबाज मन माहिँ कठोरा॥
सोँटा तोर पुत्र मोहिँ मारा। सिर मेँ चली रुधिर की धारा॥
जब मैँ झपट पकड़ के खाया। तोर मोर यह बचन नसाया॥
उरगाना रोवत घर आया। तिरिया को वरतंत सुनाया॥
तिरिया बिकल पुत्र सुन सोगा। बिछुड़े पुत्र पुर्बले भोगा॥
ब्याकुल रुदन करे इक भाँता। पुत्र मरे सुन करि यहि बाता॥

॥ दोहा ॥

पुत्र सोग सुन कर त्रिया, ब्याकुल भई मलीन।
रुदन करे लट तोरि के, पुत्र सोग दइ[1] दीन॥

॥ चौपाई ॥

उरगाने से भई लड़ाई। तिरिया पुरुष माहिँ अधिकाई॥
लड़का मार मोर तैँ डारा। मैँ राजा से करूँ पुकारा॥
त्रिय सिर खोल गई फरियादी। नीच त्रिया बुधि करी उपाधी॥
करि बिषाद[2] राजा पर पहुंची। कहा ब्रतंत बात नहिँ सोची॥
मोरा पुत्र पुरुष ने मारा। यह इन्साफ होय दरबारा॥
सुन राजा उरगान बुलाया। तुरत बाँधि कर पकरि मँगाया॥
तोरी त्रिया कहा कहे भाई। पुत्र पुरुष मोरा मारि सुनाई॥
जब उरगाने बचन सुनैया। न्याय नीति दरयाफ करैया॥

॥ दोहा ॥

गुनहगार दरबार का, तव[3] तकसीरी वार।
माफ न कीजे गुनह की, तुरतै गरदन मार॥

॥ चौपा ॥

हे राजन के श्री महराजा। गरदन गुनह मारिये आजा॥
जो तकसीर अंग मोरे लागा। चाहे सो कीजै यहि जागा॥
साँचहि साँच कहूँ जस बीती। मानो बचन मोर परतीती॥
जो कछु भया बिधी बरतंता। कहूँ प्रसंग आदि से अंता॥
कान समास बमिलि सुनिलीजै। मोरे बचन बाक चित दीजे॥
सुनु यह कहूँ आदि बिख्याता। साँची झूठि परखिये बाता॥
मैँ परदेस गयो महराजा। यह रुजगार पेट के काजा॥
कई दिवस मेँ घर को आया। मारग भई कहूँ अथीया॥

---

(१) ईश्वर। (२) शोक (३) तुम्हारा।

॥ दोहा ॥

एक सहर मारग महीं, रहिया मोर मुकाम ।
तसमा घोड़े को नहीं, टूटि कसन में चाम ॥

॥ चौपाई ॥

आधी रात फरक जब पाई । तब तसमे की सूरति आई ॥
तुरत चमार पास मैं गैया । सोवत वाको जाय जगैया ॥
तसमा एक चाहिये भाई । जो कछु कही दाम दिलवाई ॥
आधी रात बने नहिं भाई । तुरत तयार मोर घर नाहीं ॥
चाहै सोई दाम मैं देऊँ । तसमा तो तेरे से लेऊँ ॥
तब चमार कहे दिया न बाती । तुम चलि के आये अधिराती ॥
अब तो तसमा बने न भाई । फजिर कहो तो देउँ बनाई ॥
तब उरगाना समझ सुनावे । सदिये[1] घड़ी राति से जावे ॥
कहे चमार तुम जावो भाई । हाल करूँ चलते ले जाई ॥

॥ दोहा ॥

उरगाना उठि कर चला, आया जहँ बिसराम ।
चमड़ा लिया चमार ने, काटा तसमा चाम ॥

॥ चौपाई ॥

गोल घरी तसमे की कीन्हा । सो तगार के महिं धर दीन्हा ॥
पानी भरा तगारी माहीं । तसमा तामें डार्‌यो जाई ॥
सीतकाल महिना मल मासा । पूस पड़े ठँढ होस हिरासा[2] ॥
सरप कहूँ चलि आया भाई । बैठा जाय तगारी माहीं ॥
चाम कुँड लिया धरी तगारी । सरप कुँडलिया बैठे मारी ॥
फजिर भये मैं जाय जगाया । तसमा दे अस बचन सुनाया ॥
जल्दी से चमरा उठि आया । चाम चूकि के सर्प उठाया ॥
चाम कुँडलिया सरप बनाई । दोनों एक तरह के भाई ॥
सरप कुँडलिया लीन उठाई । मुँगरी से मुँह दोचा जाई ॥

---

(१) तड़के । (२) डर ।

॥ दोहा ॥

रापी से मुँह चोरि के, चपटा दोच बनाय ।
कर दुरुस्त मोको दियो, तँग में खैंचा जाय ॥

॥ चौपाई ॥

होय सवार मारग को जाई । ठहरे पाँच कोस पर गाँई ॥
जहँ इक सरप बाँबि पर बैठा । देखा सरप तंग में ऐँठा ॥
जब उसने इक तरक चलाई । करिया नाम धराया भाई ॥
जब मोको मालुम अस बोला । देखा तंग सरप को खोला ॥
जब यह सरप कही सुनु भाई । मेरे प्रान पलक में जाई ॥
यहि बाँबी में सरप रहाई । यामें माल बहुत है भाई ॥
गरम कढ़ाय तेल करि डारे । काढ़े माल सरप को मारे ॥
अस कहि प्रान तुरततन त्यागा । मोरा लोभ माहिँ मन लागा ॥
तेल कढ़ाय गरम करि लाया । बाँबी पर लेकर चलि आया ॥

॥ सोरठा ॥

सरप कहे सुनु बात, माल मरे ले जाय तैँ ।
मैँ डसि खाऊँ तोहि, बहुरि माल को पावई ॥

॥ चौपाई ॥

सरप अवाज कही सुनु भाई । मोको मारि माल ले जाई ॥
मैँ तोहिँ पकरि तोरि के खाऊँ । तो रहे माल कौन से ठाऊँ ॥
मैँ इक चबन कहूँ उरगाने । जो मोरी बात कहन को माने ॥
दूध कटोरा नित ले आवो । एक मोहर नित को ले जावो ॥
सरप कही उरगाने मानी । दूसर कान कोऊ नहिँ जानी ॥
यह असवचन भया दोउ माहीँ । किरिया कसम दोऊ मिलि खाई ॥

दूध पियाय मोहर ले आऊँ। भया अस यों बरतंत सुनाऊँ॥
ऐसें कइ दिन बीति सिराना। तिरिया पुत्र बात यह जाना॥

॥ दोहा ॥

तिरिया यों पूछन लगी, मोहर कहाँ से लाय।
जहाँ दूध लै जात हो, देव मोहिं ठौर बताय॥

॥ चौपाई ॥

भया एक दिन श्री महाराजा। लरिका दूध सरप के काजा॥
लेकर गया हाथ में दूधा। मैं नहिं जानूँ मन का सूधा॥
सोंटा लिया काँख के माहीं। सर्प पियत में चोट चलाई॥
झपटा सरप पुत्र को खाया। राजा को यह बरन सुनाया॥
राजा हुकम दीन तत्काला। लावो बाँबि खोद करि माला॥
उरगाने ने ठाँव बताये। खोदन माल राज से आये॥
माल मँगाय राज ने लीन्हा। तुरत बिदा उरगाना कीन्हा॥
तिरिया केर मूड़ मुड़वांया। साँच बचन उरगाना पाया॥
सुन बन बाघ बचन अस कीजे। साँचे पर साहब बहु रीझे॥

॥ दोहा ॥

बंदर कहे सुनु बाघ यह, उरगाने की साँच।
सत्त बचन अधीनता, कधी न आवे आँच॥

॥ चौपाई ॥

बंदर कहे दगा यह कीन्हा। सुनु बन बाघ भेप तैं लीन्हा॥
साध भये पर कपट ना छूटा। झूँठे जबर जाल जम लूटा॥
मिथ्या बचन करे अधिकाई। निस्चै जीव नरक में जाई॥
जो परपंची दगा बिचारे। बिना मौत परमेसुर मारे॥
उठि कर गवन करो तुम भाई। अब मैं तुम को नहि पतियाई॥
साँच भया राजा पै जाई। सरप से बचन झूँठ भया भाई॥

कइ इक कसम सरप से खाई । तीसर कान पड़े नहि भाई ॥
पुत्र त्रिया को तुरत सुनाई । झूँठा भया बचन के माहीँ ॥

॥ दोहा ॥

जिन के बोले बंध नहिँ, स्वारथ बचन रसाल ।
डारि गले बिच मेखला, खैँचे जम धरि खाल ॥

॥ चौपाई ॥

अस तैँ झूँठा भेख बनाया । साध बचन को दाग लगाया ॥
साँचे बचन बंध जोइ प्रानी । प्रान जाय बोले परमानी ॥
झूँठे वचन कधी नहिँ भाखे । भीतर सुध मन मैला न राखे ॥
तन मन बचन बोल के साँचे । उनके बाके कढ़े नहिँ काँचे ॥
दुरमति दगा दाँव जिन कीन्हा । अपने भोग आप सिर लीन्हा ॥
जो परलोक बिगारा चावे । सो मलीन मन बुद्धि बसावे ॥
जो मतिहीन दीन नहिँ जोवे । अपना जन्म अकारथ खोवे ॥
जन्म मरन का करे निबेरा । सो जीवन कोइ बिरले हेरा ॥

॥ दोहा ॥

जग मेँ जीवन तुच्छ है, करि ले निरधार[1] ।
पार उतरना चहे जो, केवट समझि सुधार ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी यह कही कहानी । कौन परोजन बरनि बखानी ॥
को उरगाना सरप काहवा । को बंदर बन बाघ सुनावा ॥
को घोड़ा को तसमा होई । टूटा तंग माहिँ कहो सोई ॥
कहो को सरप पुत्र ने मारा । उलटि सरप ने पुत्र बिडारा ॥
को गइ त्रिया राज फरियादी । बैठे कौन राज की गादी ॥

(१) निर्णय ।

कस इन्साफ कीन्ह निरवारा। सो स्वामी कहो बरनि बिचारा॥
जो सम्बाद कहा परसंगा। बिना अर्थ व्यापे नहिँ अंगा॥
सो बरतंत बरनि बतलाओ। हिरदे को भिन भिन अर्थाओ॥

॥ दोहा ॥

ये स्वामी परसंग का, कहिये बरन बयान।
जान पड़े हित समझ ये, हिरदे परख पिछान॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

तुलसी कहे बचन बिस्वासा। यह तन अंदर माहिँ तमासा॥
बिन अस्थूल कहन मेँ नाहीँ। मूल मरम की भूल बताई॥
बरनन रूप बिना कहुँ कैसे। समझि न पड़े रूप बिन जैसे॥
जो कोइ सज्जन सुरति बिलासी। भीतर भूमि लखे तन बासी॥
वे सुनि के करिहैँ निर्बारा। निर्मल ज्ञान उदै अनुसारा॥
जो मलीन मति बुधि के मैले। जिन बिन बूझे बचन उथेले[1]॥
हिरदे कुटिल कुमति की झाँई। पड़ी नहीँ सतसँग परछाँई॥
सतसँग सुना न देखा आँखी। लखी नहीँ सतगुरु मुख भाखी॥

॥ दोहा ॥

अंदर की आँखी नहीँ, बाहर की गइ फूटि।
बिन सतगुरू औघट वहे, कभी न बंधन छूटि॥

(उरगाने की कथा का आशय)

॥ चौपाई ॥

अब सुनु याका भेद बताऊँ। जो परसंग पूछि अर्थाऊँ॥
उरगाना उर अंतर बासी। जा का नाम कहेँ अबिनासी॥

(१) उलट दिया।

तत्त तुरी घोड़े असवारी । जा पर बैठि फिरे जुग चारी ॥
तसमा तो सम रूप कहाना । टूटि नेह निज नाम भुलाना ॥
चाह चमार ने फेरि बनाया । तसमा तन तँग तुरत कसाया ॥
मँजिल मुसाफिर चल करि गयऊ । सुभ और असुभ माहिँ दरसयऊ ॥
चाह मारि सोइ चोख चमारा । काल सरप मुख तसम सँवारा ॥
तिन तसमे का बरनि सुनाया । तिन का तिन में जाय समाया ॥

॥ दोहा ॥

चाह जो मारि चमार है, तसमा तन तजि आस ।
पवन सुरति आधी चढ़ी, तिन का तिन के पास ॥

॥ चौपाई ॥

भूमि भुवंग माल मन धारी । माया पर बैठा अधिकारी ॥
मुख उर अंदर बास कराया । सो उरगाना पुत्र कहाया ॥
लख गो[1] गुन तजि गगन उजारा । उन भुवंग सिर सोँटा मारा ॥
गगन चढ़त मुख मरम न पाया । काल सरप जबही धरि खाया ॥
इच्छा नारि त्रिया गुन साधी । मन राजा पै गइ फिरियादी ॥
उर में जाय राय नहिँ रोका । सात पुत्र मन भया बिसोका ॥
निज इन्साफ राय ने कीन्हा । बासन पाँच माहिँ धर दीन्हा ॥
बरतन भुमि माल जनवाया । सो राजा ने खोदि मँगाया ॥

॥ दोहा ॥

धन खुदवाया राज ने, लीन्हा माल निकार ।
बंदर बाघ बयान का, सुन करि करो बिचार ॥

---

(१) इन्द्री ।

ज्ञान बाघ मुख में लिया, बंदर बिपति बिनास।
उरगाने परसंग का, भाखा अगम अवास॥
मन बन्दर मानी नहीं, ज्ञान बाघ बिस्वास।
मुख मेलत मुक्ती हती, मूल मुकर के पास॥
बाघ कहे बन्दर सुनो, उरगाने की ऐन।
तू का जाने भेद यह, कहि भाखे मुख बैन॥

॥ सोरठा॥

उरगाना उर बास, नास कभी होवे नहीं।
जुग जुग रहत निरास, अंग आस ब्यापे नहीं॥

॥ छंद॥

हिरदे गगन गुरुज्ञान गति, उरगान की कोइ का कहे।
आगे अगम धुर धाम पुर, बिसराम जुग जुग ते भये॥
अंदर उदै भये भानु भिन्न, पिछान पद पूरन गहे।
घट मठ मुकर में बास बस अस, आनि ऐनक में रहे॥
सुंदर सिखर चढ़ि चीन्ह हद, दुरबीन दुख सूरति सहे।
नित परन पालि दयाल दिल, जम जाल लखि बंधन बहे॥
आँखी अजर घर घूमि सोइ, मल भूमि भुइँ मारग गये।
तुलसी तरावट नैन नित हित, हेरि हिरदे को कहे॥

॥ दोहा॥

उरगाने का उग्र मत, सत सूरति को पंथ।
बाघ कहे बन्दर सुनो, नहिं कोइ पावे अंत॥
तुलसी हिरदे को कहे, उरगाने गति गाय।
जाय जुगति जाने जोई, सोई अगम लखाय॥

॥ चौपाई॥

मन का तत्त तरंग न पाया। बन्दर की गति बरनि सुनाया॥
उर में बास बसे उरगाना। बाघ ज्ञान गहे वचन विधाना॥

जिन जो ज्ञान गती पहिचानी । दीन भये पर भक्ति समानी ॥
दिल में दीन गरीबी चावे । आप अपनपौ को बिसरावे ॥
अंकुर उदै होय बड़ भागी । जिनकी प्रीति पुर्बली जागी ॥
सो सज्जन रस पिये अघाई । सतसँग की महिमा जिन पाई ॥
जो पूरन सतगुरु पहिचाना । वह महिमा उनहीं ने जाना ॥
उर मारग अंदर में बासी । उर में गवन करे अबिनासी ॥

॥ दोहा ॥

सुरति सिखर अंदर खड़ी, चढ़ी जो दीपक बार ।
आतम रूप अकास का, देखे बिमल बिहार ।

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे उरगाना सोई । यहि बिधि पंथ चले जो कोई ॥
हर हिये हेर फेर कर आवे । सोइ उरगाना उग्र कहावे ॥
बिमल बचन बातैं रस यानी[2] । मीठी मधुर पूर परमानी ॥
भानु उदै हिये ज्ञान समाना । तन से तिमिर दूर अलगाना ॥
रैन रबी ऊगे निसि नासी । उदै भानु जस तिमिर बिनासी ॥
यों अंदर घट में उँजियारा । परम प्रकासक दीपक बारा ॥
आतम तेज तत्त से न्यारा । सो बूझै सतगुरु का प्यारा ॥
हे हिरदे यहि उनकी बाती । जो होइ उरगाने का साथी ॥

॥ दोहा ॥

कहे तुलसी हिरदे सुनो, गुनो जो मन के माहिँ ।
उरगाने की आदि यह, दीन्ही तोहि जनाय ।

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यहि बरनि सुनाई । उरगाने की निज गति गाई ॥
यहि में समझ लेव सब लेखा । यहि अपने मन करो बिबेका ॥

(१) बिधि । (२) यानी=वाहन, यहाँ मतलब "भरी हुई" से है ।

जब हिरदे बोले कर जोरी । स्वामी बचन बोध मति मोरी ॥
भिन भिन बचन कहे अर्थाई । जब मोरि बूझ समझ में आई॥
अब वह बरनि बाक समझावो । पूछों जौन तौन दरसावो ॥
स्वामी से पूछों इक बानी । सो बरतंत कहो सहदानी ॥
अबिनासी पद कौन कहाई । उनकी आदि कहाँ से आई ॥
तुम अबिनासी बर्नन कीन्हा । सो मोहिं भाखि सुनावो चीन्हा॥
केहि घर से अबिनासी आया । बासी बरन मूल कहा गाया ॥
इनकी आदि कहाँ से आई । सो मोहिं कहिये ठौर सुनाई ॥
कौन ठिकाने तन में बासा । सो कहिये यह भेद खुलासा ॥
आगे अंत कहाँ से आया । अबिनासी कस नाम कहाया ॥
कहँ को आदि अंत घर बासी । जासे भानु किरन अबिनासी ॥

अबिनाशी का निरूपन

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

सूरज ब्रह्म अकास में, भास भूमि परकास ।
किरन जीव यहि आतमा, सब घट कीन्हो बास ॥

॥ सोरठा ॥

पिंड पिंड ब्रह्मंड में, अबिनासी रहे छाय ।
सभी सनातन यों कहे, आगे अगम अथाह ॥

॥ हिरदे बाच ॥

॥ चौपाई ॥

हे स्वामी मोरे मन माहीं । आगे भाखि कहो समझाई ॥
आगे का मोहिं भेद बतावो । स्वामी आदि समझ समझावो ॥

आगे कहो कहाँ है मूला । सो मोसे कहो आदि अतूला ॥

(तुलसीदास बाच)

सुनु हिरदे यह बरनि बयाना । मन चित से सुनिये दे काना ॥
धुंधूकार सब्द सुन माहीँ । पारब्रह्म परमातम भाई ॥
धुन उनकी से आतम आया । सो अबिनासी नाम कहाया ॥

(हिरदे बाच)

धुंधू सब्द कहा सुन माहीँ । अबिनासी आतम गति गाई ॥
यह तो समझि परी सहदानी । साहब के कहने से जानी ॥
धुंधू सब्द सुन्न के पारा । उनके परे कौन घर न्यारा ॥

॥ दोहा ॥

पार कहो घर कौन है, सब्द ब्रह्म से भिन्न ।
सो मोसे बरनन कहो, आदि अंत को चिन्ह ॥

॥ चौपाई ॥

धुंधू सब्द सुन्न के आगे । कहो उनको स्वामी केहि जागे ॥
तब तुलसी बोले सुनु भाई । आगे भाखूँ बरनि सुनाई ॥
चौथे पद सत साहब बासा । उनके अंस ब्रह्म परकासा ॥
सब्द ब्रह्म परमातम गाया । सो वहि सत्त पुरुष से आया ॥
वहि मालिक सत पुरुष कहाई । तिन से आदि ब्रह्म की आई ॥
सत्तपुरुष के पार ठिकाना । वहँ से है अद्‌भुत अस्थाना ॥
जिनको कोई संत पहिचाना । अगम निगम से अंत ठिकाना ॥
ऋषी मुनी कोइ भेद न पाया । कहि कहि बेद नेत गुहराया ॥

॥ दोहा ॥

दस अवतारी ब्रह्म से, ब्रह्म पार के पार ।
सो का जाने भेद यह, संत कहे निर्बार ॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे इक विस्मै बोले । हे स्वामी यह बात अतोले ॥
हद बेहद के पार कहाई । यह नहिं कधी सुनन में आई ॥

आप दया करि भाखें स्वामी । यह कहुँ भेद न अंतरजामी ॥
एक भरम मोरे न माहीं । जाको बोध कहो समझाई ॥
सब में सासूतर बरनन बासी । पिंड ब्रह्मंड बसे अबिनासी ॥
परम हंस बेदांत सुनावा । कहे यहि नास कधी नहिं पावा ॥
मीमांसा यह कर्म बस गावा । यह सुनि के मोहिं भरम समावा ॥
उन अबिनासी बरनन कीन्हा । यह तो कहे करम बस लीन्हा ॥
इनका भेद कहो समझाई । यह दोनों दो बात बताई ॥

॥ दोहा ॥

बेदांती कहे ब्रह्म यह, करम मीमांसा बाक ।
या में कहो काकी कहौं, झूँठ साँच की साख ॥

॥ चौपाई ॥

यहि संदेह मोर मन माहीं । सो सब मोको बरनि सुनाई ॥
जो बेदांत कहे अबिनासी । करम माहिं को[1] भिन्न निवासी ॥
तब तुलसी ने बचन सुनावा । सुनु हिरदे याका परभावा ॥
काया काल करम के माहीं । उपजे मरे धरे तन भाई ॥
करम भोग से काया पाया । बिना करम नहिं काया आया ॥
पाँच तत्त जड़ चेतन गाँठा । रचि बैराट करम से ठाठा ॥
यहि रचना ऐसे चलि आई । बिना करम नहिं उत्पति भाई ॥
जो यहि नासमान होइ जावे । तौ कहो करम भोग को पावे ॥

॥ दोहा ॥

अबिनासी आतम कह्यो, रह्यो करम के बंद ।
उलटि न चीन्हा आदि को, बिन सतगुरु की संध ॥

---

(१) या ।

॥ चौपाई ॥

सासूतर कहे बेद जो गावा । फिर आगे को नेत सुनावा ॥
जिन की साखि सासतर गावा । बिन जाने की साख सुनावा ॥
जब बैराट में आतम आया । जेहिके पाछे बेद बनाया ॥
सिंधु बुंद काया में बासी । याको बेद कहे अबिनासी ॥
आगे सिंधु भेद नहिँ पाया । जासु बुंद बैराटी काया ॥
बुंद पाँच तत माहिँ समाना । याको बेद बिराट बखाना ॥
आगे बेद भेद नहिँ पाया । सासूतर में कहो कहँ से आया ॥
आतम अंस करम के माहीँ । सासूतर से रचना भइ भाई ॥
जब जिव भया करम के संगा । दस इंद्री गुन तीन प्रसंगा ॥
पाँच भूत का सूत बँधाना । जड़ चेतन आतम उरझाना ॥
जहँ हिरदे योँ बंधन आया । जुग जुग फिरे करम बसकाया ॥

॥ दोहा ॥

रस इंद्री गुन स्वाद से, बंधन भया अजान ।
जान भुलानो आदि को, बादे जनम हिरान[1] ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे बोले हे स्वामी । मन अचरज भया अन्तर जामी ॥
जीव मूल तुम अन्त बताया । कस घर भूलि भँवर में आया ॥
सो मोको भाखो बरतंता । कस सब कही सनातन संता ॥

जीव का मूल को भूल जाना और भोगोँ में आशक्त होना

(तुलसीदास वाच)

तब तुलसी कहे सुनो प्रसंगा । पाँच तीन में रचिरह्यो अंगा ॥
बिषै बासना में मन राचा । जक्त भोग से कोइ नहिँ बाचा ॥

---

(१) खोया ।

रस बस रीति जीति नहिँ जानी । ज्योँ माखी मद मेँ लिपटानी ॥
योँ जिव रस माहीँ मदमाता । इंद्री सँग रस भोग सनाथा ॥

॥ दोहा ॥

दस इंद्री रस भोग से, भूले मूल मुकाम ।
सदा रहे भव चक्र मेँ, उलटि न बूझै धाम ॥

॥ चौपाई॥

मूल भूल योँ फाँस फँसानी । रँग रस भोग जनम जिव जानी ॥
अब याका दृष्टांत सुनाऊँ । नकल बनाय असल दरसाऊँ ॥
ज्योँ माखी मद रस मेँ राजी । योँ रस पगा जीव यह पाजी ॥
यहि योँ भवसागर का लेखा । सहद कटोरा भरि करि देखा ॥
योँ माखी उड़ि उड़ि के आवे । सहद कटोरे ऊपर छावे ॥
कोइ कोइ बैठि किनारे भाई । सब को देखि तमासा जाई ॥
रस पर पंख कभी नहिँ लिपटे । कोइ पर पंख बचाये झपटे ॥
कोइ मतिहीन गिरे जो माहीँ । जिनके पाँव पंख लिपटाई ॥

॥ दोहा ॥

एक फकीर अलमस्त जो, देखत ही मुसकान ।
योँ जहान रस भोग मेँ, पगे प्रेम रस खान ॥

॥ चौपाई ॥

जब फकीर को हँस्ते देखा । हलवाई मन कीन्ह बिबेका ॥
कहो मियाँ तू क्योँ मुसकाना । हँसकर खड़े मर्म नहिँ जाना ॥
जब फकीर बोला सुनु भाई । अचरज देखि हँसी उठि आई ॥
जैसे सहद कटोरा माहीँ । सब माखी उड़ि बैठी आई ॥
यहि लेखा खिलकत[1] का जाना । बिष रस सहद माहिँ उरझाना ॥

(१) संसार ।

जो फाजिल साहब के प्यारे । सो तो देखें बैठ किनारे ॥
कोइ सोहबत अकले[1] उन माहीं । पंख पैर बचि खायँ मिठाई ॥
बेसहूर अकल के ओछे । बिष रस मोह ज्ञान के पोचे[2] ॥
धाय पड़े सो माहिँ मिठाई । बुधि सुधि बिना पंख लिपटाई ॥
कछू स्वाद मुख में नहिँ आया । वे नाहक नर देहि गँवाया ॥
ज्यौँ माखी रस में उरझानी । यौँ मतिहीन जानिये प्रानी ॥
मीठे को जो मन ललचावे । वह भव सिंधु में गोते खावे ॥

॥ दोहा ॥

ज्यौँ माखी पर पाँव से, सहद माहिँ लिपटाय ।
ऐसे ही जग जीव जड़, झाड़ि बिषै रस खाय ॥

॥ चौपाई ॥

जब हिरदे पूछे परभावा । सब कहें बेद सनातन आवा ॥
सब्द नाद से बेद बतावें । सब मिलि यौँ करि करि गुहरावें ॥
सुन्न सब्द तुमने भी भाखी । बेद सब्द की देवे साखी ॥
यामें कौन फरक है स्वामी । भाखे सब्द बेद सहदानी ॥
यह निरनै मो को समझावो । जो तुम कही बेद ने गावो ॥

शब्द भेद

(तुलसीदास वाच)

सुनु हिरदे यह भेद निनारा । सो का जाने बेद बिचारा ॥
सब्द सब्द में अंतर भाई । जो हम कही बेद नहिँ पाई ॥
ओं सब्द बेद बतलावे । त्रिकुटी मद्ध माहिँ से आवे ॥

॥ दोहा ॥

गढ़ त्रिकुटी के मद्ध में, सब्द उठे ओंकार ।
यह पुकारि बेदन कही, सुनु हिरदे निरधार ॥

(१) बुद्धिमान । (२) खाली ।

॥ चौपाई ॥

ओंकार के पार ठिकाना । जहँ है सुन्न सब्द अस्थाना ॥
सो कहैं संत सब्द सुख दाई । सो महिमा बेदन नहिँ पाई ॥
ओंकार को नेत पुकारा । यह सुन सब्द बेद से न्यारा ॥
अंडा सुन्न में सैल कराई । सो वो सब्द परखिया भाई ॥
ओअं सोहं जाप सुनावा । सो सब ये माया परभावा ॥
वह तो सब्द सुन्न के माहीँ । उलटे चढ़े अधर घर माहीँ ॥
सो बूझै यह बाक बयाना । सतसँग से कोइ सज्जन जाना ॥
सब्द सब्द में भेद निनारा । यह परखे संतन का प्यारा ॥

॥ दोहा ॥

सुन्न सब्द वह अंत है, देखे सैल सिहार ।
ओंकार त्रिकुटी बसे, सो कहे बेद पुकार ॥

॥ सोरठा ॥

निराकार से बेद, आदि भेद जानै नहीँ ।
पंडत करै उछेद[1], मते बेद के जग चलै ॥

॥ छंद ॥

निराकार बेद पुकारि कहे, ओंकार से उतपति भयो ।
त्रिकुटि मधि इक सब्द उठि, अस बेद ने बायक[2] कह्यो ॥
सुन्न को सबद बेहद्द में, इन भेद से न्यारो रह्यो ।
सोई सनातन संत सब, लखि देखि सुख सुंदर गह्यो ॥
निराकार व्याल[3] बिकार बायक, बेद मनमुख दुख दयो ।
सब सृष्टि सासतर साखि राखे, जक्त यों बादै बह्यो ॥
सुभ असुभ अंक बढ़ाय बायक, करम बस जिव बँधि रह्यो ।
सुधि बुधि बिसारी आदि अपनी, मूल तजि मारग लह्यो ॥

(१) तर्क, विवाद । (२) कथन । (३) साँप ।

बिधि बेद ने रचि बिस्व बंधन, बाक सुनि गुन गठि रह्यो ॥
अंदर हिये के तिमिर ज्यो, यों धुंध आँखिन पै छयो ॥
जैसे कटोरा सहद पर, झुकि झुंड माखिन को भयो ।
पर पाँव लपटि बिनासि काया, जीव माया बस बह्यो ॥
हिरदे सुनो जग जीव अस, यों बस बिषै में रचि रह्यो ॥

॥ सोरठा ॥

मद माखी दृष्टांत, सुने समझि कोइ भेद यह ।
गहे गुरन के बाक, साखि समझ हिरदे धरे ॥

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

सब्द सब्द अंतर अरथाया । न्यारा न्यारा भेद सुनाया ॥
निराकार सब्द ओंकारा । ओं सब्द बेद बिस्तारा ॥
सुन में सब्द अगम से आवे । आदि पुरुष का सब्द कहावे ॥
यह सब समझ पड़ी सहदानी । साहब बरनन भाखि बखानी ॥
मुख भाखे पद परखि पिछानी । सब्द सब्द की न्यारी बानी ॥
सुन में सब्द संत समझाई । सो कहो राह मँजिल अरथाई ॥
ओअं की कस राह पिछानी । यह भी भेद कहो सब छानी ॥
ये दोनों की बाट बतावो । सो घर घाट मोहिं समझावो ॥

॥ दोहा ॥

कौन डगर ओंकार की, निराकार के बाक ।
सुन्न सब्द सत पुरुष का, बरनि सुनावो भाख ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

निर्गुन सब्द बेद बतलावे । सोई काल ओंकार कहावे ॥
तीन लोक रचना रचि राखा । सो जोगिन का पद अभिलाखा ॥
त्रिकुटी तेज अकास समाना । सो निर्गुन का है अस्थाना ॥
मुद्रा उनमुनि धरें समाधा । त्रिकुटी मद्ध पवन को साधा ॥

इँगल पिँगल सुखमनि के माहीँ । बंकनाल में पवन समाई ॥
त्रिकुटी तत्त जोति दरसानी । यह जोगिन का भेद बखानी ॥
जहँ है निरंकार का बासा । मन ओअं कह्यो सब्द खुलासा ॥
ये जोगिन के बाक बिलासा । काल निरंजन का जहँ बासा ॥
ओंकार सब्द समुझाई । हिरदे सुनियो कान लगाई ॥

॥ दोहा ॥

सुन्न सब्द संतन कहा, सो समझाऊँ भेद ।
खेद करम की सबन से, बसै बिन बाक अभेद ॥

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे सत सब्द लखाऊँ । जोग भेद से भिन समझाऊँ ॥
सुन्न माहिँ से सब्द जो आवे । सोई सब्द सत पुरुष कहावे ॥
चौथा पद बेहद के माहीँ । सुन्न सब्द सोइ नाम कहाई ॥
ओअं सब्द काल को जानो । सुन में सब्द पुरुष पहिचानो ॥
सब्द सब्द का भेद निनारा । सो कहि भाखि बरनि निरबारा ॥

मंज़िलोँ का भेद

अब सुन मँजिल माल दरसाऊँ । संधि माहिँ परबंध[1] लखाऊँ ॥
पदम सुरति तिरबेनी घाटा । जहँ होइ जाय संत की बाटा ॥
आठ महल अंदर के माहीँ । संत बिलास करेँ वोहि ठाँई ॥

॥ दोहा ॥

सत्त लोक सतपुरुष का, करे सुरति से ध्यान ।
सात गगन ऊपर चढ़े, जहँ सतगुरु अस्थान ॥

॥ चौपाई ॥

सत्त पुरुष सोइ सतगुरु गाया । जीव अंस सब व्हाँ से आया ॥
तीन लोक निरगुन का घाटा । उन सब रोकि जीव की बाटा ॥

---

(१) सिलसिला ।

जीव की निर्बलता—मतों की भूल भुलैयाँ

जीव भुलाय खाय उरझाई । बेबस है चौरासी माहीँ ॥
जो कोइ सतसँग को मन चावे । काल ब्याल² होइ ताहि सतावे ॥
कई उपाधि करे जिव साथा । मन की पकड़ न आवे हाथा ॥
भरम भुलाय उठाय फँसावे । सतसँग यासे करन न पावे ॥
मन बिकराल काल होय ताके । बेरस रहे रस में नहिँ पाके ॥
सतमत को निंदा करि भाखे । काल मते समझावे साखे ॥

॥ दोहा ॥

कलजुग माहीँ मति चले, नास्तिक होवे झार ।
सो सिहारि मन में रहो, बेदन कही पुकार ॥

॥ चौपाई ॥

ऐसे बरनि बाक समझावे । यहि बिधि जन्म जीव भरमावे ॥
पोढ़ होय सतसँग में आवे । जाके संग उपाधि उठावे ॥
पानी पाहन देव पुजावे । ऐसे ले जिव को भटकावे ॥
तीरथ बरत बँधावे आसा । काल कला जीवन को फाँसा ॥
मुए मुक्ति फलदायक भाखा । अस गावे बेदन की साखा ॥
आसा बंध होय फलदाई । जहँ आसा तहँ बास कराई ॥
चेतन इष्ट दृष्टि से तोड़ी । तनु मन प्रीति जड़न से जोड़ी ॥
योँ भवसागर भरा अथाही । अपने घर की राह न पाई ॥

॥ सोरठा ॥

भर्म रहा संसार, सार भेद पाये बिना ।
सुभ और असुभ कराय, काल चक्र भरमत रहे ॥

॥ चौपाइ ॥

यह बेदन ने किया खराबा । आसा अंग लगाय अड़ावा ॥
त्रिसना तोप अनीति बनाई । गोला लोभ चलायो भाई ॥

(१) भूल । (२) साँप ।

माया मोह कायागढ़ धारी । बिषै बन्दूक ताकि के मारी ॥
बन्धन बान चले बहु भाँती । गुन गरनाल लगे दिन राती ॥
गो[१] में बास गाँसि[२] मन राखे । तू मैं तोर मोर मन भाखे ॥
तन मन जीव फिरे बन माहीं । भव भरमन[३] की चाल चलाई ॥
मन मकरंद[४] अंध यों आया । सब मिलि के यों बाँधि गिराया ॥
जड़ चेतन की गाँठि बँधानी । बँधन बसे चौरासी खानी ॥

॥ सोरठा ॥

काया गढ़ के माहिँ, गो[५] गुन मन राजा भयो ।
रह्यो काल की छाँहिँ, हाय हिरस बस बँधि रह्यो ॥

॥ चौपाई ॥

हिरस हरकत कीन्हा वासिल[५] । मन बिष सँग जिव किया बेहासिल ॥
ऐसे जीव भया हड़काया[६] । ज्यों कूकर हड़ हाड़ चबाया ॥
सूखा हाड़ चूसि दिन राते । अपने मुख लोहू नित खाते ॥
ऐसा जक्त भया हड़काना । भव रस में घर भूलि भुलाना ॥
बिन सतसंग जक्त बौराना । लाभ हानि नहिँ मूल पिछाना ॥
मूल भूल करि सूल सिहारा । यों ऐसे जिव बाजी हारा ॥

संत शरन और सतसँग की महिमा

संत दयाल चेत करवावें । सो सत बाक हृदय नहिँ लावे ॥
दाता संत बड़े सुखदाई । परमारथ देइ दृष्टि लखाई ॥
लेइँ न देइँ करें उपगारा । सो चित में नहिँ नेक विचारा ॥

(१) इंद्री । (२) घेर कर । (३) संसार में भटकना । (४) भँवरा । (५) मेल । (६) दुरदुराया हुआ ।

॥ सोरठा ॥

यह संतन के बाक, आँखि हिये सूझै नहीँ ।
कहि कहि हारे थाक, जीव कहन माने नहीँ ॥

॥ चौपाई ॥

संत बिना कोइ भूल न छूटे । जासे पकरि पकरि जम लूटे ॥
बिना संत नहिँ लगे ठिकाना । सब महातमा साखि बखाना ॥
जुग चारो कहते अस आये । कहेँ सब संत यही बिधि गाये ॥
तीन जुगन में नहिँ निस्तारा । कलजुग संत लेइँ अवतारा ॥
तीनोँ जुग तप जोग बिचारे । राज भोग फल को अनुसारे ॥
कलजुग जुक्त संत अर्थावेँ । सुन हिरदे हिये माहिँ बसावेँ ॥
उनके बचन सुरति सहदानी । हिरदे में मन लावे प्रानी ॥
कहनि अवाज आज कोइ बूझै । नर तन में आँखी से सूझै ॥
होइ निरधार पार पहिचाने । सतगुरु सत्त बचन करि माने ॥

॥ दोहा ॥

संत बचन सतगुरु कहेँ, गहे जो चित मन लाय ।
सहाय करे सुधि अंत की, सभी संत गुहराय ॥

॥ छंद ॥

हिरदे बिना सतसंग के, जिव जोनि में भटका फिरे ।
बिन संत के नहिँ अंत पावे, खानि में गुरु बिन गिरे ॥
करनी करम फल फूल काया, ममत माया में घिरे ।
कोइ ज्ञान बाक बिबेक कहे, अज्ञान से आगे भिड़े ॥
गुरु ज्ञान बिन बैराग उपजे, कोइ जतन मन ना थिरे ।
ऐसो कुलाहल[1] कठिन योँ, पल एक नहिँ लावे बिरे[2] ॥
करि करि जुगत सब हारि थाके, नेक नहिँ पावे जिरे[3] ॥
पाले धरम जिव कर्म ये योँ, भव नहीँ हिरदे तरे ॥

---

(१) हल्ला । (२) विरह । (३) मर्म, भेद ।

शास्त्रों का उलझेड़ा और उन को ठीक न समझने से ख़राबी

॥ दोहा ॥

धरम बेद ने करि किया, करम बंध की टेक।
द्वैत भाव भरमाय के, नहिँ बूझा प्रभु एक ॥

॥ चौपाई ॥

करम धरम ने बन्धन डारा। पूजा पत्री नेम अचारा ॥
तीरथ बरत और चारो धामा। यह योँ पाप पुन्न उरझाना ॥
लोभ दिखाय स्वर्ग समझावा। स्वर्ग भोगि भवसागर आवा ॥
पुन्न प्रभाव कहे समझाई। भोग भुगति चौरासी माहीँ ॥
नर की देहि देव नहिँ पावे। स्वर्ग आस नर को बँधवावे ॥
नर तन दुरलभ देव न पावे। यह नर अधम स्वर्ग को चावे ॥
सुख सुर लोक में अधिक कहावे। तो सुर नर देही क्योँ चावे ॥
योँ नहिँ मूरख बूझे बानी। देव स्वर्ग तजि नर तन ठानो ॥

॥ दोहा ॥

स्वर्ग छाँड़ि सब देव यह, नर तन माँगत झार।
यह विचार मन में करे, तब पावे निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

सासतर ब्रह्म बेदांत बतावे। यहि पूजा कहो केहि की लावे ॥
ब्रह्म अंस का सकल पसारा। सोई ब्रह्म देहि निज धारा ॥
सब्द ब्रह्म सब माहिँ बतावेँ। स्रीमत[1] ऐसे साखि सुनावे ॥
पिंड वैराट रूप भगवाना। आतम रूप कहेँ परमाना ॥
फिर पाहन की पूजा लावे। सोइ अज्ञानी मनुष कहावे ॥
चेतन तजि बाँधे जड़ आसा। धरम टेक बस करम निवासा ॥
जो कोइ निरनै कहे बुझाई। बूझे न बैन चैन चित लाई ॥

(१) भगवान।

सो निंदा करिके मन माना। सासतर आतम कहे पुराना ॥

॥ सोरठा ॥

आतम देव पुकारि के, सब पुरान गुहराय।
देहि देवल बैराट यह, पूज करो निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

देह देवल सब साखि सुनावे। आतम रूप पर्तिमा[1] गावे ॥
जो तैं मूरति पूजि पखाना। यह नहिँ पूजन कहे पुराना ॥
याकी साखि संत नहिँ गावेँ। नहिँ पुरान पूजन बतलावे ॥
याकी साखि समझिमन लावे। झूँठ साँच निरनै जब आवे ॥
बिन् सतसंग भरम नहिँ जावे। सतसँग साबुन भरम छुड़ावे ॥
जुग जुग का मन मैल मलीना। बिन सतसंग न आइ यकीना ॥
सतसँग अंजन आँखि लगावे। जब कछु तिमिर नैन से जावे ॥
ज्ञान उदै बिन भक्ति न होई। भक्ति बिना सब बुद्धि बिगोई ॥

॥ दोहा ॥

भक्ति भाव बूझे बिना, ज्ञान उदै नहिँ होय।
बिना ज्ञान अज्ञान को, काढ़ सके नहिँ कोय ॥

॥ चौपाई ॥

सब सब में भगवान बतावे। चरअरुअचर माहिँ समझावे ॥
पाहन में परमेस्वर जाना। सब में कहे भाखि भगवाना ॥
पाहन को कस पूजो भाई। पूजन तो सबही की चाही ॥
स्त्री भगवान बसे सब माहीँ। सब को तजि पाहन लौ लाई ॥
जो तैं इष्ट दृष्टि में देखे। सब में जान बराबर लेखे ॥
मुख से एक सबन में भाखे। फिर दुरमति केहि कारन राखे ॥
यह नहिँ इष्ट भाव का लेखा। दुरमति दृष्टि भाव से देखा ॥
सुनु उपासना की यहि रीती। एक भाव से पाले प्रीती ॥

---

(१) प्रतिमा=मूर्ति।

॥ दोहा ॥

कूकर सूकर में कही, सब के माहिँ समान ।
और बसै अलगाय के, पूजन करो पखान ॥

॥ चौपाई ॥

गो गुन में मन राम कहाई । गोपी गो मन इंद्री माहीँ ॥
कृस्न राम को धाम कहाई । मन तन सब में बास कराई ॥
सो यों मन इंद्री रस चावे । वहि मन को सब खोँट बतावे ॥
भवरसमाहिँ मुकर[1] में आसा । संख चक्र गदापद्म निवासा ॥
यहि महिमा रम राम कहावे । सोइ मुकर मन सब गुहरावे ॥
मन यहि बिषै बासना माहीँ । सोइ सरगुन मन राम कहाई ॥
चेतन राम सबन में बासा । छाँड़े असल नकल की आसा ॥
पाहन मूरति मनुष बनावे । टाँकी से गढ़ि गुढ़ि के लावे ॥

॥ दोहा ॥

मूरति का करता कहो, को गढ़ि कीन्ह बनाय ।
ताहि समझि हिरदे धरो, रहो चरन लौ लाय ॥

अवतार स्वरूपों की कथा का अंतरी अर्थ

॥ चौपाई ॥

जोइ बैराट रूप भगवाना । सोइ सब के तन माहिँ समाना ॥
याको छाँड़ि और मन लावे । सोइ प्रानी जड़ मूर्ख कहावे ॥
जिन बैराट रचा सो न्यारा । वहि सबका है सिरजनहारा ॥
निरगुन कहैं निरंजन कोई । पिंड ब्रह्मंड रचा जिन जोई ॥
जिनके आहि दसौं अवतारा । गुन तीनोँ सँग साथ पसारा ॥
सोइ नर देहि जक्त में धारा । इंद्री सँग मन करे विहारा ॥
मन तन सँग जड़ताई माहीँ । यासे परख कोऊ नहिँ पाई ॥
आप अपनपौ को नहिँ चीन्हा । जासे जग में रहा अधीना ॥

---

(१) दर्पन ।

॥ दोहा ॥

आप अपनपौ ना लखा, भखा न सिरजनहार ।
पार बिना भटकत फिरे, कस पावे निरधार ॥

॥ चौपाई ॥

जीव तो अंस पुरुष से आया । निराकार रचि कीन्ही काया ॥
जोति सरूप तेज उपजाया । यों जग माहिँ प्रगट भइ माया ॥
जोति माहिँ से भये भगवाना । तन धरि के प्रगटे जग रामा ॥
सोइ इंद्रिन में करे निवासा । तीन गुनन में जग की आसा ॥
सो भया मन इंद्रिन के संगा । भव रस भोग करे रस रंगा ॥
तीन गुनन से आसा धारी । आसा अँग भव बात बिचारी ॥
आसा आहि भरम को मूला । आसा करम संग सहे सूला ॥
बोले राम सबन के माहीँ । जड़ तत ने यों फाँस फसाई ॥

॥ दोहा ॥

जोति सरूपी माहीँ से, प्रगट भये भगवान ।
सोई राम मन गुन गहे, सरगुन साखि बखान॥

॥ चौपाई ॥

आदि छाँड़ि जिव निरगुन आया । आदि अंस की सुधि बिसराया ॥
निरगुन जोति तत्त उपजाया । पाँच तत्त सँग धारी काया ॥
काया सँग अँग में उरझाना । आदि पुरुष की सुधि बिसराना ॥
भूलि पुरुष निरगुन को धावे । आदि पुरुष की सुद्धि न लावे ॥
निरगुन छाँड़ि जोति के संगा । तत्त बनाय बसा यों अंगा ॥
जोति अंस इच्छा भइ रानी । जीव भुलाय जोति अलगानी ॥
जोति छाँड़ि जिव बाहर आया । जब तत पाँच धरी नर काया ॥
अँग अजोध्या में अवतारी । दस इंद्री दसरथ मन धारी ॥

॥ दोहा ॥

जोति जीव बिसराय के, दसरथ पुत्र कहान ।
कुमति कौसिल्या मात सँग, भरत अंग उरझान ॥

॥ छंद ॥

मन तन त्रिगुन की चाह चतुरगुन, गाँठि में बंधन भयो ।
निरगुन बरम्ह अपनी सता[१], सीता को हरि कर ले गयो ॥
रावन त्रिकुट के मद्ध लंका, बास में बसि के रह्यो ।
सत की सता सीता लये, दुख राम तन बन को सह्यो ॥
करे राम मोह बिलाप ममता, लच्छ लछमन को कह्यो ।
सीता गये का सोच सुधि, सुग्रीव चिन्ह पट[२] को दयो ॥
सन्मुख समुन्दर बाँधि मन, तजि अंग सँग अङ्गद लह्यो ।
तोड़े त्रिकुट चढ़ लंक गढ़, ब्रह्म की सता सीता लयो ॥

॥ दोहा ॥

रावन ब्रह्म त्रिकुट बसे, चढ़ मन राम जो धाम ।
सता ब्रह्म सीता लई, कीन्हा पूरन काम ॥

॥ चौपाई ॥

मन सो ब्रह्म भये अबिनासी । गहे निज मूल त्रिकुट के बासी ॥
संपादी[३] समपद मन गयऊ । इन्द्री गीध[४] गीध मन रहऊ ॥
जोति तजे मन भयो भगवाना । मन गीधे सोइ गीध कहाना ॥
त्रिकुटी धाम चढ़े भगवाना । सो मन केवल ब्रह्म कहाना ॥
जो भगवान भवन भव माहीँ । गो पालन गोपाल कहाई ॥
गो मेँ बिँध गोविंद रहाया । तन मन गीधा गीध बताया ॥
समपद को जो चीन्हे भाई । जिनका आवागवन नसाई ॥
चेतन मूरति मन भगवाना । पूजै जड़ जड़ माहिँ समाना ॥

(१) सत्ता ताक़त । (२) कपड़ा । (३) नाम गिद्ध का जिस की रामायन में कथा है ।
(४) बिँधना या पगना ।

॥ दोहा ॥

सत्त पुरुष को जीव तजि, निरगुन भवन पिछान ।
निरगुन छाँड़ि जिव जोति के, मद्ध भया भगवान ॥

॥ चौपाई ॥

सो भगवान सबन के माहीँ । जड़ चेतन में ठावेँ ठाईँ ॥
एक रूप सोइ भया अनेका । मन अपने में करो बिबेका ॥
आदि एक अपनी को भूला । भया अनेक छाँड़ि तत मूला ॥
चर और अचर खानि के माहीँ । सब में देखो राम रमाई ॥
सोइ अपने में करो बिचारा । बोले सब में सिरजन हारा ॥
लख चौरासी में तन धारा । उपजे मरे करम संसारा ॥
सतगुरु शरन बिना निबार नहीं हो सकता
सतगुरु संत सरन जो आया । जिनका आवागवन नसाया ॥
सुरति डोर सतगुरु में लाये । सो जिव आदि अन्त पद पाये ।

॥ दोहा ॥

सतगुरु संत दयाल बिन, सब जिव काल चबाय ।
बाँधि करम के बस रखे, सके न सूरति पाय ॥

॥ चौपाई ॥

बिना सुरति नहिँ लगे ठिकाना । सतगुरु संत बिना भरमाना ॥
भेष संत नहिँ बूझो भाई । संतन की गति अगम अथाही ॥
जो वे मिलेँ जीव निरबारा । बिन उनके चौरासी धारा ॥
जड़वत जीव भया जड़ताई । अपनी सुधि आपै बिसराई ॥
यासे भूला आदि ठिकाना । जुग जुग जीव फिरे भरमाना ॥
सतसँग करने को कोइ चावे । पंडित भेष भूल भरमावे ॥
नेम अचार इष्ट की बातेँ । करि समभाय कहेँ बहु भाँतेँ ॥
यह सतसँग है जग के माहीँ । बंधन जीव जानि उरभाई ॥

॥ दोहा ॥

ईसुर कर्म परमातमा, मन तन मूल मिलाप ।
आप अपनपौ न लखे, सुख दुख से संताप ॥

एक सिद्ध की कथा।

॥ चौपाई ॥

अब याका परसंग बताऊँ । मूल भूल की साख सुनाऊँ ॥
गुरु चेला रमते कहुँ आई । जोगी सिद्ध रहे बन माहीँ ॥
आसन कुटी धुनी के पासा । रात्रिआय जहँ किया निवासा ॥
फल फलहार खान को दीन्हा । भोजन कंद मूल का कीन्हा ॥
भोजन करि आसन पर आये । सिद्ध प्रनाम चरन सिर नाये ॥
पूछा सिद्ध कहाँ से आई । कहो कहँ कहँ की रमत कराई ॥
चेला सुनि के रहा अबोला । जब रमते में से गुरु बोला ॥
तीरथ चार धाम परसाया । नहिँ कोइ सिद्धनजर मेँ आया ॥

॥ दोहा ॥

माया भगवत की बड़ी, को पावै परभाव ।
को लीला उनकी लखे, छल बल बहुर उपाव ॥

॥ चौपाई ॥

सिध सुनि के मन मेँ मुसकाना । सिद्धन का इन मरम न जाना ॥
जोग करे जिन सिद्ध पिछाना । बिन सिद्धी नहिँ सिद्ध कहाना ॥
जब चेला बोला सिध स्वामी । सिद्धी का कहो भेद बखानी ॥
मैँ अजान हौँ तुम्हरो वारा[१] । पूछा कहो भेद निरवारा ॥
सिद्धी मेँ कहो कहा दिखाई । भाखो भेद मोहिँ समझाई ॥
जब सिध बोल कही यह बाता । सिध सिद्धी संसार सनाथा ॥
जग राजी सिद्धी के माहीँ । जो कोइ जानि परख जिन पाई ॥
तिलोंकी का नाथ कहाया । सिद्ध आहि जाहि की माया ॥

---

(१) अयाना ।

॥ दोहा ॥

जो तिलोंकीनाथ की, माया है बलवान।
सो सिद्धी सिध सब कहैं, आप रूप भगवान ॥

(गुरु बाच)

॥ चौपाई ॥

चेला को गुरु योँ समझावा। सिद्धी आहि कृतम परभावा ॥
सिद्धी से कछु मुक्ति न होई। सिद्धी संत कृतम कहैं सोई ॥
ज्योँ बाजीगर आम लगावे। परतछ अमिया आम देखावे ॥
चमड़े का करि साँप चलावे। सो सब के देखन में आवे ॥
डमरू को जो जानि बजावे। सब संसार तमासे आवे ॥
कौड़ी माँग उन खेल उठाया। डमरू बट्टे झोली नाया ॥
सरप चाम का चामै भइया। अमिया आम कछू नहिँ रहिया ॥
कौड़ी कौड़ी माँगि दुकाना। योँ सिद्धी है कृतम समाना ॥

॥ दोहा ॥

ज्योँ बाजी का खेल, झूँठ पसारा कृतम का।
जब वो लेत समेट, सुपने सम जिमि खेल यह ॥

॥ चौपाई ॥

जब चेला बोले गुरुस्वामी। सत्त बात कहि अंतरजामी ॥
यामें नाहिँ मुक्ति को काजा। तो काहे की सिद्ध समाजा ॥

(सिद्ध बाच)

सिध सुनि के मन में रिसियाया। क्या जाने सिद्धी की माया ॥
फजिर उठे कोइ खेल दिखाऊँ। सिद्धी माया का परभाऊ ॥
राति बीत जो भया बिहाना। सिध सिद्धी करने को ठाना ॥
चेला गुरू उठे दोउ भाई। हिरदे को तुलसी समझाई ॥
जग अंधा फंदा पहिचाने। जीव मुक्ति की खबर न जाने ॥
मुक्ति छाँड़ि माया कृत माना। मुक्ति बिना चौरासी खाना ॥

(हिरदे बाच)

॥ दोहा ॥

हिरदे कहे तुलसी सुन्यौं, गुरु चेला के बाक।
वोहि सुनाय फिरि केकहो, सिध सिद्धी की भाख॥

॥ चौपाई ॥

राति बीति कर भया बिहाना। सिध सिद्धी करने को ठाना॥
यहि बिधि तुमने कहन सुनाई। सो सब मन मोरे में आई॥
राति बात का कहो बयाना। सो भइ कहा समझि परमाना॥
गुरु चेला सिध की कहो बोली। सिध ने करामात क्या खोली॥

(तुलसीदास बाच)

कहे तुलसी हिरदे सुनि लीजे। करामात में करनी छीजे॥
जग संसार आँखि अँधियारी। करामात लगे सबको प्यारी॥
सिध सिद्धी करिके बतलावे। करामात में जक्त रिझावे॥
सिध कछु कीन्ह चुटकला भाई। बड़े जानि सब सीस नवाई॥
सिद्धी करि करि जनम बिगारा। मुक्ति न गये चौरासी धारा॥
जग रिझाय के आप बिगाड़े। बंधन बँधे काल के गाढ़े॥

॥ दोहा ॥

सिध सवाल अपना करे, करनी करे बिगाड़।
कर्म भाड़ में भुँजि मुए, पड़े खानि की खाड़[1]॥

॥ चौपाई ॥

जग रीझे कृतृम लख माया। सिद्ध बिगाड़ आप सुख पाया॥

॥ हिरदे बाच ॥

सिध बिगाड़ जग का सुख पाया। पुत्र कलित्र और धन माया॥
यह माया मोह बन्धन लीन्हा। अंत मुक्ति का काज न कीन्हा॥
माया मोह बहुत दुखदाई। यह सिद्धन से सिद्धी पाई॥
सिद्धी ले बहु फाँस फँसाना। जन्म मरन नहिँ लगा ठिकाना॥

(१) खड्ड।

यह लइ आस बास तन छूटा । चौरासी जम धरि धरि लूटा ॥
यह भी भये नर्क गति गामी । जग सुख में क्या लीन्हा स्वामी॥

(तुलसीदास बाच)

जग संसार भँवर बहि जावे । काल जाल बस यों अस आवे ॥
माया मोह बँधाई आसा । सुख संपति ममता में फाँसा ॥
गये प्रान कछु संग न लीन्हा । ममता से मुक्ती नहिँ चीन्हा ॥
सब संसार जक्त जम जाली । करम बंद सँग फिरे बेहाली ॥
ज्यों बंदर बाजीगर बाँधा । यों चावे जिव करम इरादा ॥

(हिरदे बाच)

हिरदे कहे सबब सुनि स्वामी । दोउ बूड़े ये अंतरजामी ॥
सिध बूड़े करनी लुटवाई । मोह माया सिद्धी बतलाई ॥
सो सिद्धी में जक्त भुलाया । जुग जुग धरी करम बस काया ॥
कूकर सूकर में लिया बासा । सब संसार जक्त की आसा ॥
अब वह कथा कहो दरसाई । गुरु चेला सिध की समझाई ॥
भई राति बरतंत सुनावो । कस कस इन उनका बतलावो ॥

॥ दोहा ॥

इन उनकी कस कस भई, राति बात बरतंत ।
सो बनाय मोसे कहो, का निकारा फिर तंत[1] ॥

(तुलसीदास बाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह मन दुखदाई । यह मैं तैं की मान बड़ाई ॥
सिध सिद्धी कीन्हा अहंकारा । कोई चुटकला करन बिचारा ॥
निज निसि गई भई अधिराती । कीन्ह प्रसिद्ध[2] अगिन कइ भाँति ॥
चेला गुरु बैठे दोउ भाई । चर्चा सिध से करें बनाई ॥

---

(१) तत्त, मतलब । (२) जगाया ।

चरचा में सिध से नहिँ हारा । जब सिधमनमें कपट बिचारा ॥
प्रबल प्रचंड अगिन कुटिमाहीँ । जरे देखि मन संका लाई ॥
चेला गुरु उठि कर घबराने । कुटी जरे सिध मरम न जाने ॥
सिध हँसते अपने मन माहीँ । कपट भाव उन को भरमाई ॥

॥ दोहा ॥

गुरु चेला उठि कर भगे, खड़े जो मारग माहिँ ।
देखे सिद्ध समाधि से, उठि के भागे नाहिँ ॥

॥ चौपाई ॥

सिध समाधि से सिद्धी आई । कुवा उमँगि जल अगिन बुझाई ॥
बिना डोल डोरी जल आवे । कुवा उमँगि करि कुटी बझावे ॥
सिध आसन पर बैठ रहाई । किर्तिम सिद्धी करि बतलाई ॥
अगिन बुझे पर आसन आये । गुरु चेला दोउ अचरज लाये ॥
यह बरतंत राति को बीता । सिद्ध दिखाई कपट प्रतीता ॥

(हिरदे वाच)

यह तो भई समझि सोइ लीन्हा । आगे को कहो फिर का कीन्हा ॥
फजिर भये का कहो बयाना । फिर सिध ने मन में कहा ठाना ॥

(तुलसीदास वाच)

सिद्ध कहे कछु करि दिखलाऊँ । अचरज कुटी माहिँ दरसाऊँ ॥

॥ दोहा ॥

फिर मन में सिध के उठी, करि बतलाऊँ खेल ।
रमते साधु सुभाव को, डारूँ नीचे मेल ॥

(हिरदे वाच)

॥ चौपाई ॥

रमते साधु सिद्ध की बाता । फिर कस भई कहो विख्याता ॥
फिर सिध ने सिधि कहा जनाई । वह भी कहो मोहिँ समझाई ॥
गुरु चेला कहो रहे निवासा । की उठि गये फजिर कहँ बासा ॥

(तुलसीदास बाच)

जब तुलसी बोले सुनु भाई। जो जस भई कहूँ समझाई॥
उठि कर चले फजिर दोउ साधू। सिध सिद्धी करि कीन्हा जादू॥
बेनी बहे कुटी के माहीं। यह महिमा करिके दिखलाई॥
साधुन को सिध कहत सुनाई। भया. अचंभा देखो जाई॥
कुटी माहिँ पुरन परयागा। देखि पुनीत रहो यहि जागा॥

॥ दोहा ॥

साधु दोऊ उठि कर चले, देखि कुटी में जाय।
तिरबेनी तीनों नदी, बहती अगम अथाह।

॥ चौपाई॥

अचरज साधु बहुत मन लाये। भया अचंभा दोउ मुसकाये॥
सिद्ध कहे तिरबेनी न्हावो। अपना जनम सुफल करिचावो॥
साधु कहे हम बहुत अन्हाये। कलप बास करि व्हाँ से आये॥
कुटी महिँ तिरबेनी देखी। यह अचरज की बात बिसेखी॥
चेला कहे गुरु फिर न्हावे। या में कहा गाँठि को जावे॥
चेला गुरू किये असनाना। अचरज मन में भरम समाना॥
करामात सिद्धों की माया। सो सिद्धों ने करि दिखलाया॥
दोऊ गये करन असनाना। सिध सिद्धी कीन्हे पकवाना॥
रुचि भोजन सब निपुन[1] बनाये। करि असनान साधु पुनि आये॥
बैठे जब पत्तल पर जाई। सब पकवान परोसे आई॥

॥ दोहा ॥

एक फकीर चलि आइ के, ठहर कुटी के पास।
ख्याल बचन कछु ना कहे, बैठे आय उदास॥

॥ चौपाई ॥

सिद्ध कहे कहो कहँ से आये। कैसे बैठ रहे मुरझाये॥

(१) उत्तम।

कहे सिद्ध कुछ खाना खावो। तो साईं तुमहूँ उठि आवो ॥
कछु जवाब साईं नहिँ दीन्हा। सिद्ध समझ करि पत्तल लीन्हा ॥
पत्तल धरि साईं के आगे। फिर खाने को लावन लागे ॥
बासन ढाँकि अँगोछा डारा। ह्वाँ से भोजन काढ़िनिकारा ॥
जब साईं सिध सिद्धी जानी। समझि बूझि बोले नहिँ बानी ॥
पत्तल पर खाने को लाये। साईं के सन्मुख धरि आये ॥
कछु फ़कीर ने ख्याल न कीन्हा। सिध मन में अचरज करि लीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

सिद्ध कहे साइँ सुनो, धरा खान को पास।
सो खाना खावो नहीँ, योँ क्योँ बैठ उदास ॥

बैठे रहे कहो क्योँ साईं। जो चहिये सो देउँ मँगाई ॥
मियाँ कहे हमरी सुनि लीजे। गुनह करे मुरसिद नहिँ रीझे ॥
बिन मुरसिद नहिँ खाना खावे। खावे तो यह गुनह कहावे ॥
सिद्ध कहे मुरसिद कहाँ साईं। चाहो उनको लावो लेवाई ॥
साईं कहे सुनु सिद्ध गुसाईं। मुरसिद ह्याँ आवेंगे नाहीं ॥
वे दाता कहो कैसे आवेँ। उनके बिन खाना कस खावेँ ॥
सिद्ध कहे कहो कहाँ बिराजे। करम[1] करेँ हमही पर आजे ॥
साइ कहे इहाँ कहाँ आना। उनका होय कहूँ नहिँ जाना ॥

॥ दोहा ॥

नहीँ मकान से उठि कहेँ, कहूँ न उठि कर जायँ।
रहेँ मकान के माहिँ वे, आठोँ पहर समाय ॥

॥ चौपाई ॥

जब सिध पूछि कही हे साईं। मुरसिद का कहो ठौर बताई ॥

---

(१) दया।

कहो वह ठाँव कौन से ठाईं । दाता मुरसिद जहाँ रहाई ॥
जब साईं बोले यह बाता । ह्याँ से बैठे देख दिखाता ॥
कुटी सामने बाग दिखावे । देखु निगाह नजर में आवे ॥
खाना जबै दुरुस्त कहावे । बिन उनके खाना नहिं खावे ॥

(सिद्ध बाच)

बाग मियाँ ह्याँ कहँ बन माहीं । कोसन पहाड़ उजाड़ दिखाई ॥
जब बोले उठि के यों साईं । कुटी सामने बाग दिखाई ॥
बड़ा बाग सन्मुख दिखलावे । देखो बाग नजर में आवे ॥

॥ दोहा ॥

तुम तो सिद्ध समाधि से, देखो नजर पसार ।
दूर नहीं यहि पास है, मुरसिद मियाँ हमार ॥

(सिद्ध बाच)

मियाँ बाग सन्मुख कहो, देखूँ नैन निहार ।
कोसन पहाड़ उजाड़ है, यह कहो कौन बिचार ॥

॥ चौपाई ॥

सिद्ध को भया अचंभा भारी । यहकहोकौन कला बिस्तारी ॥
करि निगाह देख चहुँ फेरा । दिखे न बाग भूमि सब हेरा ॥

(साईं बाच)

बदन जहीर[1] आँखि अँधियारी । ऐनक एक फकीर निकारी ॥
सिध लगाय तुम इसमें देखो । बगिया सन्मुख सुरति बिबेको ॥
देकर ऐनक सुरति लगाई । बगिया तुरत नजर में आई ॥
सिध मन में जब करे बिचारा । यहकहो कौन खेल करतारा ॥
बैठा करि जुग जुग से ध्याना । सिद्धी भई और नहिं जाना ॥
दृस्टि कधी बगिया नहिं आई । अचरज ऐनक माहिं देखाई ॥

---

(१) दुबला ।

ऐनक के परभाव से, बगिया दृस्टि दिखान ।
रहे जुगन यहि भूमि पै, पड़ी नहीँ पिहचान ॥

॥ चौपाई ॥

कहे सिद्ध साईँ तुम दाता । देखी नहीँ सुनी यह बाता ॥
सो ऐनक मेँ खोलि दिखाई । बड़े भाग से ऐनक पाई ॥
उठे सिद्ध साईँ के साथे । बगिया देखन को सँग जाते ॥
कुत्ता सँग लाये थे साईँ । सो पतरी[1] कुत्ते ने खाई ॥
गुरु चेला भोजन को खावे । देखन सिद्ध बाग को जावे ॥
चलिभये मियाँ सिद्ध के आगे । ऐनक सिद्ध आँखि मेँ लागे ॥
चले बाट ऐनक से आवे । बिन ऐनकनहिँ बाटदिखावे ॥
ऐनक भई सिद्ध को दाता । ऐनक से सब खेल दिखाता ॥

॥ दोहा ॥

जब सिध ऐनक आँखि से, देखे निरखि निहार ।
सब जब तो बगिया लखे, नहिँ तो भाड़ उजाड़ ॥

॥ चौपाई ॥

कुत्ता पीछे भूँकत आवे । सिधसँग जान मियाँ घुरकावे ॥
पहुँचे जाय बाग के पासा । बगिया चौकी सिंध निवासा ॥
उठि कर सिंघ सिद्ध परडाका । जब फकीर सिँध ऊपर ताका ॥
पंजा धरे सीस पर जाई । सीतल सिंध रहा मुरझाई ॥
बगिया के मारग को चाले । सिद्ध बाग पर कीन्हा ख्याले ॥
बाग वृच्छ फूली फुलवारी । देखा बाग वड़ा वन भारी ॥
आस पास बगिया चहुँ फेरा । बहे वेनी अति गहिर गँभीरा ॥
मैं वेनी किर्तिम दिखलाई । यह तो वेनी अगम अथाही ॥
सिघ अचरज मनमाहिँ विचारा । मैं सिद्धी को देखि निहारा ॥

---

(१) पत्तल ।

॥ दोहा ॥

जोग कस्ट करि करि थके, अचरज ऐनक माहिँ ।
सहज भाव देखत रहूँ, समझ पड़े केहि ठाँहि ॥

॥ चौपाई ॥

आगे चले बाग के नाके । जोगी जती सिद्ध जहँ थाके ॥
द्वार बाग पर रहै भुजंगा[१] । वहडसि खाइ जाइ जेहि अंगा ॥
भीतर से सन्मुख को दौड़ा । फन फटकारि फिरे चहुँ ओरा ॥
बड़े बड़े जाने नहिँ पावैँ । जोगी सिद्ध तुरत बगदावे[२] ॥
साइँ देखि भुजँग फन डारा । भीतर बाँबी माहिँ सिधारा ॥
साइँ सिधि सँग आगे चाले । परिमल[३] उठे सुगंधि रसाले[४] ॥
भँवर पोहप से बहु लिपटाने । निर्मल गंध बास उरझाने ॥
परम पुनीत भूमि बहु भाँती । सोभा कहूँ कही नहिँ जाती ॥
निर्मल बास भूमि सब जागे । बृच्छ बृच्छ सूरज फल लागे ॥

॥ दोहा ॥

तरु तरु फल सूरज लगे, कहा कहुँ तेज प्रभाव ॥
उदै होत रबि बृच्छ पै, कहा कहुँ अगम अथाह ॥

॥ चौपाई ॥

सूरज फल बृच्छन पर होई । सोभा कहा कहे भल कोई ॥
आगे गये बाग के माहीँ । मियाँ कहे सुनियो सिध भाई ॥
तुम तो रहो ठहर यहि जागे । मैँ साईँ से मिलिहौँ आगे ॥
हुकुम हुए पर मैँ ले जाओँ । साईँ दाता दीदार कराओँ ॥
साईँ साईँ के पास सिधारे । साहिब मियाँ अगम से न्यारे ॥
मंदिर मठ अंदर के माहीँ । मद्ध बाग मुरसिद को ठाईँ ॥
मिले मुरीद पैर सिर दीन्हा । मुरसिद तुरत अंग मेँ लीन्हा ॥
कदमअली[५] कहे मुरसिद प्यारे । सिध आये इक करन दिदारे ॥

---

(१) साँप । (२) भस्म जायँ । (३) अचरजी सुगंधवाला । (४) रस की खानि । नाम साईँ यानी मुरीद का ।

मुरसिद कहें उन्हें ले आवो। तुम दहसत[1] दिलमें जिन खावो॥
तुरत सिद्ध को लीन्ह बोलाई। कदम अली ले पहुँचे जाई॥

॥ दोहा॥

सीस कदम ऊपर धरे, सिद्ध लिया अपनाय।
मियाँ कहे मुसकाय के, क्योंकर पहुँचे आय॥

॥ चौपाई॥

हाथ जोड़ के सन्मुख ठाढ़े। कदम अली बन्धन से काढ़े॥
मेहर बड़ी मुरसिद ने कीन्हा। दीन्ही काढ़ि एक दुरबीना॥
सिध मुरसिद का देखे नूरा। हीरा चमके तेज जहूरा॥
मुरसिद कहे सुफल कर लेखो। यह दुरबीन ताकि कर देखो॥
सिध ने ले दुरबीन चढ़ाई। ऐसे बाग अनेक दिखाई॥
बाग पार जब ताकन लागे। सहर एक सब बागन आगे॥
सिद्धि वहाँकी क्या कहे कहेनी। महलों महल बहे तिरवेनी॥
सिध अपनीं सुधि बुद्धि बिसारी। यह तो गति ऐनक से न्यारी॥

॥ दोहा॥

जब ऐनक को देखि कर, कहते अगम अथाह।
यह दुरबीन के सामने, ह्याँ कछु लगे न थाह॥

(कदमअली वाच)

॥ चौपाई॥

सुनो सिद्ध यह बात गुसाईं। सँग ऐनक देकर ह्याँ लाई॥
हम मुरसिद दीदार करावा। जब मुरसिद के दरसन पावा॥
संग मुरसिद होइ बाट बतावें। बिन सँग मुरसिद बाट न पावे॥
दे दुरबीन वे आगे चालें। तो वोहि देख पड़े सब ख्याले॥
संग उन बिन दुरबीन लगावो। तो आगे नहिँ जाने पावो॥
बिन हम सँग तुम ह्याँ नहिँ आये। सँगमुरसिद ले जायँ लिवाये॥
इत दुरबीन उत ऐनक भाई। संग बिना कोई नहिँ जाई॥

(१) भय।

मोको हुकुम करैं सँग जाऊँ। तो सँग जाय खेल दिखलाऊँ ॥
बिना हुकुम नहिँ पैर उठाऊँ। मुरसिद मेहर हुकुम से जाऊँ ॥

॥ दोहा ॥

सिध कहे कदमअली सुनो, तुम बतलाया ठौर ॥
बिना मिले तुम से जभी, कहूँ और की ओर ॥

॥ चौपाई ॥

तुम तो हो गुरु पीर हमारे। तुम्हरी दया देख दरबारे ॥
इहाँ कहो को आने पावे। तुम सँग भये बिना को आवे ॥
अब तुम कहो सोई बिधि जानूँ। हुकुम होय सोई मैँ मानूँ ॥
तुम लाए दुरबीन दिवाई। इतनी सैल मेहर से पाई ॥

(कदमअली नाच)

अबतुम को इकअकिलबताओँ। ले दुरबीन मियाँ पैजाओ ॥
मियाँ क़दम पर सीस लगावो। हुकुम करैं सोइ सीस चढ़ावो ॥
ले दुरबीन मियाँ पै आये। जेहिबिधिकदमअली फ़रमाये ॥
जस जस कही वही बिधि कीन्हा। ले दुरबीन कदम धरि दीन्हा ॥

॥ दोहा ॥

सिद्ध सुनो मुरसिद कहे, ऐनक औ दुरबीन।
दोनोँ के मध मेँ रहो, ल्यो मकान को चीन्ह।

॥ चौपाई ॥

जब दुरबीन के ऊपर जावे। संग लिवाय तुम्हैँ ले आवे ॥
अब तुम जाव कुटी के माहीँ। ऐनक को नित निरखो भाई ॥
नित की सैल करो दरबारा। तुम हर वक्त करो दीदारा ॥
हुकुम लिया सिध मुरसिदकेरा। कीन्हा आय कुटी पर फेरा ॥
गुरु चेला भोजन करि बैठे। देखा जाय कुटी मेँ पैठे ॥
जो ऐनक मुरसिद से पाई। देखे नित ऐनक के माहीँ ॥
दर्सन नित मुरसिद के पावे। सीतल भये दया से आवे ॥
मारग गये गुरू औ चेला। नित नित आवे जाय अकेला ॥

॥ दोहा ॥

नित प्रति दरसन मैं करूँ, नहिँ कोई परख पिछान ।
अगम बास नित कर बसूँ, नहिँ पावे कोइ जान ॥

॥ चौपाई ॥

इक दिन गये सिद्ध दरबारा । चलो मियाँ कहे करो दिदारा ॥
सँग ले मियाँ सैल करवाई । भाखूँ रमक रेखते माहीँ ॥

(रेखता)

अकल बुजरुग[1] सिखाते हैँ । कोई दिल में न लाते हैँ ॥
मभ्कब मुरसिद बतावेगा । अरस[2] अकसीर[3] पावेगा ॥
समभ्क कोइ नूर का प्यारा । जहूरे में दिखा सारा ॥
सुई के द्वार नाके में । ऊँट जाते हजाराँ हैँ ॥
पुखत[4] हैँ छाँह धूपोँ के । लदे दो दो सँदूकोँ के ॥
उसी संदूक में अंडे । वजन भारी चले ठंडे ॥
उन्हीँ अंडोँ के अन्दर में । मिहीँ आकार अंडा है ॥
कहूँ उनमान क्या उसका । अगर दाना जो खसखस का ॥
उसी दाने में है रसता । अँदर उसके सहर बसता ॥
करे कोइ ख्याल फहमीदे[5] । जिगर अंदर खुलें दीदे ॥
अगर आदम कोई इक था । हकीकत सुन खड़ा हँसता ॥
दिलोँ में ना हुई हाजम[6] । जिकर सुनना नहीँ लाजिम ॥
सिया सुन्नी[7] न था मालुम । बिगर ईमान का आलिम ॥
उसे सुन के हुआ ताजुब । कही उन बात बेवाजिब ॥
कुफर बेफहम[8] फरमाई । नहीँ आकीन[9] में आई ॥

---

(१) बुजुर्ग=बड़े पूज्य । (२) अर्श=सहस दल कवल (३) कीमिया, रसायन । (४) पक्के । (५) समभ्कदार । (६) हाजमा । (७) मुसलमानों के दो विरुद्धदल शीया और सुन्नी हैं । (८) नादान । (९) यक़ीन ।

दहरिया का मझब[1] जाना। मुकर[2] यह कहन कुफराना ॥
नहीँ इतबार आता है। ऊँट सुइ में समाता है ॥
एक पोस्ते के दाने में। सहर क्योंकर समाना है ॥
अगर यह बात सुनने में। तसल्ली दिल न लाता है ॥
सुभा[3] सुन के समाती है। नहीं अंदर में आती है ॥
सरे रसते चले जाते। मारफत[5] के मँजिल माते ॥
अगर उसकी सुनी बातेँ। किया कायल कई भाँतेँ ॥
मुकर कर थे खुदा बंदे। कही दुनिया के ये गंदे ॥
अकिल तरकीब ठहरावेँ। सबर सोहबत खबर पावेँ ॥
कभी यह बात नहिँ कहना। सबब सुन के समझ लेना ॥
बुज़ुर्गों के बचन माहीँ। असल को ऐन[2] ठहराई ॥
उसे बूझे समझ करके। खुलेँ आँखेँ मुकर करके ॥
जधी ईमान में आवे। अकीदा[6] ऐन में पावे ॥
मिले महरम[2] उसी का जो। कहेँगे हाल ज्योँ का त्योँ ॥
अबे सुन ले समझ सारी। कहूँ मैं बात बिस्तारी ॥
दरक्खत[8] एक है उलटा। कधी होवे नहीँ सुलटा ॥
अगर वह पेड़ अड़बड़ का। तले डारी अधर जड़ का ॥
फूल फल भी उसे आवे। मरम महरम वही पावे ॥
उसी में वह गुपत[9] रसता। सुबह से साम लोँ चलता ॥
वहाँ सुई द्वार दिखलावे। ऊँट जाते नजर आवे ॥
अंड खसखस का दाना है। कहूँ उस का बयाना है ॥
पहाड़ आड़े कहे तिल के। फरक परदे खुले दिल के ॥
दिखे दुरबीन में रसता। मुकर अंदर सहर बसता ॥

---

(१) नास्तिक का मजहब। (२) आईना, ऐनक, अंतर दृष्टि। (३) शुबहा। (४) ऊपर, सीधे। (५) ज्ञान। (६) विश्वास। (७) भेदी। (८) पेड़ (९) गुप्त, छिपा हुआ।

अगर कोइ तलब[1] को चावे। तिलों का खोज कर पावे ॥
वहीँ खसखस का दाना है। तिलोँ के मेँ समाना है ॥
पेड़ इतना बड़ा बड़ का। उसी बीजे मेँ से कढ़ता ॥
डार और पात जड़ छिकला। मिहीँ दाने मेँ से निकला ॥
अगर सुन के खबर खोजे। ऐन के भेद मेँ चोजे[2] ॥
कहेँ तुलसी रसीला है। अजब कुदरत की लीला है ॥

॥ गजल ॥

खसखस के दाने के अंदर सहर खुदा का बसता है।
कस्द करे ऐनोँ के तिल मेँ वही तो उस का रसता है ॥
रूह रकाने मेँ ठहरावे सोई मुकर मेँ धसता है।
सैल करे दाने के भीतर सो मुरसिद अलमसता है ॥
कहे मझब[3] मासूक की बातेँ डगर दिलोँ के बसता[4] है।
बड़ा माल जोरावर घर का किया खरीदी ससता है ॥
बाँके बड़े खड़े लड़ने को सोई कमर को कसता है।
बिना मेहर महरम की सोहबत योँ क्योँ नाहक पचता है ॥

॥ चौपाई ॥

बिन मुरसिद सब पचि पचि हारे। मुरसिद ने सब काज सुधारे ॥
सिध सिद्धी बहु किये अनेका। पुनि पाया मुरसिद से ठेका ॥
मुरसिद मुकर जाल से फेरा। मेहर नजर करि मुझ पर हेरा ॥
जब देखा यह खेल बिलासा। छूटी यहि जहान की आसा ॥
अब दिल रहा मझब के माहीँ। झूठ जहान खिलकत की राही ॥
सब सरियत[5] ने राह बिगारा। मियाँ मारफत किये दिदारा[6] ॥
जो सरियत को सच करि जाने। बिना मूल सब भूलि हिराने ॥
यह जहान की उल्टी बातेँ। मारेँ मुकर फिरिसते लातेँ ॥

---

(१) जिज्ञासा। (२) विलास। (३) मजहब। (४) दस्त = मध्य। (५) कर्म कांड।
(६) दर्शन।

॥ सोरठा ॥

खिलकत जहान मुकाम का, झूँठा है सब काम ।
मुरसिद महरम मझब से, देखि मुकर को माँज ॥

॥ चौपाई ॥

कहे तुलसी हिरदे सुनु बानी । सिध ऐनक दुरबीन पिछानी ॥
ऐनक औ दुरबीन लगाई । रमक[1] रेखते माहिँ सुनाई ॥
सिध सिद्धी संसार भुलाना । महरम भया मझब जब जाना ॥
जब हिरदे पूछा अहो स्वामी । ऐनक का कहो भेद बखानी ॥
ऐनक कौन कहो समझाई । भाखी आप परख नहिँ पाई ॥

(तुलसीदास वाच)

सब संतन ने भाखि सुनाई । सब्दन माहिँ दीन्ह दरसाई ॥
ऐनक आँखि ताकि कर देखा । जब कछु सूझा बूझ बिबेका ॥
हिये नैन दुरबीन दिखावे । जब आगे की सुधि बुधि पावे ॥
बहुत नजीक दूर बहु भाई । जाने मँजिल राह जिन पाई ॥

॥ दोहा ॥

यह ऐनक है अलख की, खलक पार के पार ।
जिन निहार अंदर लखे, भखे सो भेद अपार ॥

॥ चौपाई ॥

जब सतगुरु की किरपा पावे । तब यह बात समझ में आवे ॥
बिन सतसंग न पावे चीन्हा । सतसंग से लखि आइ यकीना ॥
सो सतसंग सब्दन के माहीँ । संत सब्द में दीन्ह दिखाई ॥
जो कोइ बिरही जिव अनुरागी । परमारथी पीर[2] के रागी ॥
सो सज्जन मारग कछु पावे । पचि पचि मरेँ हाथ नहिँ आवे ॥
जब कहुँ उनकी मेहर मझावे[3] । दया करेँ वहि जीव छुटावे ॥

(१) जरा सी । (२) गुरू । (३) खोजे ।

बिरह बिना नहिँ दया समावे । दया धरन को जगह न पावे ॥
कहो कैसे उपकारी लेई । सुने समझ नहिँ हिरदे जेई ॥

॥ दोहा ॥

सुनि समझे सत सजन की, मन दौड़ावे आप ।
कहो खाप[1] कैसे लगे, ले ले लंबी नाप ॥

॥ चौपाई ॥

मन से भर्म निकरि नहिँ पावे । कहो कैसे सतसंग समावे ॥
आसा अंग भंग करि देई । यौँ भीतर रस जाय न जेही ॥
यह मलीन मन चोर न पावे । जासे खोज खतम होइ जावे ॥
अपनी आसा बुझे न भाई । सतगुरु को दे दोष लगाई ॥
मारग यह संतन का झीना । बिन सतसंग नहिँ आय यक़ीना ॥
मेहर धरन को बरतन चावे । सो तो नेक समझ नहिँ आवे ॥
बिरह होय तो भर्म उड़ावे । जग की रीति नेक नहिँ भावे ॥
बिरह उदास आस के आगे । मन से भर्म रोग जब भागे ॥

॥ दोहा ॥

की तो यौँ करनी करे, की सतगुरु बिस्वास ।
बास बसे सूरति चरन, तन मन होय निरास ॥

॥ चौपाई ॥

जो अपना मन मूल न माने । तो सतगुरु के चरन पिछाने ॥
मन बस नाहिँ चरन नहिँ जाने । यौँ सब जग यह भाड़ भुँजाने ॥
सतगुरु साखि सबै मिलि गावे । अपने हिरदे साँचि जो आवे ॥
जब बिस्वास बसे मन माहीँ । कर्म करज से लेत छुरझाई ॥
यह वह दोनोँ मेँ इक नाहीँ । वे बिस्वास आस के माहीँ ॥
जब हिरदे बोले हे स्वामी । दो मेँ एक परख ले ज्ञानी ॥

---

(१) जमीन की पैमाइश का एक पैमाना लकड़ी का जो छाती तक ऊँचा होता है ।

एक तरफ बिन फरक न होवे । फिर समझे सिर धुनि के रोवे ।।
आज काज करि होय अकाजा । फिर नहिँ यहि नरतन को साजा ।।

॥ दोहा ॥

चेतन तन में ज्ञान है, जड़ तन में अज्ञान ।
फिर भरमत भव भव फिरे, नहिँ कछु लगत ठिकान ।।

॥ चौपाई ॥

यह सब बात परखिया बानी । स्वामी के कहने से जानी ।।

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे सतगुरु केहि काजेँ । जीव उबारन जक्क बिराजेँ ।।
हंस होय जो करे पिछाना । उन सतगुरु की महिमा जाना ।।
आदि अनादि संत गुहरावेँ । सतगुरु बिना पार नहिँ पावे ।।
सास्त्र कहे और बेद पुराना । महिमा सतगुरु बरनि बखाना ।।
और महातम सब गुहरावेँ । सतगुरु साखि समझि सब गावें ।।
कोटिन जिव यह करे उपाई । सतगुरु बिना राह नहिँ पाई ।।
जुग जुग भरमत भये अनेका । जिन भाखा जिन सतगुरु ठेका ।।

॥ दोहा ॥

सतसंग अरु संतन कही, स्रुति पुरान गुहराय ।
सास्तर सब महातम[1] कहे, सतगुरु का रे उपाय ।।

(हिरदे बाच)

॥ चौपाई ॥

स्वामी कही समझ मैं कीन्ही । बानी बचन बूझि के लीन्ही ।।
जो जो वाक काढ़ि मुख भाखा । कहने में कछु फेर न राखा ।।
कोइ मूरख जिव मन में लावे । हिये सतगुरु का बचन बसावे ।।
अब वह बहुरि कहो समझाई । गुरु चेला बरतंत सुनाई ।।
रमत गये पर फिर भी आये । सिद्ध कुटी पर बहुरि सिधाये ।।
तुलसी हिरदे को रे सुनाये । बीत मास नौ पीछे आये ।।
कुटि के माहिँ जाइ के बैठे । बहुत प्रेम करि सिध से भेँटे ।।

---

(१) महिमा ?

सिध सब पूछि कहो कुसलाता[1] । करी बहु रमत[2] लगा कछु हाथा ॥
तीरथ करे ज्ञान सुनि आये । नहिं कछु और हाथ में लाये ॥
ज्ञान सुने अज्ञान न भागा । तीरथ करत फिरे बहु जागा ॥
चेतन तो तुम चीन्हे नाहीं । जल में न्हात फिरे बहु ठाँई ॥
चेतन तन में वास कराई । जाका खोज कीन्ह नहिं भाई ॥

॥ दोहा ॥

चेतन ब्रह्म वैराट यह, आतम तन के माहँ ।
तुम बाहर खोजत फिरे, जासे लगा न थाह ॥

॥ चौपाई ॥

रमता में से गुरु कहे बोली । तुम कछु भेद बतावो खोली ॥
सिद्धी को हम मानें नाहीं । राह मुक्ति की कहो समझाई ॥
भटकत फिरे भये हैराना । मुक्ति राह की जुक्ति न जाना ॥
पैर थके कछु मरम न पाया । भरमत फिरे दुखित भइ काया ॥
अब कछु जीव मुक्ति दरसावो । अब हमरी भव भटक मिटावो ॥
जब सिध कहे मुक्ति कहा कीजे । जीवत जीव मुक्ति लखि लीजे ॥
मुक्ति जुक्ति से भेद निनारा[3] । सो पावे संतन का प्यारा ॥
सतसँग करे तोड़ के आपा । धनुवाँ खैंचि चढ़ावे चाँपा[4] ॥

॥ दोहा ॥

सुरति चाँप धनुवाँ चढ़े, कढ़े गगन के पार ।
ऐनक आँखि लगाय के, देखे विमल वहार ॥

॥ चौपई ॥

सो ऐनक मुरसिद से पावे । मेहर करें जब दया बसावे ॥
जब ऐनक में पैने[5] भाई । मुक्ति जुक्ति की कौन बड़ाई ॥
देखे सैल अपूरब आँखी । मुक्ती ज्ञान रहे सब थाकी ॥

---

(१) ख़ैरियत । (२) जात्रा । (३) न्यारा । (४) ताँत जिसे खींच कर धनुप चढ़ावे हैं । (५) घुस जाय ।

(रमते बाच)

सो ऐनक किरपा करि दीजे । जिव मारग को कारज कीजे ॥
हमहूँ बहुत फिरे चहुँ ओरा । जीव जतन कछु किया न ठौरा ॥
मुख तुम्हरे ऐनक सुनि पाई । मेहर दया सिध करो गुसाईं ॥

(सिद्ध बाच)

अब आये बिसराम करैये । फजिर हुए पर फिर कछु कहिये ॥

(रमते बाच)

बेनी कुटी करन असनाना । अज्ञा करो हुकुम परमाना ॥

(सिद्ध बाच)

॥ दोहा ॥

सिद्धी की बेनी हती, सो तो गई बिलाय ।
डोल पड़ा है कूप पर, यहि जल लेवो न्हाय ॥

॥ चौपाई ॥

सिद्ध कहे कछु भोजन कीजे । फल फलहार खान को लीजे ॥

(रमते बाच)

जब भोजन पकवान कराये । अब कहो कहा कहा ले आये ॥

(सिद्ध बाच)

वे सिद्धी से थे पकवाना । सो गया छूटि सिद्धि सरधाना[1] ॥
अब ऐनक का ऐन बिचारा । या में देखि जीव निरवारा ॥
रमते ने भोजन जब कीन्हा । रहे रात बिसराम जो लीन्हा ॥
फजिर हुए पर पूछि पचारी । ऐनक की कहो बात बिचारी ॥
कदमअली इतने में आये । हमसे मिले बहुत सुख पाये ॥
कदमअली से अरजी कीन्हा । रमते पर करो मेहर यकीना ॥

॥ दोहा ॥

कदमअली बोले सुनो, बिन सोहबत नहिँ हाथ ॥
सोहबत करि पावे सोई, नहीँ सहज की बात ॥

---

(१) भाव ।

॥ चौपाई ॥

जब रमते पैरों सिर दीन्हा । मुरसिद सरन तुम्हारो लीन्हा ॥
होइ दयाल ऐनक दिखलावो । मेरे तन की तपन बुझावो ॥
कदमअली के दिल में आई । दे ऐनक उस को दिखलाई ॥
दो ऐनक दोनों को दीन्ही । देखो परखि पड़े जो चीन्ही ॥
ऐनक दोनों दीद लगाई । देखो सो कहो भाखि सुनाई ॥
गुरु को तौ संसार दिखाना । खिलकत दीदे दीद जहाना ॥
जितने मनुष देह तन धारे । सो दीखे पसुवत[1] सब सारे ॥
मनुष देह तो दोइ दिखाई । की ये सिध अरु दूजे साईं ॥

॥ दोहा ॥

गुरु ऐनक को देखि कर, भाखि कहे ये बैन ।
नहिं जग में नर देह दिखे, कूकर काग बेचैन ॥

॥ चौपाई ॥

जो रमते गुरु को दिखलाना । समझ पड़ा सोइ भाखि बखाना ॥
नर चोला खिलकत में नाहीं । खोज किया ऐनक के माहीं ॥
यह तो गुरू ने भाख बयाना । अब चेले का सुनो बखाना ॥
सब दिस पहाड़ जले चहुँ फेरा । अगिन प्रचंड चक्र का घेरा ॥
उसके मधि में जाइ घिराना । नहिं ह्वाँ बाट पड़े पहिचाना ॥
मैं घबराय फिर्यों चहुँ ओरा । नहिं भागन की बाट बहोरा ॥
देखा कूप एक वहि ठाईं । उस में कूदन को मन चाही ॥
उस के मधि में बैठ भुजंगा[2] । खावन चहे फाड़ि मुख अंगा ॥

॥ दोहा ॥

जो भुजंग रहे कूप में, खाने को मुख फाड़ ।
कहा विचार मन में करों, ले धरि चामे डाढ़ ॥

---

(१) जानवर सरीखे । (२) साँप ।

॥ चौपाई ॥

यह निहार चेला कहे बानी । और कहूँ जो परख पिछानी ॥
एक उपाय कीन्ह मन माहीँ । कूप किनारे दूब रहाई ॥
दूबै पकड़ि कूप लटकाना । बृच्छ किनारे रहे निदाना ॥
वहिँ पर मधुमाखी का छाता । उड़ि के लागि बदन को खाता ॥
सहद बूँद टपके मुख माहीँ । मीठा लगे और दुखदाई[1] ॥
चूहे जुगल कूप के माहीँ । हर दम दूब कतरि के जाई ॥
जब मैँ गिरा कूप के माहीँ । सो बरतंत कहा समझाई ॥
यह ऐनक मेँ दिखा तमासा । सो कहूँ भाखि आप के पासा ॥

॥ दोहा ॥

साईँ सुनि मुसकाय के, कही बहुरि इक बात ।
दोनोँ गुरु चेले सुनो, समझ लिया बिख्यात ॥

॥ चौपाई ॥

गुरु चेले बोले हे साईँ । यह कछु समझ माहिँ नहिँ आई ॥
यह कहो कौन चरित्तर देखा । याका कहिये बरनि बिबेका ॥

(कदमछली बाच)

ऐनक दोउ हमको दे दीजे । फिर हम कहैँ बरनि सुनि लीजे ॥
ऐनक दोउ दोनोँ ने दीन्हा । कहिये साईँ भेद यकीना ॥
जब साईँ बोले सुनि लीजे । हम कहैँ कहन माहिँ चित दीजे ॥
नहिँ ऐनक सतगुरु पहिचाना । सो नर मरे पसू भये खाना ॥
जो नर मरि नर देहि न पावे । चौरासी पसु कीट समावे ॥
दो नर दिखे साईँ सिध साँगी[2] । सो सतगुरु मुरसिद अनुरागी ॥

॥ दोहा ॥

मुरसिद सतगुरु चरन का, आठ पहर अनुराग ।
सो भागे भवचक्र से, उनको लगा न दाग ॥

---

(१) सुखदाई ? (२) संग या साथ में ?

॥ चौपाई ॥

यह मुद्दा गुरु को दरसाया । कदमअली कहि कर समझाया ॥
अब चेले को समझ सुनाई । तुमहूँ समझि लेव यहि भाई ॥
यह संसार पहाड़ चौफेरा । जरे अगिन जिव चहुँ दिसि घेरा ॥
गृह भवकूप पड़े घबराई । काल सरप मुख खाने चाही ॥
दूबि उमिर भुगते दिन राती । निस दिन चूहे कतरि यहि भाँती ॥
माखी[1] महू[2] फोड़ करि खावे । सो सब जानो कुटँब कहावे ॥
सहद बूँद बिष रस की मीठी । इतना सुखी यह और न डीठी ॥
यहि चेला समझो मन माहीँ । भव रस सुख दुख भुगतै भाई ॥

॥ दोहा ॥

चेले का मन भ्रमित है, सुनि फकीर की बात ॥
कछु जादू दिखलाय के, फेरि करै उतपात ॥

॥ चौपाई ॥

चेला आय गुरू से कहिया । जादू खेल फकीर दिखइया ॥
यहि गुरु के मन माहिँ समानी । दोनोँ की अक्किल भरमानी ॥
मसलत[3] करि रातै उठि भागे । यह फकीर के मुँह नहिँ लागे ॥
बड़े फजिर भिंसारे भाई । गये रमते कहुँ खोज न पाई ॥
तुलसी कहे साँचि नहिँ आई । यह हिरदे मन भरमे भाई ॥
कोइ दिन संग साँचि नहिँ आवे । कहो दो दिन में कहा समावे ॥
भरम रहे जुग जुग के माहीँ । तिनको साँचि कौन विधि आई ॥
कर्मट[4] करि सब जन्म बिताया । इष्ट करा जड़ सँग लौ लाया ॥

॥ दोहा ॥

सो सुधरेँ नहिँ जन्म लौँ, धारेँ जन्म अनेक ।
भेष जतन करि के मरे, टारी टरी न टेक ॥

---

(१) मक्खी । (२) शहद । (३) सलाह । (४) कर्म ।

॥ चौपाई ॥

इक हिरदे संदेह उठाई। भर्म भया मोरे मन माहीँ ॥
आगे जो संबाद सुनाये। वा में बेद पुरान उठाये ॥
ह्याँ तुम थापे बेद पुराना। साखि वही की भाखि बखाना ॥

(तुलसीदास बाच)

हे हिरदे तैँ समझ न लाई। या का भेद कहूँ अरथाई ॥
बंधन बेद जक्त को कीन्हा। भव भुगते जिव जन्म अधीना ॥
जीव मुक्ति नहिँ राह बताये। तीरथ बरत इष्ट उरझाये ॥
यहि कारन से खंडन कीन्हा। हिरदे हिरदे[1] बूझ यकीना ॥
बेद पुरान साख ह्याँ दीन्ही। याका भेद लखो चित चीन्ही ॥

॥ सोरठा ॥

संत साखि सतगुरु कहेँ, बेद कहे यहि भाख।
साखि देइ सतगुरु सही, यहि मुकाम पर थाप ॥

॥ चौपाई ॥

सतगुरु की जहँ साखि सुनाई। जहँ बेदन को थापे भाई ॥
जग बंधन भवसागर डारा। जहँ बेदन को काढ़ि निकारा ॥
यह बैठी हिरदे मन माहीँ। नहिँ कहुँ और रीति समझाई ॥
हिरदे कहे समझि मन माहीँ। सो तो समझि समझ में आई ॥
एक अचंभा अचरज माहीँ। सो पूछोँ कहो भाखि सुनाई ॥
तीनोँ ऐनक आँखि चढ़ाई। सिध गुरु चेले तीनोँ लगाई ॥
तीन भाव तीनोँ ने देखा। यह अचरज मन भया बिबेका ॥
ऐनक में सिध बगिया देखी। गुरु ऐनक नर पसू बिबेकी ॥
चेले को भवकूप दिखाना। तीनोँ कहेँ तीन सरधाना[2] ॥

॥ दोहा ॥

यह मोको कारन कहो, तीनोँ तीन बखान ॥
ऐनक में इक रस चही, यह कहो भेद बयान ॥

---

(१) मन में (२) भाव।

(तुलसीदास वाच)

॥ चौपाई ॥

सुनु हिरदे यह बरनि सुनाऊँ । यह निर्वार तोहि समझाऊँ ॥
ऐनक देने की विधि भाई । यामें करो समझ चित लाइ ॥
जो सिध ऐनक आँखि लगाई । बाट चले छूटन नहिँ पाई ॥
हर दम ऐनक छुटी न राही । यहि बिधि बाग दिखाना भाई ॥
गुरू ज्ञान के मान समाने । उनको नर पसुवत दरसाने ॥
रमत रहे अज्ञानी चेला । यह भवकूप लखा उन खेला ॥
यौँ तीनौँ के तीन बिचारा । यामें समझि लेव निर्वारा ॥

(हिरदे वाच)

को गुरु ज्ञान अज्ञानी चेला । कहो स्वामी यह समझ दुहेला[1] ॥

(तुलसीदास वाच)

॥ दोहा ॥

गुरू ज्ञान को समझि ले, चेला जग अज्ञान ।
यह दोनौँ यहिबिधि कहेँ, लीजे परखि पिछान ॥

॥ चौपाई ॥

यहि बिधि कहे गुरू अरु चेला । नहिँ परखे वह आदि अकेला ॥

(हिरदे वाच)

स्वामी कही सकल निर्वारी । संसय मोरी दूर विडारी ॥
आदि अंत सुनि के भ्रम भागा । बरनि कही रहि एक न जागा ॥
मैं स्वामी चरनन बलिहारी । निरनय छाने भरम निकारी ॥
बड़े भाग अंकुर के मोरा । चरन चीन्ह प्रभु सरन वहोरा ॥
मैं अति कुटिल अधम अन्याई । तुम्हरे दरस परस को पाई ॥
संत दरस अघ पाप नसावें । अस अस कहेँ सभी मिलि गावें ॥
आदि अंत भाखा वरतंता । पावे कहा विना को संता ॥

॥ सोरठा ॥

आदि अंत की बात, पूछी सो वरनन करी ।
भिन भिन कह्यो लखाव, स्वामी को कहे भेद यह ॥

---

(१) कठिन ।

॥ छंद ॥

हिरदे कहे परनाम करि, इतनी कहन तुम ने कही।
मतिहीन मैं आधीन होय, कहुँ कोउ मरक[१] काढ़ी नहीं।
कोइ परखि चीन्ह प्रबीन जन, जिन पकड़ करि गाढ़ी गही।
जग भेष टेक टेकाव जड़, मन मूढ़ नहिँ कीन्ही सही।
यह अगम ज्ञान बखान बरनन, कहूँ नहिँ ऐसी भई
तुमने कही सब भाँति भिन भिन, कोइ नहीं बाकी रही
हिये मैं हरखि कोइ परखि पुर, धुर धाम धरि मन में लई
सतगुरु कृपा निज नाम नौका, निधि[२] निरखि मानो मही
यह संत की बेअंत बोली, बिमल होइ बूझा चही
जग कर्मकांड उफान[३] उर धरि, धरम बस बाँधे दई[४]
सतसंग के रँग रमक रस अस, बिमल मग बाचे स
हिरदे कहे अनरूप आतम, अंग के अंदर मही[५]

(तुलसीदास बाच)

॥ दोहा ॥

तुलसी हिये हुलसी लखो, हिरदे हरख बयान।
जानि जन्म नर तन यही, कही सब संत बखान॥
नर तन में निरनै लखे, रखे सुरति समझाय।
चाह रखे नहिँ अंत की, सतगुरु सब्द समाय॥
नर तन दुरलभ ना मिले, खिले कँवल रस माहिँ।
खाय अमर फल अगम के, जो सतगुरु सरनाय॥
रतन जतन सागर मही[१], कही जो निरनै ज्ञान।
ब्यान बरन बिख्यान सब, बूझे बचन प्रमान॥
हिरदे से तुलसी कहे, रहे अगम के पार।
जो निरधार संतन कही, सो सतगुरु पद सार॥

(१) मड़क की बात, नुकता। (२) खजाना। (३) उबाल यानी मैल। (४) कर्म। (५

॥ इति ॥

आवश्यक सूचना

बानी पुस्तकमाला के उन महात्माओं की लिस्ट जिनकी जीवनी तथा बानियाँ छप चुकी हैं—

साहिब का अनुराग सागर
साहिब का बीजक
साहिब का साखी-संग्रह
साहिब की शब्दावली—चार भागों में
साहिब की ज्ञान-गुदड़ी, रेख़ते, झूलने
साहिब की अखरावती
धरमदास की शब्दावली
साहिब (हाथरस वाले) भाग १ 'शब्द'
शब्दावली और पद्मसागर भाग २
साहिब का रत्नसागर
साहिब का घट रामायण—२ भागों में
दयाल भाग १ 'साखी',—भाग २ "पद"
दास का सुन्दर विलास
साहिब भाग १ कुंडलियाँ । भाग २
, झूलने, सवैया, अरिल, कवित्त।
भाग ३ भजन और साखियाँ
जीवन साहब—२ भागों में
दास जी की बानी
दास जी की बानी, दो भागों में

गरीबदास जी की बानी
रैदास जी की बानी
दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर
दरिया साहिब के चुने हुए पद और साखी
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी
भीखा साहिब की शब्दावली
गुलाल साहिब की बानी
बाबा मलूकदास जी की बानी
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी
यारी साहिब की रत्नावली
बुल्ला साहिब का शब्दसार
केशवदास जी की अमीघूँट
धरनीदास जी की बानी
मीराबाई की शब्दावली
सहजोबाई का सहज-प्रकाश
दयाबाई की बानी
संतबानी संग्रह, भाग १ 'साखी',—भाग २ 'शब्द'
अहिल्या बाई (अंग्रेजी पद में)

अन्य महात्मा जिनकी जीवनी तथा बानियाँ नहीं मिल सकीं

१ पीपा जी। २ नामदेव जी। ३ सदना जी। ४ सूरदास जी। ५ स्वामी दास जी। ६ नरसी मेहता। ७ नाभा जी। ८ काष्ठजिह्वा स्वामी।

प्रेमी और रसिक जनों से प्रार्थना है कि यदि ऊपर लिखे महात्माओं की असली नी तथा उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तकमाला के किसी में नहीं छपे हैं मिल सकें तो कृपा पूर्वक नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें। इस के लिए उनको हार्दिक धन्यवाद दिया जायगा। यदि पाठक महोदय ऊपर लिखे त्माओं का असली चित्र प्राप्त कर सकें, तो उनसे प्रार्थना है कि नीचे लिखे पते से व्यवहार करें। चित्र प्राप्ति के लिए उसका उचित मूल्य या ख़र्च दिया जायगा।